





[illegible]

5433

Part 2 - 178 - 332

Missing # 247

Double # 245, 332.

Total No of Folios 156

Complete

इतिश्री मनुस्मृत्य भाषा टीकायां कुल्लूक भट्टमता
नुसारिण्यां श्रीबाहुदेवीदयाल सिंह कारितायां
श्रीमत्यंकनी संस्कृत पाठशालीय धर्मशास्त्रि गु
लजार शर्म्म पंडितकृतायां चतुर्थोध्यायः ४ ॥
स्नातकके धर्मोके सुनके ऋषिलोगोंने अग्निसेउ
त्पन्न यह कहा महात्मा भृगुजीसे इस बातको प्र

इतिश्री मानवे धर्मशास्त्रे भृ
गुप्रोक्तायां संहितायां चतु
र्थोध्यायः ४ ॥ श्रुत्वैतानृ
षयो धर्मान् स्नातकस्य
यथोदितान् इद मूचु र्महा
त्मान मनल प्रभवं भृगुम्
१ एवं यथोक्तं विप्राणां स्व
धर्म मनुतिष्ठतां कथं मृ
त्युः प्रभवति वेदशास्त्र विदां
प्रभो २ ॥



श्न इसस्थलमें यह संदेहहै कि प्रथमाध्यायमें मनु
जीके पुत्र भृगुको कहि आएहै और यहां अग्निसे
उत्पन्न यह कहा सो कैसे बने तो इसका निर्णय
ऐसीहै कि कोई कल्पमें अग्निसेभी उत्पन्नहै इस
बातके जानने वाले ऋषियोंने कहा १ धर्मशास्त्र
में कथित धर्मोंको करने वाले ब्राह्मणोंके मारनेमें

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
१७७

177

किस प्रकारसे समर्थ मृत्यु होतीहै ३ धर्मात्मा भृगुजीने इन महर्षियोंसे कहा जिस दोष करके ब्राह्मणोंको मृत्यु मारतीहै सो सुनिए ३ वेदके अनभ्याससे आलसकरके आलसकरके आचार को छोड़नेसे ब्राह्मणोंकी मृत्यु मारतीहै ४ ॥

स तानुवाच धर्मात्मा महर्षीन्मानवो भृगुः श्रूयतां येन दोषेण मृत्युर्विप्रान्जिघांसति ३ अनभ्यासेन वेदानामाचारस्य च वर्जनात् आलस्यादन्नदोषाच्च मृत्युर्विप्रान्जिघांसति ४ लशुनं गृञ्जनं चैव पलाण्डुं कवकानि च अभक्ष्याणि द्विजातीनाममेध्यप्रभवानि च ५ ॥

लहसन गाजर पियाज छत्राक अर्थात् ऊकुरमुत्ता विष्ठा आदि अपवित्र वस्तुसे उत्पन्न नेउलीय आदि अर्थात् चवगाई आदि इन सबको ब्राह्मण भोजन नकरै ५ ॥

हलका माला लालवर्ण काटनेसे उत्पन्न लासा को
ई वर्णहो शेलु अर्थात् इन्दरि जो नव प्रसूत गौका
दुग्ध अग्नि संयोगसे कडाईके पासहै इन सबको य
त्न पूर्वक बराना अर्थात् इन्होंका भोजन न करना
१ देवता पितरोंको छोडकर अपने अर्थ तिलसहि
त भात जो बनाजो बनाहै पक्का दूधसे बनाहुआ

लोहितान् वृक्षनिर्यासान् व
श्चन प्रभवांस्तथा शेलुं गव्यं
च पेयूषं प्रयत्नेन विवर्जयेत्
त् १ वृथा कृसरसंयावं पा
यसापूपमेवच अनुपाकृत
मांसानि देवान्नानि हवींषि
च २ ॥

गुडसहित गोहूंका चूर्ण जोहै दूध चाउरसे जो बना
बनीहै मालपूआ मंत्रसे जिस पशुका स्पर्श नही
हुआ उसका मांस देवतोंके निमित्त अन्न बनाहै औ
र उन्होंका निवेदन किया गया होमके निमित्त हवि
बनाहै और होम नही भया ऐसा हवि इन सबको दे
वता पितरोंके निवेदन किए विना भोजन नही करै

ना १ बिआनेसे दश दिनके भीतर गौका दूध ऊंट
नीका दूध एक खुर वाले अर्थात् घोडी आदिका दू
ध भेडिका दूध गाभिनि गौका दूध बछडू जिसका
मरि गयाहै ऐसी गौका दूध ८ भैंसिको छोडके व
नमें रहने वाले जितने जीवहै तिनोंका दूध स्त्री

अनिर्दिशायाः गोः क्षीर मौष्ट्र
मेक शफं तथा आविकं सं
धिनी क्षीरं विवत्सायाश्च गोः
पयः ८ आरण्यानां च सर्वेषां
मृगाणां माहिषं विना स्त्री
क्षीरं चैव वर्ज्यानि सर्वशुक्ता
नि चैवहि ९ दधिभक्ष्यं च
शुक्तेषु सर्वं च दधिसंभवं
यानि चैवाभि षूयंते पुष्पमू
लफलैः शुभैः १० ॥

का दूध और शुक्त अर्थात् कालपाके दूसरी वस्तु
मिलाये विना जो आमिलहो इन सबको वर्जन क
रना ९ शुक्तमे दही और दहीसे बने जो वस्तु जल
से बनाहुआ जो पुष्प मूलफल इन सबका भोजन क
रना १०

कच्ची मांसको भोजन करनेवाले जो पक्षी गीध आ
दि गांवमें रहने वाले जो पक्षी कबूतर आदिशास्त्र
में जो कहेहैं भोजनके योग्य एक खुरवाले उन्होंको
छोडकर जो एक खुरवालाहै और टिट्टिभ अर्थात्
टिटिहीरी इनको भोजन नकरना ११ गवरा प्लव
अर्थात् जलमें पैरनेवाले हंस चकवा ग्रामवासी

क्रव्यादान् शकुनीन् सर्वान्
तथाग्राम निवासिनः अनि
र्दिष्टा श्चैकशफां ष्टिट्टिभं च
विवर्जयेत् ११ कलविंकं प्ल
वं हंसं चक्रांगं ग्राम कुक्कुट
म् सारसं रज्जुवालं च दात्यू
हे शुक सारिके ११ प्रतुदान्
जाल पादांश्च कोयष्टि नख
विष्किरान् निमज्जतश्च मत
स्यान् शौनं वल्लूर मेवच १३

मुरगा सारस रज्जुवाल अर्थात् पक्षि विशेष दात्यूह
अर्थात् जलकाक सुगा मैंना ११ चेंचुसे जो भक्षण
करतेहैं दावो चाट आदि अर्थात् वटफार जालाकर
पाद श्रपारी आदि अर्थात् आडीको यष्टि अर्थात् टि
टिहिरी नखसे विकिरण करके जो भक्षण करतेहैं
मद्गु आदि मारन स्यानकीजो मांस अर्थात् कसाईके

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
१७४

179

घरकी मांस खावी मांस १३ बगुला बकला अर्थात्
बक भेद बड़त कालाकौआ विड़रिच मछली भक्ष
ण करने वाले पक्षी ग्राम सूकर मछली सब इन स
बको भोजन न करना १४ जिसकी मांसको जो भो
जन करताहै सो उसकी मांसका भोजन करने वा

बकं चैव बलाकांच काको
लं खंजरीटकम् मत्स्यादान्
विड्वराहांश्च मत्स्यानेवच स
र्वशः १४ यो यस्य मांसमश्ना
ति स तन्मांसाद उच्यते मत्स्या
दः सर्वमांसादस्तस्मान्मत्स्या
न्विवर्जयेत् १५ पाठीनरोहि॰
तावाद्यौ नियुक्तौ हव्यकव्य
योः राजीवान् सिंहतुंडांश्च
सशल्कांश्चैव सर्वशः १६ ॥

ला कहाताहै मछली सबकी मांसको भोजनकरती
है उसको जिसने भोजन किया सो सबकी मांसको
भोजन कर चुका इसलिये मछलीको भोजन न कर
ना १५ राजीव तेडु सिंह सशल्क पहिना रोहू इन सब
को देवता पितरोंको निवेदन करके भोजन करना १६

जो बहुधा अकेलही चरतेहै सर्प आदि और जो वि
ना जानेहै मृगपक्षी और पांच नख वाले वानर ।
आदि इन सभको भक्षण न करना १२ श्वाविध गो
धा शल्यक खड्ग कूर्म शशा अर्थात् साली गोह सा
ही गेंडा कछुआ खरहा ये सब पंच नखवालीमें

न भक्षयेदेकचरा नज्ञातांश्च
मृगद्विजान् भक्षेष्वपि समु-
द्दिष्टान् सर्वान्पंच नखांस्तथा
१२ श्वाविधं शल्यकं गोधां ख
ड्गं कूर्मशशांस्तथा भक्ष्यान्पं
च नखेष्वाहु रनुष्ट्रांश्चैकतो ।
दतः १३ छत्राकं विड्वराहं च
लशुनं ग्राम कुक्कुटम् पलां
डुं गृंजनं चैव मत्या जग्ध्वाप-
तेद्द्विजः १४ ॥

भक्षणके योग्यहै ऊंटको छोडकर एक ओर दांतवा
ले भक्षणके योग्यहै निषिद्ध विना १३ छत्राक अर्था
त् कुकुरमुत्ता ग्रामसूकर लहसुन ग्रामका मुरगा
पियाज गाजर इन सभोंको जानिके भोजन करै तो

180

पतित होताहै १९ वेजाने इन छवोंको भोजन करै तो सांतपन नामका कृच्छ्र व्रतको करै अथवा यति चांद्रायण व्रतको करै वाकीमें अर्थात् हत्लके लासा आदिके भक्षणके एकदिन उपवास करै २० भोजन करनेके योग्य जो वस्तु नहीहै उसका वि॰

अमत्यैतानि षट् जग्ध्वा कृच्छ्रं सांतपनं चरेत् यतिचांद्रायणं वापि शेषेषूपवसेदहः २० संवत्सरस्यैकमपि चरेत्कृच्छ्रं द्विजोत्तमः अज्ञातभुक्तशुद्ध्यर्थं ज्ञातस्य तु विशेषतः २१ यज्ञार्थं ब्राह्मणैर्वध्याः प्रशस्ता मृगपक्षिणः भृत्यानां चैव वृत्त्यर्थं अगस्त्यो ह्याचरत्पुरा २२ ॥

ना जाने भोजन करनेमें जो दोषहै उसदोषके नाश करनेके लिये हरवर्षमें एक कृच्छ्र व्रतको करै और जो जानिके भोजनकिहो गही उसके लिये तो विशेष करके कृच्छ्र व्रत करना २१ यज्ञके अर्थ और भृत्यों के भोजनार्थ प्रशस्त जो मृग और पक्षीहैं तिनको मारना अगस्त्य ऋषिने पूर्वकालमें ऐसा कियाहै ॥

पूर्वकालमें ऋषियोंने यज्ञके लिये भक्षणके लि
ये योग्य मृग पक्षियोंका वध कियाहै २३ जो क
छु वस्तु घृत तैलसे पकाहो और भोजन के योग्य
हो सो बासी भीहो तो उसको भोजन करना और

बभूवुर्हि पुरोडाशा भक्ष्या
णां मृग पक्षिणां पुराणेष्व
पि यज्ञेषु ब्रह्मक्षत्र सवेषु
च २३ यत्किंचित स्नेह संयु
क्तं भक्ष्यं भोज्यं च गर्हितम्
तत्पर्युषित मप्याद्यं हविः
शेषं च यद्भवेत् २४ चिरस्थि
त मपित्वाद्य मस्नेहाक्तं द्वि
जातिभिः यव गो धूमजं स
र्वं पयस श्चैव विक्रिया २५

हविका शेष बासी हो तो उसको भी भोजन करना
२४ यव गोंहूसे बनी जो वस्तुहै और घृत तैलसे
पकी नहीं है बासी है और दूधसे जो बनाहै बासी
है तो उसको भोजन करना २५ ॥

म॰
स्म॰ टी॰
भा॰
१८१

181

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्योंके जो भोजन करनेके यो॰
ग्य अयोग्य वस्तु है उसको कहा अब मांसके भक्ष
ण वर्जन विधिको कहैंगे २६ प्रोक्षण नाम संस्का
रमें संस्कृत जो मांस है और यज्ञमें होमका जो शेष
मांस है इन दोनों मांसको भोजन करना और ब्राह्म

एतदुक्तं द्विजातीनां भक्ष्या
भक्ष्यमशेषतः मांसस्यातः
प्रवक्ष्यामि विधिं भक्षण वर्ज
ने २६ प्रोक्षितं भक्षयेन्मांसं
ब्राह्मणानां च काम्यया य॰
थाविधि नियुक्तस्तु प्राणा॰
नामेव चात्यये २७ प्राणस्या
न्नमिदं सर्वं प्रजापतिरक॰
ल्पयत् स्थावरं जंगमं चैव
सर्वं प्राणस्य भोजनम् २८

णोंके मांस भोजनकी इच्छा जब हो तब यथा वि
धिसे मांसको भोजन करना प्राणनाशमेंभी मांस
को भोजन करना २७ स्थावर जंगम जितनी वस्तु
है सो सब प्राणका अन्न है इस बातको ब्रह्माने कल्प
ना की है २८

चरका अन्न अचर है दाढ वालोंका अन्न बिना दाढ वाले है हस्तवालोंका अन्न वे हस्तवाले है शूरोंका अन्न डेरक है २९ दिन दिनमें भोजन योग्य जीवः को भोजन करता भोजन करने वाला दोषको प्रा

चराणा मन्न मचरा दंष्ट्रिणा मप्यदंष्ट्रिणः अहस्ताश्च सहस्तानां शूराणां चैव भीरवः २९ नात्ता दुष्यत्यदन्नाद्यान् प्राणिनो हन्य हन्यपि धात्रैव सृष्टा ह्याद्याश्च प्राणिनो त्तार एव च ३० यज्ञाय जग्धि र्मांसस्येत्येष दैवो विधिः स्मृतः अतोन्यथा प्रवृत्ति स्तु राक्षसो विधि रुच्यते ३१

प्त नही होता क्यों कि भोजन करने योग्य जीवको और भोजन करने वाले जीवको ब्रह्माने उत्पन्न किया है ३० यज्ञके निमित्त मांसको भक्षण करना यह विधि है इसको छोडकर मांस भक्षण करना य

म॰
स्टी॰
भा॰
१८२

182

ह राक्षस विधिहै ३१ मोल लिही अथवा दूसरे की
आनी हुई मांसको देवता पितरोंको निवेदन कर
के जो शेष मांसहै उसको भोजन करनेसे पापन
हीं होता ३२ बिना आपत्कालमें विधिका जाननेवा
ला जो ब्राह्मणहै और विधिसे रहित मांसका भ

क्रीत्वास्वयं वाप्युत्पाद्य परोप
कृतमेव वा देवान्पितॄंश्चार्च
यित्वा खादन्मांसं न दुष्यति
३२ नाद्यादविधिना मांसं
विधिज्ञो नापदि द्विजः ज-
ग्ध्वा ह्यविधिना मांसं प्रेत्य तै
रद्यतेऽवशः ३३ न तादृशं
भवत्येनो मृगहन्तुर्धनार्थि
नः यादृशं भवति प्रेत्य वृ
था मांसानि खादतः ३४ ।

क्षण किया तो उसकी मांसको परलोकमें वह भक्ष
ण करताहै कि जिसकी मांस इस लोकमें भक्षतऊ
तेहै ३३ धनके अर्थ मृगके मारनेवालेको तैसा पाप
नहीं होता जैसा पाप परलोकमें वृथा मांस भक्षण
करनेवालेको होताहै ३४

शास्त्रोक्त विधिसे सिद्ध जो मांसहै उसको जो म-
नुष्य भक्षण नही करता सो परलोकमें पंकेस
जन्म तक पशुयोनिमें प्राप्त होताहै ३५ संस्कार
रहित मांसको ब्राह्मण कधीन भोजन करै और

नियुक्तस्तु यथान्यायं योमां
से नात्ति मानवः सप्रेत्य पशु
तां याति संभवानेकविंश-
तिं असंस्कृतान् पशून्मन्त्रैः
नाद्याद्विप्रः कदाचन मन्त्रै
स्तु संस्कृतानद्याच्छाश्वत
विधिमास्थितः ३६ कुर्याद् घृ
त पशुं संगे कुर्यात् पिष्ट पशु
न्तथा नत्वेववत्तु वृथा हंतुं प
शुमिच्छेत् कदाचन ३७ ॥

नित्य विधिमें स्थित होकर मंत्रसे संस्कृत मांसको
भक्षण करै ३६ अष्टाका संगे जब पशुके भक्षणका
अनुराग होवे तो घृतका अथवा पिष्टका बनाकर
भक्षण करै परंतु पशु मारनेकी इच्छा न करै ३७ ॥

म॰
स्स॰टी॰
भा॰
१८२

पशुको वृथा जो मारताहै सो परलोकमे कई जन्म
तक जितने रोमहैं पशुके जितने वेर माराजाताहै
॥५ ब्रह्माने अपने आप यज्ञके अर्थ पशुको उत्पन्न
किया इसलिये यज्ञमें जो वधहै सोअवधनही कहा

183

यावंति पशुरोमाणि तावत्कृ
त्वोह मारणं वृथा पशुघ्न प्रा
प्नोति प्रेत्य जन्मनि जन्मनि
॥५ यज्ञार्थं पशवस्सृष्टाः स्व
यमेव स्वयंभुवा यज्ञस्य भूत्यै
सर्वस्य तस्मा यज्ञे वधोवधः
॥६ ओषध्यः पशवो वृक्षा स्ति
र्यंचः पक्षिण स्तथा यज्ञार्था
न्निधनं प्राप्ताः प्राप्नुवन्त्युत्सृ
तीः पुनः ४॰ ॥

ताहै ॥६ अन्न पशु वृक्ष पक्षी कछुआ आदि ये॰
सब यज्ञके लिये मारे जानेसे उत्तम जातिको पा
ताहै ४॰ ॥

मधुपर्क यज्ञ देव पितृकर्म इतने होमे पशुको
मारना और कर्ममें न मारना यह बात मनुजीने
कहाहै ४१ इन कर्मोंमें पशुके करत संते वेदके
तत्व अर्थको जाननेवाला द्विज अपनेको और

मधुपर्के च यज्ञेच पितृदैव
तकर्माणि अत्रैव पशवो हिं
स्या नान्यत्र मनु रब्रवीत् ४१
एषर्थेषु पशून् हिंसन् वेद
तत्वार्थ विद्द्विजः आत्मानं
च पशुं चैव गमयत्युत्तमां
गतिम् ४२ गृहे गुरा वरण्ये
वा निवसन्नात्मवान्द्विजः ना
वेद विहितां हिंसा मापद्य
पि समाचरेत् ४३ ॥

पशुको उत्तम गति प्राप्त करताहै ४२ गृहमें गुरु
के स्थानमें अथवा वनमें वास करत संते आत्म
ए वेदसे अविहित हिंसाको आपतकालमेंभी न

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
१८४

करै धर वेदसे कथित जो निश्चित हिंसाहै इस
चराचरमैं उसको हिंसा न जानना क्यौ कि वेद॰
हीसे धर्म निकलाहै ४४ जो मारनेके योग्य जी
व नहीहै और उसको मारताहै अपने सुखके॰

या वेद विहिता हिंसा नियं॰
तास्मि श्चराचरे अहिंसा मेव
ता विद्या द्वेदा द्धर्मोहि निर्व
भौ ४४ यो हिंसकानि भूता
नि हिन स्त्यात्म सुखेच्छया
सजीवं च मृतं चैव न क्वचि
त्सुख मेधते ४५ यो बंधन
वधक्लेशा न्प्राणिनान्न चि॰
कीर्षति स सर्वस्य हित प्रेप्सु
स्सुख मत्यंत मश्नुते ४६ ॥

लिये सो जीवत मराहै कहीं सुख नहीं पाता ४५
जो सब जीवोंका बंधन वध क्लेशोंको करनेकी इच्छा
नहीं करता सो सभोंका हितकारीहै अतिसुखको पाता
है ॥

जो मनुष्य किसीको नहीं मारता सो जिसबातका
ध्यान करताहै और जो करनेकी इच्छा करताहै
सो सबको यत्न विनाही पाताहै ४७ प्राणियोंकी
हिंसा विना मांस उत्पन्न नहीहोती और प्राणियों

यद्ध्यायति यत्कुरुते रतिं ब
ध्नाति यत्र च तदवाप्नोति ।
यत्नेन यो हिनस्ति नकिंच
न ४७ नकृत्वा प्राणिनां हिं
सां मांस मुत्पद्यते क्वचित्
नच प्राणिवधः स्वर्ग्यस्त
स्मान्मांसं विवर्जयेत् ४८
समुत्पत्तिंच मांसस्य वध ।
बंधौ च देहिनां प्रसमीक्ष्य
निवर्तेत सर्व मांसस्य भक्ष
णात् ४९ ॥

का वध तो स्वर्गके हित नहीं है इसलिये मांसको
वर्जन करना ४८ मांसकी उत्पत्ति और प्राणियों
का वध बंधन इन सबको देखकर सर्व मांसके
भक्षणसे निवृत्तहोवे ४९ विधिको छोडकर पि

म॰
स्म॰टी॰
भा॰
१८५

185

शाचकी नाई जो मांसको भक्षण नही करता ।
सो लोकमें सबका प्रिय होताहै और व्याधिसे पी
डित नही होता ४९ अनुमंता अर्थात् जिसको स
मति विना हनन न होसके विशसिता अर्थात्
शस्त्रसे मांसको काटने वाला और मारने वाला

न भक्षयति यो मांसं विधिं
हित्वा पिशाचवत् सलोके
प्रियतां याति व्याधिभिश्च
न पीड्यते ४९ अनुमंता वि॰
शसिता निहंता क्रयविक्र
यी संस्कर्ता चोपहर्ता च ।
खादकश्चेति घातकाः ५१ ।
स्वमांसं परमांसेन यो वर्द्ध॰
यितुमिच्छति अनभ्यर्च्य पि
तॄन्देवान् ततोन्यो नास्त्यपु॰
ण्यकृत् ५२ ॥

मांसको वेचने वाला मांसको लेनेवाला मांसका
बनानेवाला लेआनेवाला भोजन करने वाला ये
आठों मारनेवाले कहातेहैं ५१ परायेकी मांससे अ
पनी मांसको बढानेकी इच्छा जो पुरुष करता॰
है उससे अधिक हत्यारा कोई पापी नहीहै ५२ ॥

सोवर्ष तक वर्ष वर्षमे अश्वमेध यज्ञको जो करता
है और जो मांसको भक्षण नही करताहै दोनोंके
पुण्यका फल समहै पर मांसके त्यागकरनेमे जो
फल होताहै सोफल पवित्र जो मुनिका अन्नहै

वर्षे वर्षेश्वमेधेन यो यजेत
शतं समाः मांसानिच नखा
देद्य स्तयोः पुण्यफलं समं
५४ फलमूलाशनै मेध्यै मु
न्यन्नानां च भोजनैः न तत्फ
ल मवाप्नोति यन्मांस परि
वर्जनात् ५५ मांस भक्षयि
ता मुत्र यस्यमांस मिहाद्म्य
हं एतन्मांसस्य मांसत्व प्रव
देति मनीषिणः ५६ ॥

तीनी आदि और मूल फल इन्होंकी भक्षणसे नही
होता ५४ जिसकी मांसको मे इसलोकमे भक्षण
करताहूं वह मुझको परलोकमे भक्षण करेगा मो
सशब्दका अर्थ यहीहै पंडित लोक कहतेहै ५५ ॥

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
१८६

186

मांस और मदिरा इन दोनोंके भक्षणमें दोषनही
है क्यों कि यह तो जीवोंकी प्रवृत्तिहीहै अर्थात्
स्वभावहीहै और मैथुनमैंभी दोष नहीहै परंतु इ॰
न्होंसे निवृत्तिहोना तो महाफलहै अब इसका ता
त्पर्यार्थ वर्णन करतेहैं किमांस भक्षण मैथुन
मदिरापान इन तीनोंकी जो विधि वाक्यहै सो
प्रवृत्ति करने वाली नहीहै क्यों कि प्रवृत्तितो

न मांस भक्षणे दोषो न मद्ये
नच मैथुने प्रवृत्ति रेषा भूता
नां निवृत्तिस्तु महाफला ॥
५६ प्रेतशुद्धिं प्रवक्ष्यामि द्रव्य
शुद्धिं तथैवच चतुर्णाम पि
वर्णानां यथावदनुपूर्व
शः ५७ ॥

इच्छासे होतीहै तब यह सब वाक्य व्यर्थ होके
यज्ञमें मांस भक्षण विवाह में मैथुन सौत्रामणी
नामके यज्ञमें मदिरापान इन सभोंके करनेसे दो
षका अभाव जनातीहै और उन सबवाक्योंका ता
त्पर्य इन तीनोंकी निवृत्तहीमेंहै ५६ चारो वर्णों
का क्रमसे जोकाम्यो प्रेत शुद्धि और द्रव्य शुद्धि को
कहेंगे ५७ ॥
॥

होत उत्पन्न भए चूडाकरणभए जनेऊ भए सेते म-
रणमें और जन्ममें सपिंडी अर्थात् सात पुरुष तक
और समानोदक अर्थात् सात पुरुषके ऊपर ज-
न्म नाम ज्ञान तक अशुद्ध होते हैं ५८ ब्राह्मण
को मरण निमित्तक अशौच १०।४।३।१ दिन तक
होता है इस प्रकरणमें दिन शब्द रात्रि दिनका
जनाने वाला है और रात्रि शब्द दिन रात्रिका जा-
नने वाला है वेदके दो भाग हैं एक मंत्र दूसरा
ब्राह्मण इन दोनों भागोंको संपूर्ण पढ़े हो और

देतजातेनुजातेच हीन वेदे-
वसंभृते अशुद्धा बांधवा-
सर्वे हीनके च तथोच्यते ५८
दशाहं शाव माशौचं सपिं-
डेषु विधीयते अर्वाक्संचय-
नादस्थ्नां त्र्यहमेकाह मेव
च ५९ ॥ ॥ ॥

अग्निहोत्र करताहो तो उसको एक दिन अशौच
होता है केवल वेदहीके पढ़े हो और अग्निहोत्र क-
रताहो तो उसको तीनदिन तक अशौच होता है
वेद पठन और अग्निहोत्र इन दोनोंसे रहित हो
परंतु स्मार्ताग्नि अर्थात् स्मृतिसे कथित अग्नि सं-
हित हो तो उसको बारहदिन अशौच होता है सर्व-
गुणसे हीन हो तो उसको दश दिन अशौच हो-
ता है ५९

म०
स० टी०
भा०
१८७

मतये पुरुषमें सपिंडताकी निवृत्तिहोतीहै अर्थात्
जिस पुरुषसे गणनाकरै उसका पिता आदि पु-
रुषके ऊपर अपने गोत्रमें जन्मनामका ज्ञान न-
हींहै तब समानोदकताकी निवृत्ति होतीहै ६०
सपिंडमें निर्गुण शुद्धकी इच्छाकरनेवाले पुरु-

सपिंडता च पुरुषे सप्तमे वि-
निवर्तते समानोदकभाव-
स्तु जन्मनाम्नोरवेदने ॥ ६० ॥
यथेदं शावमाशौचं सपिं-
डेषु विधीयते जननेप्येवमे-
वस्यान्निपुणां शुद्धिमिच्छ-
ताम् ॥ ६१ ॥ सर्वेषां शावमाशौ-
चं मातापित्रोस्तु सूतकं
सूतकं मातुरेवस्यादुपस्पृ-
श्य पिता शुचिः ॥ ६२ ॥

ष्ठोंके जैसा मरणमें अशौच तैसा जन्ममें अशौच
है ६१ मरण निमित्त अशौच अर्थात् जिसमें कि-
सीको छूना नहीं होना तो सबको होनाहै और
सूतक तो अर्थात् जन्म निमित्तक अशौच तो माता
पिता इन्ही दोको छूना नहीं होता तिसमेंभी माता
हीको छूना नहीं होना पिता तो स्नानान्तर छूनेके
योग्य होताहै ६२

मैथुन विना भी इच्छासे वीर्यपातकरके स्नानसे शुद्ध होताहै और प्रथम पतिको छोड़कर दूस रापति जिसस्त्रीने किया उसस्त्रीमें दूसरी पति से उत्पन्न भएसे दूसरे पतिको तीन दिनका अ शौच होताहै ९३ सपिंड दश रात्रिदिनमें शुद्ध होतेहै और जो पूर्व कथित गुण सहित एक दि

निरस्यतु प्रमान् शुक्र मुप स्पृश्यैव शुद्ध्यति बैजिकाद भि संबंधा दनुरुंध्या दघंत्र्य हम् ९३ शुध्यत्वैकेन रात्र्या च त्रिरात्रे रेवच त्रिभिः शा व स्पृशो विशुध्यन्ति त्र्यहा दुदकदायिनः ९४ गुरोः प्रेतस्य शिष्यस्तु पितृमेधं समाचरन् प्रेतहारैः समं तत्र दशरात्रेण शुध्यति ९५

न अशौचके योग्यहै सो जब मुरदाको छूवे तो तीनदिनमें शुद्धहोतेहै और जो समानोदक है सोभी तीनै दिनमें शुद्धहोतेहै ९४ गुरुका दाह करनेसे शिष्यभी गुरुके सपिंड सदृश। अशौचको पाताहै ९५ ॥

म० स्मृ० टी० भा० १८८

188

गर्भके पातमें जैमासका गर्भहै तै रात्रि अशौ-
च होताहै रजके वीतनेसे स्नान करके स्त्री
शुद्ध होतीहै ६६ चूडाकरणमध्ये विना मरण
में एक रात्रि दिन अशौच होताहै और चूडाक

रात्रिभिर्मास तुल्याभिर्गर्भ
स्रावे विशुध्यति रजस्युपर-
ते साध्वी स्नानेन स्त्री रज-
स्वला ६६ नृणाम कृत चू-
डानां विशुद्धि नैशिकी स्मृ-
ता निर्वृत्त चूडकानां तु त्रि-
रात्रा च्छुद्धि रिष्यते ६७ ऊ-
न द्विवार्षिके प्रेते निदध्यु-
र्बान्धवा बहिः अलंकृत्य
शुचौ भूमा वस्थिसंचयाद् ऋ-
ते ६८ ॥

नाः

रणके उत्तर मरणमें तीन रात्रि अशौच होताहै
दोमास होनीके भीतर मरणमें उस मुर्देका अलं-
कार करके ग्रामसे बाहर गाडना अस्थि संचयन न
करना ६८

उसका अग्निसे संस्कार नकरना जलभी न देना ।
वनमें काटकी नाईं त्याग करके तीन दिन अशौ
च मानना ६९ तीन वर्ष जिसका पूरा नहीं भया
उसके मरनेमें जल देना और अग्निसे दाह नकर
ना अथवा दांत उत्पन्न भए मरा होया नामकर

नास्य कार्योग्नि संस्कारो न
च कार्योदक क्रिया जातदं
तस्य वा कुर्यु र्नाम्नि वापि ।
कृते सति ६९ सब्रह्मचारि
ण्येकाह मतीते क्षपणं स्मृ
जन्मन्येकोदकानां तु त्रिरा
त्राच्छुद्धि रिष्यते ७० स्त्रीणाम
संस्कृतानां तु त्र्यहा च्छुध्य
न्ति बांधवा यथोक्ते नैव क
ल्पेन शुध्यन्ति तु सनाभयः
७१ ॥

णके उत्तर मराहो तो दाह करना जलदेना इसमें म
रे हुएको आनंद होताहै और न करै तो दोषभी न
होताहै ७० ब्रह्मचारी अर्थात् साथ पढने वाला के
मरणमें एक दिन अशौच होताहै जन्ममें समानो
दकको त्रिरात्र अशौच होताहै ७१ ॥

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
१८९

189

विवाहके एवं वाग्दानके उपर स्त्रीके मरणमें बां
धव अर्थात् पति आदि तीन दिनमें शुद्ध होताहै
और विवाह भये मरणेमे पिता आदि सब तीन दि
नमें शुद्ध होतेहैं ७२ क्षार लवण अर्थात् बनाया
लवण अर्थात् बनाया लवणको न भोजन करना

अक्षार लवणान्नास्यु र्निमज्जे
युश्च ते त्र्यहम् मांसाशनं च
नाश्नीयुः शयीरंश्च पृथक्
क्षितौ ७३ सन्निधा वेष वैक
ल्पः शावः शौचस्य कीर्ति
तः असन्निधा वयं ज्ञेयो वि
धिः संबंधिः बांधवैः ७३ ॥

नदी आदिमें तीन दिन तक स्नान करना मांसको
नभक्षण करना पृथक् पृथक् भूमिमे शयन क
रना ७३

विदेशमें मरे हुए की वात दश दिनकी भीतर स
ननेमे आवे तो तीन दिन रात्रि अशौच जानना
वर्षभरके ऊपर सुननेमे शेष रहे दश दिनमें ति
दिन अशौच मानना दिनके ऊपर जातिका म
रण और पुत्रका जन्म सुननेमे आवे तो दिन

विगते तु विदेशस्थे शृणुया
द्यो हि निर्दशं यच्छेषं दशरा
त्रस्य तावदेवा शुचिर्भवेत्
१५ अतिक्रान्ते दशाहे च त्रि
रात्र मशुचिर्भवेत् संवत्सरे
व्यतीते तु स्पृष्ट्वैवापो विशु
ध्यति १६ निर्दशं जाति मं
रणं श्रुत्वा पुत्रस्य जन्म च
सवासा जल माप्लुत्य शुद्धो
भवति मानवः १७ ॥

रात्रि अशौच जानना वर्षभरके ऊपर सुननेमें
आवे तो जलका स्पर्श करके शुद्ध होताहै १६
दश दिनके ऊपर जातिका मरण और पुत्रका
जन्म सुननेमे आवे तो वस्त्र सहित स्नान कर
के शुद्ध होताहै १७ ॥ ॥

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
१५॰

190

विदेशमें समानोदक बालकका मरण सुनने
से वस्त्रसहित स्नानकरके उसी समयमें शुद्ध हो
ताहै ७८ एकका जन्म भयेसे दश दिनके भीतर
दूसरेका जन्म हो और एकके मरणसे दश दिन
के भीतर दूसरेका मरण हो तो प्रथम अशौच

बाले देशान्तरस्थे च पृथक्
पिंडे च संस्थिते सवासा जल
माप्लुत्य सद्यएव विशुध्यति
७८ अन्तर्दशाहे स्यातांचेत्पु
नर्मरण जन्मनी तावत्स्या
दशुचि विप्रो यावत्तत्स्या द
निर्दशं ७९ त्रिरात्र माहुरा
शौच माचार्ये संस्थिते सति
तस्य पुत्रे च पत्न्यां च दिवा
रात्र मितिस्थितिः ८० ॥

बीतेसे दूसरा भी अशौच बीत जाताहै ७९ आ
चार्यके मरणमें शिष्यको त्रिरात्र अशौच होताहै
आचार्यकी पत्नी और पुत्रके मरणमें एक दिन
रात्रि अशौच होताहै यह शास्त्रकी मर्यादाहै ८०

वेद शास्त्रका पढनेवाला मरा हो तो स्नेह आदि
करके उसके समीप रहने वालेको अथवा उसके
गृहमें रहने वालेको त्रिरात्र अशौच होताहै मा
मा शिष्य ऋत्विक् बांधवके मरणमें पक्षिणी ।
अर्थात् पूर्व पर दिन सहित रात्रि अशौच होता
है ए राजा दिनमें मरगयाहो तो दिनभर और
रात्रिको मरगया हो तो रात्रिभर अशौच होता

श्रोत्रिये तूप संपन्ने त्रिरात्र ।
मशुचिर्भवेत् मातुले पक्षि।
णीं रात्रिं शिष्यर्त्विग्बांधवेषु
च ए प्रेते राजनि स ज्योति
र्यस्य स्या द्विषये स्थितिः अ
श्रोत्रिये त्वहः कृत्स्न मनूचा
ने तथा गुरौ ए शुध्येद्वि
प्र दशाहेन द्वादशाहेन भूमि
पः वैश्यः पंचदशाहेन शू
द्रो मासेन जीवति ए ॥

है उसराज्याके राज्यमें रहने वाले प्रजोंके सूर्व ।
ब्राह्मणके मरनेमें उसके गृहमें रहने वालोंको
एक दिन अशौच होताहै अर्थात् दिनमें मरा
हो तो रात्रिभर सहाध्यायी अर्थात् जिसके सा
थ पढेहैंके मरणमें गुरु अर्थात् वेद और शा
स्त्रका थोडा उपकार करनेवालाके मरणमें ए
क दिन अशौच होताहै एवं कथितकी नाई ए

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रसे ये सब क्रम करके १०
१२ १५ ३० दिनमें शुद्ध होतेहैं ८३ पापके दिनको न
बढ़ाना अग्नि क्रिया अग्निहोत्रको न त्याग करना
अग्निहोत्र अशक्तहो तो उसका पुत्र आदि अग्निहो-
त्रको करै उस कर्मकरनेमें अशुद्धता उसको नहीं
रहती ८४ चंडाल रजस्वला पतित सूतिका अथवा

न वर्द्धये दघाहानि प्रत्यूहे-
न्नाग्निषु क्रिया नच तत्कर्म
कुर्वाणः सनाभ्योप्यशुचि र्भ
वेत् ८४ दिवाकीर्ति मुदक्यां
च पतितं सूतिकां तथा श
वं तत्स्पृष्टिनं चैव स्पृष्ट्वा स्ना
नेन शुध्यति ८५ आचम्य प्र
यतो नित्यं जपे दशुचि दर्श
ने सौरा न्मंत्रान् यथोत्साह
म्पावमानी च सर्वशः ८६

त जिसस्त्रीके पुत्र अथवा पुत्री भएहो और दश दि
न बीता नहीं मुरदा मुरदाके छूनेवाला इन सबों
को छूनेसे स्नान करके शुद्ध होताहै ८५ अशुचि-
के दर्शनमें आचमन करके यत्नसे शक्तिपूर्वक
नित्यही जैसा उत्साहहो तैसा सूर्यकी मंत्र और
अपवित्र करन हार मंत्रको जपकरै ८६ ॥

मनुष्यका गीला हाडको छूकर स्नानसे ब्राह्म-
ण शुद्ध होताहै और सूखा हाडको छूकर आ-
चमन करके गौको छूकर अथवा सूर्यको
देखकर शुद्ध होताहै ८७ आदिष्टी अर्थात् ब-
ह्मचारी किसीके मरनेमें जलको न देवै जब
तक व्रत समाप्त न होवै व्रत समाप्त भये से ते

नारं स्पृष्ट्वास्थि सस्नेहं स्नात्वा
विप्रो विशुध्यति आचम्यैव तु
निःस्नेहं गामालभ्यार्क-
मीक्ष्य वा ८७ आदिष्टी नोद-
कं कुर्यादाव्रतस्य समाप-
नात् समाप्ते तूदकं कृत्वा
त्रिरात्रेणैव शुध्यति ८८ वृ-
था संकरजातानां प्रव्रज्या-
सु च तिष्ठताम् आत्मनस्त्या-
गिनां चैव निवर्ततोदकक्रि-
या ८९ ॥

जलको देकर तीन रात्रिमें शुद्ध होताहै ८८ अप-
ने धर्मको त्याग करनेवाला हीन वर्णसे उत्कृष्ट
वर्णकी स्त्रीमें उत्पन्न झूठही सन्यास लेनेवाला
वृथा अर्थात् शास्त्रसे प्रतिषिद्ध आत्माका त्याग
करनेवाला इन सबोंके मरणमें जलको न देना ८९

पाषंड धर्म अर्थात् वेदसे अविहित धर्मको करने वाली इच्छा पूर्वक जहां चाहे तहां जाने वाली गर्भ और भर्ता इन्होंसे द्रोहकरणे वाली सुराको पीने वाली जो स्त्री है उसके मरनेमे जलको न देना ९० आचार्य उपाध्याय माता ।

पाषंड माश्रितानां च चरंती
नां च कामतः गर्भभर्तृद्रु॰
हां चैव सुरापीनां च योषि॰
तां ९० आचार्यं स्वमुपाध्यायं
पितरं मातरं गुरुम् निर्हृत्य
तु व्रती प्रेतान्न व्रतेन वियु
ज्यते ९१ दक्षिणेन मृतं शू
द्रं पुरद्वारेण निर्हरेत् पश्चि
मोत्तर पूर्वैस्तु यथायोगं ।
द्विजातयः ९२ ॥

पिता गुरु इन सभोंको दाह आदि करनेसे व्रती अर्थात् ब्रह्मचारी अपने व्रतमे भ्रष्ट नही होता ९१ पुरके पश्चिम उत्तर एवं दक्षिण द्वारसे क्रम करके मरे हुए ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रको लेजाना ९२

राजा व्रती अर्थात् ब्रह्मचारी और चांद्रायण आदि
का करनेवाला यज्ञको जो करताहै इन तीनोंको
अशौच नहीं लगता क्यों कि राजा तो इंद्रके स्था
नपर बैठाहै और ब्रह्मचारी व्रती यज्ञकरने वाला
ये सब ब्रह्म स्वरूपहैं सर्वकालमें ९४ राजा न्याय
य कार्य करनेमें शुद्धरहताहै और कार्यमें नहीं

न राज्ञामघ दोषोऽस्ति व्रति
नां न च सत्रिणां ऐंद्रं स्थान
मुपासीना ब्रह्मभूता हि ते स
दा ९४ राज्ञो माहात्मिके स्था
ने सद्यः शौच विधीयते प्र
जानां परि रक्षार्थ मासनं ।
चात्र कारणं ९५ डिंबाहव ह
तानां च विद्युता पार्थिवे न
च गो ब्राह्मणस्य चैवार्थे य
स्य चेच्छति पार्थिवः ९५ ॥

क्यों कि प्रजाको रक्षण अपने स्थान अर्थात् सिं
हासन पर बैठे बिना नहीं होता ९५ राजाके बि
ना जो युद्ध होतीहै उसमें जो मरगएहैं और बिज
लीसे जो मरेहैं राजाके आज्ञासे बधके योग्य जो
मारे गएहैं गौ और ब्राह्मण इन दोनोंके अर्थ जो म
रेहैं अशौच नहीं होता और अपने कार्यके होनेके
लिये जिसको राजा अशौच की इच्छा नहीं करता

है उसको अशौच नही होताहै ९५ चंद्र अग्नि
सूर्य वायु इंद्र कुबेर वरुण यम इन सभोंकी
शरीरको राजा धारण करताहै ९६ राजा सब
लोकपालोंका ईशहै इसलिये उसको अशौच

सोमाग्न्यर्कानिलेन्द्राणां वि
त्ताप्पत्योर्यमस्य च अष्टानां
लोकपालानां वपुर्धारयते
नृपः ९६ लोकेशाधिष्ठितो
राजा नास्याशौचं विधीय-
ते शौचाशौचं हि मर्त्यानां
लोकेशप्रभवाप्ययं ९७ उ-
द्यतैराहवे शस्त्रैः क्षत्रधर्मह
तस्य च सद्यः संतिष्ठते य-
ज्ञस्तथाशौचमिति स्थितिः
९८

नही होता लोकका ईश राजाहै इसकारणसे इस
कारणसे मनुष्योंके शौच अशौचको नाशकरने
सकताहै ९७ संग्राममें क्षत्रियोंके धर्मसे शस्त्रक
रके जो मरेहैं उसको उसी समयमें पवित्रता और
यशाश्चिन होताहै ९८

संपूर्ण क्रिया करके अशौचके अंतमे ब्राह्मण
क्षत्रिय वैश्य शूद्र ये सब क्रम करके जलवा
हना युध पैना अथवा रसरी लाठी इन सभों
के स्पर्श करके शुद्धहोतीहै ९९ हे ऋषियो
आप सबसे पिंडोका अशौच हमने कहा अब

विप्रः शुध्यत्यपः स्पृष्ट्वा क्ष
त्रियो वाहनायुधे वैश्यः प्र
तोदं रश्मीन्वा यष्टिं शूद्रः
कृतक्रियः ९९ एतद्वोभि
हितं शौचं सपिंडेषु द्विजो
त्तमाः असपिंडेषु सर्वेषु प्रे
त शुद्धिं निबोधत १०० अस
पिंडं द्विजं प्रेतं विप्रो निर्हृ
त्य बंधुवत् विशुध्यति त्रिरा
त्रेण मातुराप्तांश्च बांधवा
न् १०१ ॥

असपिंडके प्रेत शुद्धिको जानिये १०० मरे हुए
असपिंड ब्राह्मणको बंधुकी नाईं निर्हरण करके
अर्थात् श्मशान ले जाके तीन रात्रिमें शुद्धहो॰
ताहै और मामा मोसी आदिको भी श्मशानत
क ले जाके ले जाके तीन रात्रिमें शुद्ध होताहै १०१

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
१०४

जब मरे हुएके सपिण्डका अन्नको भोजन करै तो दश दिनमें शुद्ध होताहै और अन्नको भोजन न करै और उसकी गृहमें वास भी न करै तो एकदिन शुद्ध होताहै १०१ मरा हुआ मनुष्य अपनी जातिहो किम्बा दूसरी जातिहो और उस॰

194

यद्यन्न मत्ति तेषां तु दिशाहे नैव शुध्यति अन्न दन्नन्न म ह्नैव न चेत्तस्मिन् गृहे वसे त् १०१ अनुगम्येच्छाया प्रेत ज्ञाति मज्ञाति मेव च सचै लः स्पृष्टाग्निं घृतं प्राश्य वि शुध्यति १०३ न विप्रं स्वेषु तिष्ठत्सु मृतं शूद्रेण नाय येत् अस्वर्ग्या ह्याहुति स्या स्या च्छूद्र संस्पर्श दूषिता १०४

की पीछे अपनी इच्छासे गमन करके वस्त्र सहित स्नान करै घी भोजन करै अग्निको छूवै । तब शुद्ध होताहै १०३ अपनी जात रहित सेते मरे हुए ब्राह्मणको शूद्र न लेजावे शूद्रके छूनेसे उसकी शरीरका अग्निमें आहुति स्वर्गके हित नही होती १०४

ज्ञान तप अग्नि आहार माटी मन जल लेप वायु
कर्म सूर्य कालये सब मनुष्योंके शुद्ध करने
वालेहैं सब शौचमें अर्थ शौच अर्थात् न्यायसे
धनका अर्जन बड़ाहै जिसका अर्थ शुद्धहै सो
ई शुद्धहै और माटी जलसे जो शुद्धहै और अर्थसे
अशुद्धहै सो शुद्ध नहींहै १०६ पंडित क्षमाकर

ज्ञानं तपोग्नि राहारो मृन्म
नो वार्यु पांजनम् वायुः क
र्मार्क कालौ च शुद्धेः कर्तॄ
णि देहिनां १०५ सर्वेषा मे
व शौचानां मर्थशौचं परं
स्मृतम् योर्थे शुचि र्हि स
शुचि र्नमृद्वारि शुचिः शु
चिः १०६ क्षान्त्या शुध्यंति वि
द्वांसो दानेना कार्य कारि
णः प्रच्छन्न पापा जप्येन त
पसा वेद वित्तमः १०७ ॥

के करनेके योग्य जो कार्य नहींहै उसके करने
वाले दान करके और जिसका पाप छिपाहै
सो जप करके वेदके पढ़ानेवाले तपकरके
शुद्धहोतेहैं १०७ ॥

175

शुद्धिकरनेके योग्य जो वस्तुहै सो माटी जलसे
नदी वेग करके परपुरुषमें मन जिसका लगाहै
ऐसे स्त्री रजसे सन्यास अर्थात् छटई अध्याय में
जो कहेंगे उससे ब्राह्मण शुद्ध होताहै १०८ जल
करके शरीर सत्यकरके मन ब्रह्म विद्या और त॰

मृत्तोयैः शुध्यते शोध्यं नदी
वेगेन शुध्यति रजसा स्त्री म
नो दुष्टा संन्यासेन द्विजोत्त
म १०८ अद्भिर्गात्राणि शुध्यं
ति मनः सत्येन शुध्यति वि
द्या तपोभ्यां भूतात्मा बुद्धि
र्ज्ञानेन शुध्यति १०९ एष शौ
चस्य वः प्रोक्तः शारीरस्य ॰
विनिर्णयः नानाविधानां ॰
द्रव्याणां शुद्धेः शृणुत नि
र्णयं ११० ॥

पकरके भूतात्मा अर्थात् लिंग शरीर सहित जी॰
वात्मा ज्ञान करके बुद्धि शुद्धि होतीहै १०९ भृगुजी
कहतेहैं कि हे ऋषियो यह शरीर शुद्धताकी निर्ण
यको आपलोगोंसेकहा अबनानाप्रकारकी जो द्रव्य
है उसके शुद्धिका निर्णय सुनिए ११० ॥

तैजस पात्र अर्थात् सुवर्ण आदिका पात्र मर-
कत आदि मणिका पात्र पत्थरका पात्र ये
सब भस्म जल माटी इन करके शुद्ध होते हैं
इस बातको मनु आदि ऋषियोंने कहा ८ छि-
द्र आदि लेपसे रहित जो भांडे हैं सोना रूपे

तैजसानां मणीनां च सर्व-
स्याश्ममयस्य च भस्मना-
द्भिर्मृदा चैव शुद्धिरुक्ता
मनीषिभिः ८ निर्लेपं का-
ञ्चनं भाण्डमद्भिरेव विशुध्य-
ति अब्जमश्ममयं चैव रा-
जतं चानुपस्कृतं ९ अपा-
मग्नेश्च संयोगाद्धैमं रौप्यं
च निर्बभौ तस्मात्तयोः स्व-
योन्येव निर्णेको गुणवत्तरः
१०

मोती पत्थरका और रेखा रहित रूपेका जो भां-
डे हैं सो सब केवल जलकेकरके शुद्ध होते हैं ९
अग्नि और जलके संयोगका सोना और रूपा है इ-
सलिये अपनी योनि करके दोनोंकी शुद्धि बड़

त अच्छी है ११३ तांबा लोहा कांसा पीतल रांगा
सीसा इन सभोंको शौच यथा योग्य रेह अमिली
जल इन सभोंसे करना ११४ जितने द्राव वस्तु है
अर्थात् चूनेके योग्य हुत तैल आदिसो कोआ
कीडा आदिसे अत्यन्त उपहत भया और प्रमाण
से पसर भरहो तो प्रादेश अर्थात् अंगूठा और
तर्जनीके फैलाने भर प्रमाण कुश पत्र दो ॰

ताम्रायःकांस्यरैत्यानां त्र-
पुणः सीसकस्य च शौचं
यथार्हं कर्तव्यं क्षाराम्लोद-
क वारिभिः ११४ द्रवाणां चै-
व सर्वेषां शुद्धि रुत्पवनं स्मृ-
तं प्रोक्षणं संहतानां च दार-
वाणां च तक्षणं ११५ मार्जनं
यज्ञपात्राणां पाणिना यज्ञ
कर्मणि चमसानां ग्रहाणां
च शुद्धिः प्रक्षालनेन तु ११६

करके ऊपर उछालनेसे शुद्ध होते है शय्या आ-
दिको उच्छिष्ट आदिकरके उपघात भयाहो तो ॰
प्रोक्षण अर्थात् जलका छीटोंसे काटका पात्र
जब उच्छिष्ट आदिसे अत्यन्त उपहत भयाहो तो का
टनेसे शुद्ध होता है ११५ यज्ञपात्रोंका मार्जन हाथ-
से करना यज्ञकर्ममें चमस और ग्रह इन दोनोंके
शुद्धि धोनेसे होती है

चरु स्रुक् स्रुवा स्फ्य सूप गाडी मूसर ओखरी
इन सभोंकी शुद्धि गरम जलसे १७ बहुत धान्य
वस्त्रकी राशि हो तो जलके छींटासे शुद्धि जान
ना और थोडा हो तो जलके धोनेसे शुद्ध जानना

चरूणां स्रुक् स्रुवाणां च शु
द्धिरुष्णेन वारिणा स्फ्य शूर्प
शकटानां च मुसलोलूख
लस्य च १७ अद्भिस्तु प्रोक्षणं शौ
चं बहूनां धान्यवासस
सां प्रक्षालनेन त्वल्पानाम
द्भिः शौचं विधीयते १८ चै
लवच्चर्मणां शुद्धि वैदलानां
तथैव च शाक मूल फला
नां च धान्यवच्छुद्धिरिष्यते १९

१८ स्पर्शके योग्य पशुकी चर्मका पात्र और बांस
का पात्र इन दोनोंकी शुद्धि वस्त्र शुद्धिकी नांई
जानना शाक मूल फल इन्होंके शुद्धि धान्य
शुद्धिकी नांई १९ ॥

म० स्मृ० टी० भा० १९७

197

कीड़ेके पेटमें के सूतका जो वस्त्र भेड़के रोमका
वस्त्रा खारी माटीसे नेपाली कम्बल रीठीसे पट्ट व
स्त्र बेलके फलसे तीसीका वस्त्र श्वेत सरसोंसे
शुद्ध होतेहैं १२० शंखका पात्र छूनेके योग्य जो
पशु हाथी आदि तिसके दांत सींग हाडका जो

कौशेयाविकयोरूषैः कुतपा
नामरिष्टकैः श्रीफलैरंशुप
ट्टानां क्षौमाणां गौरसर्षपैः
१२० क्षौमवच्छंखशृंगाणाम
स्थिदंतमयस्य च शुद्धिर्विजा
नता कार्या गोमूत्रेणोदके
नवा १२१ प्रोक्षणात्तृणकाष्ठं
च पलालं चैव शुध्यति मार्ज
नोपांजनैर्वेश्म पुनः पाके०
न मृन्मयम् १२२ ॥

पात्र तिसकी शुद्धि तीसीके वस्त्रकी नाई जानना अ
र्थात् श्वेत सरसवका कल्क और गौका मूत्र जल
इन दोनोंमेंसे एक करके १२१ जल छिड़कनेसे तृ०
ण काष्ठ पुआरा बढ़नेसे मार्जन और लेपसे गृह०
फेर पाकसे माटीका पात्र शुद्ध होताहै १२२ ॥

मदिरा मूत्र विष्ठा खंखार पीव रुधिर इन्होंमे
मे कोई एक करके युक्त जो माटीका पात्रसो
फेर पाक करके शुद्ध नही होता १२३ बुहनी
से मार्जन लेपन सींचन ऊपरकी माटीका
छीलन गौका वास इन पांचो करके भूमि

मद्यै मूत्रैः पुरीषै र्वा ष्ठीव॰
नैः पूयशोणितैः संस्पृष्टं नै
व शुध्येत पुनः पाकेन मृ
ण्मयम् १२३ समार्जनो पां॰
जनेन सेकेनो ल्लेखने न॰
च गवां च परिवासेन भू॰
मिः शुध्यति पंचभिः १२४
पक्षि जग्धं गवा घ्रातम॰
वधूत मवक्षुतं दूषितं के
श कीटैश्च मृत्प्रक्षेपेण शु॰
ध्यति १२५ ॥

शुद्धि होतीहै १२४ भक्षण योग्य पक्षीसे जिस व
स्तुका एक देश भक्षितहै और जो वस्तु गौसे सूं
घी गईहै जो वस्तु पांवसे कंपित हुईहै जिस॰
वस्तुके ऊपर छींक पडीहै बाल और छोटे कीडे
से दूषित जो वस्तुहै सो अपनी ऊपर माटी पा॰

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
१९८

198

अपवित्र वस्तु करके मिलीहुई वस्तुसे अपवित्र
वस्तुका गंध और लेप जब तक न छूटै तब त
क माटी जलदेना सब द्रव्यकीशुद्धिमें १२६ देव
तोंने ब्राह्मणोंकी लिये तीन वस्तु पवित्र किए
है एकतो बिना देखी वस्तु पवित्र किएहै एक

यावन्नापैत्यमेध्याक्ता द्गंधो ले
पश्च तत्कृतः तावन्मृद्वारि
चादेयं सर्वासु द्रव्य शुद्धिषु
१२६ त्रीणि देवाः पवित्राणि
ब्राह्मणाना मकल्पयन् अदृ
ष्ट मद्भि र्निर्णिक्तं यच्च वाचा
प्रशस्यते १२७ आपः शुद्धा भू
मिगता वै तृष्ण्यं यासु गो र्भ
वेत् अव्याप्ता श्चेद मेध्येन गं
धवर्ण रसान्विताः २८ ॥

तो बिना देखी वस्तु अर्थात् जिस वस्तुका उपघा
त देखनेमें न आयाहो दूसरा जलसे जो धुआ ग
याहै तीसरा वाणीसे जो प्रशस्तहै १२७ जो जल ए
क गौकी तृषा शांतिकरने भरहो और अपवित्र व
स्तुसे मिला नहो गंधवर्ण रसकरके युक्तहो और भू
मिमें स्थितहो सो पवित्रहै २८ ॥

कारीगरका हाथ हट्टमें पसारी वस्तु ब्रह्मचा
रीकी भिक्षा ये तीनो नित्यही शुद्धहै यह शा
स्त्रकी मर्यादाहै १२९ रति समयमें स्त्रीका मुख
फल गिरानेमे पक्षी दोहन कालमें बछरू मृ
गाके ग्रहण करनेमें कुक्कुर पवित्रहै १३० कु

नित्यं शुद्धः कारुहस्तः प॰
ण्ये यच्च प्रसारितं ब्रह्मचा॰
रिगतं भैक्ष्यं नित्यं मेध्य मि॰
ति स्थितिः १२९ नित्य मास्यं
शुचि स्त्रीणां शकुनि फल
पातने प्रस्रवे च शुचि र्व॰
त्सः श्वा मृग ग्रहणे शुचिः
३॰ श्वभिर्हतस्य यन्मांसं ॰
शुचि तन्मनुरब्रवीत् क्रव्या
द्भिश्च हतस्यान्यैश्चंडालाद्यै
श्च दस्युभिः १३१ ॥

क्कुर व्याघ्र बाज व्याधि आदि मृगवधसे जीवि
का करने वाले इन सबोंसे मारागया जो भक्षण
के योग्य जीव उसकी मांस पवित्रहै श्राद्ध आदि
अतिथि भोजन कर्ममें यह मनुजीने कहा १३१

म० स्मृ० टी० भा० १५५ नाभीके ऊपर इंद्रिय पवित्रहैं नाभीके हेठेकी
इंद्रिय अपवित्रहैं और देहसे गिरा जो मलसो अ
पवित्रहै १३२ माखी जल बिंद छाया गौ अ०
श्वसूर्यकी किरण धूलि पृथिवी ये सब छूने०

199

ऊर्द्ध्वं नाभेर्यानि खानि तानि
मेध्यानि सर्वशः यान्यधस्ता
नि मेध्यानि देहाच्चैव मला
श्च्युताः ३२ मक्षिका विप्रु०
ष च्छाया गौरश्वः सूर्य र०
श्मयः रजो भूर्वायुरग्निश्च
स्पर्शे मेध्यानि निर्दिशेत् ३३
विण्मूत्रोत्सर्गशुद्ध्यर्थं मृद्वा
र्यादेयमर्थवत् दैहिकानां
मलानां च शुद्धिषु द्वादश
स्वपि ३४ ॥

मे पवित्रहैं १३३ विष्टा और मूत्रको शरीरसे त्या
ग करके देहसे गिरे बारह मलोंके छूके शुद्धि
के लिये जल और माटीके प्रयोजन भरलेवे ३४

चरबी वीर्य रक्त मज्जा मूत्र विष्ठा नाक छेदि खं-
खार आंसूकी चर पसीना ये बारह मनुष्योंके म-
ल हैं ।३५ माटीसे शुद्धिकी इच्छा करने वाला पु-
रुष एकबेर लिंगमें लगावे पांच बेर मार्गमें वा

वसा शुक्र मसृङ्मज्जा विण्मू-
त्र घ्राण कर्णविट् श्लेष्माश्रु
दूषिका स्वेदो द्वादशैते नृ-
णां मलाः ३५ एका लिंगे गु-
दे तिस्र स्तथैकत्र करे दश
उभयोः सप्त दातव्या मृदः ।
शुद्धि मभीप्सिता ३६ एतत
शौचं गृहस्थानां द्विगुणं ब्र-
ह्मचारिणां त्रिगुणं स्या द्वन-
स्थानां यतीनां तु चतुर्गुणं
१३७ ॥

ए हाथमें दशबेर दोनों हाथमें सातबेर ।३६ गृ-
हस्थोंके यह शौच है ब्रह्मचारियोंके इसका दु-
ना वानप्रस्थोंके तिगुना संन्यासियोंके चौगु-
ना १३७ ॥

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
५॰
200

विष्ठा मूत्र करके हाथ पांव धोके आचमन कर
के इंद्रियोंको छूवै वेदके पठन समयमें भी आ
चमन करके इंद्रियोंको छूवे ५८ शरीरकी प॰
वित्रताकी इच्छा करत पुरुष प्रथम तीन वेर आ

कृत्वा मूत्रं पुरीषं वा खान्या
चान्त उपस्पृशेत् वेद मध्येष्य
माणश्च अन्नं मश्नंश्च सर्वदा
५८ त्रिराचामेदपः पूर्वं द्विः
प्रमृज्यात्ततो मुखं शारीरं ।
शौचमिच्छन्हि स्त्री शूद्र॰
स्तु सकृत्सकृत् ५९ शूद्राणां
मासिकं कार्यं वपनं न्याय
वर्तिनां वैश्यवच्छौच कल्प
श्च द्विजोच्छिष्टं च भोजनं
६०

चमनकरके तबदोवेर मुखधोवे स्त्री और शूद्रतो
एकही वेर मुख धोवै और आचमनकरे ५९ न्याय
मे रहनेवाले शूद्रको मासमें एकवेर क्षौरकर्म है
वैश्यकी नाई पवित्रता है ब्राह्मणका जूठा भोजन
है ६०

मुखसे थूकका बिंद अंगमें पडे और मोछका
बाल मुखमें जाय और दांतमें लगी जो वस्तु ये
सब अशुद्धि नही करते ४१ किसीको आचमन
कोई करताहो और आचमन करने वालेके
मुखसे जलबिंद भूमिमें गिरके आचमन करा

नोच्छिष्टं कुर्वते मुख्या वि-
प्रुषोऽङ्गं पतन्ति याः न श्मश्रू-
णि गतान्यास्यं न दन्तान्तरधि-
ष्ठितम् ४१ स्पृशन्ति बिन्दवः
पादौ य आचामयतः परान्
भौमिकैस्ते समा ज्ञेया न तै-
रप्रयतो भवेत् ४२ उच्छि-
ष्टेन तु संस्पृष्टो द्रव्यहस्तः
कथंचन अनिधायैव तद्द्र-
व्यमाचान्तः शुचितामिया-
त् ४३

ने वालेके पांव पर पडे तो वह भूमिके जलके स-
मानहै उससे अपवित्र नही होता ४२ कोई व-
स्तुको हाथमें लिये हुए पुरुष जूठे मनुष्यसे
छुआ जाय तो उस वस्तुको लिये हुए ही आच-
मन करके वमन और विरेचन को करने वा-
शुद्ध होताहै ४३

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
११

201

ला स्नान करके घी भोजन करै और अन्न आदि
भोजनकरके आचमनकरै मैथुन करके स्नान
करै १४४ सूतिके छींकिके भोजन करके खं-
खारिके झूटबोलके जलपीके पवित्र रहत ।

वांतो विरक्तः स्नात्वा तु घृ
त प्राशन् माचरेत् आचामे
देव भुक्त्वान्नं स्नानं मैथुनिनः
स्मृते १४४ सुप्त्वा क्षुत्वा च भु
क्त्वा च निष्ठीव्योक्त्वा न्टतान्
नि च पीत्वापो ध्येष्यमाणश्च
आचेम त्प्रयतोपि सन् १४५
एष शौचविधिः कृत्स्नो द्र
व्यशुद्धि स्तथैवच उक्तोवः
सर्व वर्णाना स्त्रीणां धर्मा
न्निबोधत १४६ ॥

ऐसे भी आचमनकरै १४५ भृगुजी कहतेहैं कि
हे ऋषियो आपलोगोंमे सब वर्णोंका शौच वि
धिसंपूर्ण कहा और द्रव्य शुद्धिभी कहा इसके
अनंतर स्त्रीयोंके धर्मका जानो १४६ ॥

स्त्री बाला हो चाहे युवती को अथवा वृद्धा हो
परंतु गृहमे कोई कार्यको स्वतंत्रता से न करै ।
॥ बालावस्थामें पिताके अधीन रहै युवाव
स्थामें पतिके वशरहै विधवा भए संते पुत्रोंके

बालयावा युवत्या वा वृद्ध-
या वापि योषिता नस्वातंत्र्
एण कर्तव्यं किंचित्कार्यं गृ
हेष्वपि ॥ बाले पितुर्वशे ।
तिष्ठेत्पाणिग्राहस्य यौवने
पुत्राणां भर्तरि प्रेते न भजे
त्स्त्री स्वतंत्रतां ॥ पिता भ
्राता सुतो वापि नेच्छेद्विरह ।
मात्मनः एषां हि विरहेण
स्त्री गर्ह्ये कुर्य्या दुभे कुले ॥

अधीनरहै स्वतंत्रा अर्थात् अपने अधीनहोके क
भीन रहै पिताभाई पुत्र इनके साथ अपने वियो
गकी इच्छा न करै इन्होके वियोगसे स्त्री दोनो ।
कुलके निंदित करतीहै सर्वकालमे दृष्ट और

गृहकार्यमें दक्ष रहै गृहकी सामग्रीको सुंदर
प्रकारसे बनाए रखै उदार रहै जिस पुरुष
को पिता देवै अथवा पिताके आज्ञापाके पु॰
त्र देवै उस पुरुषकी सेवा करे उसके मरे पीछे

सदा प्रहृष्टया भाव्यं गृहका
र्येषु दक्षया सुसंस्कृतोप
स्करया व्यये चामुक्तहस्त
या १५० यस्मै दद्यात्पिता
त्वेनां भ्राता वानुमते पितुः
तं शुश्रूषेत जीवन्तं संस्थितं
च न लङ्घयेत् १५१ मङ्गला
र्थं स्वस्त्ययनं यज्ञश्चासां प्र
जापतेः प्रयुज्यते विवाहेषु
प्रदानं स्वाम्यकारणं १५२ ॥

दूसरे पुरुषके साथ रति न करै १५१ विवाहमें
स्वस्त्ययन अर्थात् शांतिमंत्रपठन और ब्रह्माके
निमित्त याग जो होता है स्त्रियोंके सो मंगलके अ
र्थ है अर्थात् इष्ट संपत्यर्थ कर्म है और दान जो है सो
भर्ता स्वामित्वका कारण है १५२ ॥

ऋतकालमें अथवा अन्तकालमें मंत्र संस्कार
करनेवाला पति इस लोकमें परलोकमें स्त्रियों
को सुखदेनेवालाहै ।५३ शीलसे रहित पतिहो
अथवा दूसरी स्त्रीके साथ प्रेम रखनाहो किंवा

अनृता हृतकाले च मंत्र सं
स्कार कृत्पतिः सुखस्य नित्य
दाहेन परलोके च योषितः
।५३ विशीलः कामवृत्तो वा
गुणै र्वा परिवर्जितः उपच
र्यः स्त्रिया साध्व्या सततं देव
वत्पतिः ।५४ नास्ति स्त्रीणां
पृथग्यज्ञो नव्रतं नाप्युपोषि
तं पतिं शुश्रूषते येन तेन
स्वर्गे महीयते ।५५ ॥

गुणोंकरके वर्जितहो तो भी जो साध्वी स्त्रीहै सो
नित्यही देवताकी नाई पतिकी सेवाकरे ।५४ स्त्री
योंके यज्ञ व्रत उपवास पृथक् नहींहै केवल प
तिकी सेवाही स्वर्गमें पूजित होतीहै ।५५ ॥

म०
स्मृ०टी०
२·३

पतिलोकके इच्छा करने वाले स्त्री साध्वी जीवते
अथवा मरे हुए पतिका कुछभी अप्रिय वस्तु क
रै ५६ पतिके मरे सेते दूसरी पतिका नाम ग्रहण
भी नकरै सुंदर मूल पुष्प फलकरके इच्छा एवं

२०३

पाणिग्राहस्य साध्वीस्त्री जीव
तो वा मृतस्य वा पतिलोक
मभीप्संती नाचरे त्किंचिद
प्रियं ५६ कामं तु क्षपयेद्दे
हं पुष्प मूल फलैः शुभैः
न तु नामापि गृह्णीया त्प
त्यौ प्रेते परस्यतु ५७ आसी
ता मरणा त्क्षांता नियता
ब्रह्मचारिणी यो धर्म एक
पत्नीनां कांक्षंती तमनुत्त
मं ५८ ।।

क थोरा आहार करके देहको यावत कालको
काटै ५७ एकैहै पति जिसको ऐसी जो स्त्री उस
के धर्मको आकांक्षाकरती हुई मरण तक निय
म सहित ब्रह्मचारिणी होकर दुर्बल शरीरमे रहै ५८

कदाचित् कहो कि वंश विना स्वर्ग नही होता इसलिये वंशके अर्थ दूसरे पतिके साथ रतिक रनाचाहिए तिसपर कहतेहैं कि नही कुमार ब्रह्मचारी ब्राह्मण कई सहस्रस्वर्ग गए विना संतति किए इसबातको समुझकर विना संतति नि

अनेकानि सहस्राणि कुमा
र ब्रह्मचारिणां दिवं गतानि
विप्राणां अकृत्वा कुल संत
तिं ॥ ६५ मृते भर्तरि साध्वी ।
स्त्री ब्रह्मचर्ये व्यवस्थिता ।
स्वर्गं गच्छत्य पुत्रापि यथा
ते ब्रह्मचारिणः ६० अपत्य
लोभाद्यातु स्त्री भर्तारं मति
वर्तते सेह निंदामवाप्नोति
परलोका च हीयते ६१ ॥

यससे रहे ६५ पतिके मरे पीछे साध्वी स्त्री ब्रह्मचर्यमे स्थित रहे तो पुत्र रहितभी स्वर्गजातीहै जैसे कुमार ब्रह्मचारी स्वर्ग गए ६० पुत्रहोनेके लोभसे जो स्त्री दूसरे पतिके साथ रतिकरती है सो इसलोकमे निंदा पातीहै और पतिलोकको

परलोकमें नहीं पातीहै ६१ दूसरे पतिसे उत्पन्न
प्रजा शास्त्रकी रीतिसे अपना नहीं कहाता सा
ध्वी स्त्रीयोंके कहीं दूसरा भर्ता शास्त्रमें नहीं ।
लिखाहै ६२ अपना निकृष्ट पतिको छोडकर
दूसरेके उत्कृष्ट पतिका जो सेवन करतीहै सो

नान्योत्पन्ना प्रजास्तीह नचा
प्यन्य परिग्रहे न द्वितीयश्च
साध्वीनां क्वचिद्भर्तोप दिश्य
ते ६२ पतिं हित्वाप कृष्टंस्व
मुत्कृष्टं या निषेवते निंद्यै
व साभवे ल्लोके परपूर्वेति
चोच्यते ६३ व्यभिःचारात्तु ।
भर्तुः स्त्री लोके प्राप्नोति ।
निंद्यतां सृगाल योनिंचा
प्नोति पापरोगैश्च पीड्यते
६४ ॥

लोकमें निंदित कहातीहै ६३ भर्ताके व्यभिचा
रसे लोकमें स्त्री निंदितकहातीहै सृगाल यो॰
निको प्राप्तहोतीहै पापरोगोंसे पीडित होती
है । ६४ ॥

जो दूसरीपतिके साथ रति नही करती मन
वाणी देहसे संयत रहतीहै सो परलोकमें
पतिलोकको पातीहै भलीलोग इसको सा
धी कहतेहैं १६५ इस रीतिकरके मन वाणी

पतिं यानाभिः चरति मनो
वाग्देह संयुता साभर्तृलो
कमाप्नोति सद्भिः साध्वीति
चोच्यते १६५ अनेन नारीवृ
त्तेन मनो वाग्देहसंयुता ।
इहाग्र्यां कीर्तिमाप्नोति प
तिलोकम्परत्र च १६६ एवं
वृत्तां सवर्णां स्त्रीः द्विजाति
पूर्वमारिणीं दाहयेदग्नि
होत्रेण यज्ञपात्रैश्च धर्मवि
त् १६७

देहसे संयत रहनेसे इस लोकमें श्रेष्ठकीर्तिको
और परलोकमें पतिलोकको पातीहै १६६ धर्म
के जाननेवाले ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य अपने व
र्णकी स्त्री मरिजाय तो इसको अग्निहोत्रके अग्नि

म० स्मृ० टी० भा० २०५

205

से और यज्ञपात्रसे दाहकरै १६७ तदनंतर अं
त्य कर्म करके पुनः विवाह करै और अग्निका
स्थापन करै १६८ इस विधिसे नित्यही पंचय
ज्ञका त्याग न करै आयुषका दूसरा भाग त
क विवाह करके गृहमें वासकरै १६९ ॥ इति

भार्यायै पूर्वमारिण्यै दत्वा-
ग्नी नंत्यकर्मणि पुनर्दारक्रि
यां कुर्या पुनराधानमेव च
१६८ अनेन विधिना नित्यं पं
चयज्ञा न्न हापयेत् द्विती-
य मायुषो भागं कृतदारो
गृहे वसेत् १६९ इति मान-
वे धर्मशास्त्रे भृगु प्रोक्तायां
संहितायां शौचविधिः पं
चमोऽध्यायः ५ ॥

श्री मनुस्मृति भाषा टीकायां कश्मीरक महा व्या-
ख्यातृ सारिणां श्री बाबू देवीदयाल सिंहका-
रितायां श्री कंपनीय संस्कृत पाठ शालीय धर्म
शास्त्र गुलजार शर्म्म पंडित कृतायां शौचविधि
पंचमोऽध्यायः ५ ॥ :

इस रीतिसे गृहाश्रममें रहिके स्नातक द्विज नि
श्चित इन्द्रियोंको जीतकर ज्योंका त्यों वनमें वा
सकरै १ जब गृहस्थ अपनी की वृद्धावस्था दे-
खै तब वनमें वासकरै २ ग्रामको आहारको
और पुत्रके पुत्रको देखै

एवं गृहाश्रमे स्थित्वा विधि
वत्स्नातको द्विजः वने व
सेत्तु नियतो यथावद्विजि
तेन्द्रियः १ गृहस्थस्तु यदा
पश्येद्वलीपलितमात्म
नः अपत्यस्यैव चापत्यं त
दारण्यं समाश्रयेत् २ संत्य
ज्य ग्राम्यमाहारं सर्वं चैव
परिच्छदं पुत्रेषु भार्यां नि
क्षिप्य वनं गच्छेत्सहैव वा
३

त्याग कर और गृहका सामग्रीको त्यागकर भार्या
को पुत्रके अधीन कर वनमें जाय अथवा स्त्री
सहित वनमें जाय ३ ॥

म॰ स्मृ॰ टी॰ भा॰ अ॰ ६

अग्निहोत्रको लेकर और सामग्री सहित गृह्यके
अग्निको लेकर इन्द्रियोंको रोककर ग्रामसे निक
लकर वनमें रहै ४ नानाप्रकारके जो मुनिके अ
न्न हैं और पवित्र जो शाक मूल फल हैं तिस ।

206

अग्निहोत्रं समादाय गृह्यं ।
चाग्निपरिच्छदं ग्रामादरण्यं
निःसृत्य निवसेन्नियतेन्द्रि
यः ४ उन्यन्नैर्विविधैर्मेध्यैः
शाकमूल फलेनवा एता
नेव महायज्ञान्निर्वपेद्वि॰
धि पूर्वकम् ५ वैतानिकं
च जुहुयादग्निहोत्रं यथा
विधिः दर्शमस्कन्दयन्पर्व
पौर्णमासं च योगतः ६ ॥

करके विधिपूर्वक पंच महायज्ञोंको करै ५ चर्म
अथवा वल्कलकाचीर इसको पहिरै सायंप्रातः स्ना
न करै जटा मोछ लोम नखको धारण करै ६ ॥

जिसवस्तुको भोजन करै उसी वस्तुसे बलिक
मकरै और उसी वस्तुको भिक्षादेवै शक्तिपूर्वक
अपने स्थानमें कोई आवै तो जल मूल फलसे
उसका पूजन करै ७ नित्यही वेदको पाठ एका

वसीत चर्म चीरंवा सायं ।
स्नायात्प्रगेतथा जटाश्च ।
बिभृयान्नित्यं श्मश्रुलोम
नखानि च ६ यद्भक्ष्यं स्या
त्ततो दद्याद्बलिं भिक्षां च
शक्तितः अम्मूल फल भि
क्षाभि रर्चयेदाश्रमागता
न् ७ स्वाध्याये नित्ययुक्तः
स्याद्दान्तो मैत्रः समाहितः
दाता नित्य मनादाता सर्व
भूतानुकंपकः ८ ॥

ग्रचितरहै सबका मित्रहोकर रहै प्रीत चाम ।
कामक्रोध आदिको जोड वस्तुहै तिनको सह
नकरै दैवही करै किछु ग्रहण नकरै सर्व जीव

म० स्मृ० टी० भा० १०३

परदयागावै ९ यथा विधि अग्निहोत्रको करै द-
र्श पौर्णमास यागको करै नक्षत्र याग आग्रय
ण चातुर्मास्य उत्तरायण दक्षिणायन कर्मको
क्रमसे करै १० वसंत कालमें शरत्कालमें भए

207

ऋक्षेष्ट्या ग्रयणं चैव चातुर्मा
स्यानि चाहरेत् उत्तरायणं च
क्रमशो दक्षस्यायन मेवच १०
वासंतशारदै र्मेध्यै र्मुन्यन्नैः ।
स्वयमाहृतैः पुरोडाशांश्च रू
ंश्चैव विधिव न्निर्वपेत् पृ-
थक् ११ देवताभ्यस्तु तद्धु-
त्वा वन्यं मेध्यतरं हविः शे
ष मात्मनि युंजीत लवणं
च स्वयं कृतम् १२ ॥

जो मुनिके अन्न हैं पवित्र उनको आपसे लाके उसी
से विधिपूर्वक पृथक पृथक पुरोडाश चरु देवतों
के देवै याग सिद्धके लिये अति पवित्र हवि देव-
तोंके देकर जो बचै सो आप भोजनकरै अपने बनाये
लवनको भोजनकरै १२

स्थल जल पवित्र वृक्ष इन्होंसे उत्पन्न जो शा
क मूल फल पुष्प उसको भोजनकरै फलसे
उत्पन्न तेलको भोजन करै १२ मधु मांस और
भूमिमें उत्पन्न जो छत्राकार और भूस्तृण जो

स्थलजौदक शाकानि पुष्प
मूल फलानि च मेध्य वृक्षो
द्भवान्यद्या स्नेहांश्च फल
सम्भवान् १२ वर्जयेन् मधुमां
सं च भौमानि कवकानि
च भूस्तृणं शिग्रुकं चैव
श्लेष्मातक फलानि च ४
त्यजेदाश्वयुजे मासि मुन्य
न्नं पूर्वसंचितम् जीर्णानि
चैव वासांसि शाकमूलफ
लानि च १५ ॥

मालवदेशमें प्रसिद्ध है शिग्रु शाक जो वाह्ली
क देशमें प्रसिद्ध है और बहेड़ा इन सबको त्या
ग करै ४ मुनिका अन्न जो बचरा है और जीर्ण
वस्त्र शाक मूल फल इन सबको आश्विन मास

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
२८

में त्याग करै १५ हलसे उत्पन्न जो वस्तु है खेत
के समीपमें जो वस्तु है और उसको स्वामी ने
त्यागभी कियाहो तो भी उसको भोजनकरै ।
और दुःखितहो तो भी विना हलसे उत्पन्न ग्राम
का फलमूलको भोजन करै १६ अग्निकरके
न

208

न फालकृष्ट मश्नीयादुत्सृ
ष्टमपिकेनचित् नग्रामजा
तान्यार्त्तोपि मूलानि च फ
लानिच १६ अग्निपक्वाश
नो वा स्यात् कालपक्वभुगे
व वा अश्मकुट्टो भवेद्वापि
दंतोलूखलिकोपि वा १७ स
द्यः प्रक्षालको वा स्यात् मा
ससंचयिकोपि वा षाण्मास
निचयो वा स्यात् समानिच
य एव वा १८ ॥

जो पकाहै अथवा कालकरके जो पकाहै उस
को भोजन करै पत्थरसे कूटकरके अथवा दां
तहीको ओखली बनाकर भोजनकरै १७ एक दि
न भरके भोजनको राखे अथवा मासभरके किं
वा छमासभरके भोजनको राखे अथवा एक व
र्ष भरके १८

शक्तिपूर्वक दिनमें खाकर रात्रिको भोजन करै
अथवा एक दिन उपवास करै दूसरे दिनमें एक
वेर भोजन करै १९ चांद्रायण व्रतकरै अथवा अ
मावस्या पूर्णमासीके दिन एक वेर यवकी लप्-

नक्तं चान्नं समश्नीयाद्दिवा
वाहृत्य शक्तितः चतुर्थका
लिको वास्या स्याद्वाप्यष्टम
कालिकः १९ चांद्रायण वि
धानै र्वा शुक्ले कृष्णे च वर्-
तयेत् पक्षांतयोर्वाप्यश्नी-
याद्यवागूं क्वथितां सकृत्
२० भूमौ विपरिवर्तेत तिष्ठे
द्वा प्रपदै र्दिनं स्थानासना
भ्यां विहरेत् सवनेषूपयन्नपः
२१

सीको भोजन करै २० ॥ कालमें पक्के आपसे
गिरे जो पुष्प मूल फल तिस करके जीवन
करै २१ ॥

म॰ स्मृ॰ टी॰ भा॰ २॰४

वैखानस अर्थात् वानप्रस्थके मतमें स्थिर होकर केवल भूमिहीमें लोटाकरै अथवा पांवके अग्रभाग से ठाढ होकर दिनभर रहे आसन इसीमें विहार करै त्रिकालमें स्नानकरै २२ क्रमसे तपके बढावत संते ग्रीष्मकालमें पंचाग्निता

ग्रीष्मे पंच तपास्तु स्या द्वर्षा
स्वभ्राव काशिकः आर्द्र वा॰
सास्तु हेमंते क्रमशो वर्द्ध॰
यं स्तपः २२ उपस्पृशं स्त्रिष
वन त्पितॄन् देवांश्च तर्पयेत्
तपश्चरं श्चोग्रतरं शोषये द्दे
ह मात्मनः २३ अग्नीनात्म॰
नि वैताना न्समारोप्य यथा
विधि अनग्नि रनिकेतः स्या
न्मुनिर्मूलफलाशनः २४

ये वर्षाकालमें आवरण रहितस्थानमें रहै हेमंत कालमें गीला वस्त्र परिधान किए रहै २३ त्रिकालस्नान करके देवता पितरोंका तर्पण करै बडी भारी तपकरत संते देहको सुखावै २४ ॥

यथाविधि अग्निहोत्रीके अग्निको अपनी आत्मा में समारोपकरै पश्चात् अग्नि रहित स्थान रहित मूल फलको भोजन करत आत्मको विचारै २५ सुखके अर्थ यत्नना करै ब्रह्मचारी

अप्रयत्नः सुखार्थेषु ब्रह्म·
चारी धराशयः शरणेष्वम
मश्चैव वृक्षमूल निकेतनः
२५ तापसेष्वेव विप्रेषु यात्रि
कं भैक्ष माहरेत् गृहमेधि
षु चान्येषु द्विजेषु वनवा
सिषु २६ ग्रामादाहृत्य वा·
श्नीयादष्टौ ग्रासा न्वने व·
सन् प्रतिगृह्य पुटेनैव पा
णिना शकलेनवा २७ ॥

होकर भूमिशयनकरै वृक्षके मूलमें रहकरै निवासस्थानमें ममता न राखै २६ तपस्वी ब्रा· ह्मणोंसे भिक्षा मांगै और जो गृहस्थ वनवासी । द्विजहैं उनसेभी भिक्षामांगै अथवा ग्रामसे भि

क्षा मांगकर आठग्रास भोजनकरै वनमें रह
त संते दो नामे अथवा हाथमें किम्वा माटी
के वरतनके टुकड़ेमें भिक्षालेवे २८ वनमें
वास करत संते यह संपूर्ण दीक्षाका भी से
वन करै नाना प्रकार उपनिषदमें भई जो ।

एता श्चान्याश्च सेवेत दीक्षा
विप्रो वनेवसन् विविधा ।
श्चौपनिषदी रात्मसंसिद्धये
श्रुतीः २९ ऋषिभि ब्राह्म
णै श्चैव गृहस्थै रेव सेविता
विद्यातपो विवृद्ध्यर्थं शरीर
स्य च शुद्धये ३० अपराजि
तां वास्थाय व्रजेदिशम
जिह्मगः आनिपाता च्छरी
रस्य युक्तोवार्यनिलाशनः
३१

श्रुतिहै उन्होंका सेवन करै आत्माकी सम्यक ।
सिद्धके लिये ३० शरीरकी शुद्धि और तपकी
वृद्धिके लिये इस विद्याका सेवन करै जिस
विद्याका सेवन ऋषि और गृहस्थ ब्राह्मणोंने कि
याहै ।

अथवा जल वायुको भक्षण करत ईशान को
णमें सीधा चला जाय जब तक शरीरका पा
त नहो ॥ ये सब आचरण बडे बडे ऋषि लो
गोंका कहा है उसमे कोई आचरणसे शरीरका

आसां महर्षिचर्याणां त्य-
क्त्वान्यतमया तनुं वीतशो-
कभयो विप्रो ब्रह्मलोके
महीयते ॥ वनेषु च वि-
हृत्यैवं तृतीयं भागमा-
युषः चतुर्थमायुषो भा-
गं त्यक्त्वा संगान्परिव्रजेत्
॥ आश्रमादाश्रमं गत्वा
हुतहोमो जितेन्द्रियः भि-
क्षाबलिपरिश्रान्तः प्रव्रजे-
न्प्रेत्य वर्द्धते ॥

त्याग करके शोकभयको छोडकर ब्रह्मलोक
में पूजित होता है ॥ इस रीतिसे आयुषका ती
सरा भाग वनमें बिताय कर संगको छोडके
आयुषके चौथे भागमें संन्यास ग्रहण करे ॥

211

इंद्रियोंको जीतकर होमको समाप्तकर एक
आश्रमसे दूसरे आश्रममें जाकर भिक्षा और ब
लि कर्मको थका हुआ संन्यास करत संते पर
लोकमें बढताहै तीन ऋणको दूर करके मन
को मोक्षमें लगावे विना तीनो ऋणके दूर॰

ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य मनो
मोक्षे निवेशयेत् अनपाकृ
त्य मोक्षं तु सेवमानो व्रज
त्यधः ३५ अधीत्य विधिव॰
द्वेदान् पुत्रांश्चोत्पाद्य धर्मतः
इष्ट्वा च शक्तितो यज्ञै र्मनो
मोक्षे निवेशयेत् ३६ अन॰
धीत्य द्विजो वेदा ननुत्पा॰
द्य तथा सुतान् अनिष्ट्वा चै
व यज्ञैश्च मोक्ष मिच्छन् व्र॰
जत्यधः ३७

किये मोक्षको जो सेवन करताहै सो नरकमें
जाताहै विधि पूर्वक वेदको पढकर धर्मसे पु
त्रोत्पन्न करके शक्ति पूर्वक यज्ञको करत मो
क्षमें मनको लगावे ३६ ॥

ये तीनों कामके किये बिना मोक्षकी इच्छा क
रते संते नरकमे जाताहै ३७ प्रजापति देवता
की यज्ञ करके संपूर्णको दक्षिणा देकर अग्नि
योंको अपने आत्मामे रखकर ब्राह्मण गृहसे

प्राजापत्यां निरूप्येष्टिं सर्ववे
द सदक्षिणाम् आत्मन्यग्नी
न्समारोप्य ब्राह्मणः प्रव्रजे
द्गृहात् ३७ यो दत्वा सर्वभू
तेभ्यः प्रव्रजत्यभयं गृहात्
तस्य तेजोमया लोका भव
न्ति ब्रह्मवादिनः ३८ यस्मा
यस्मा दण्वपि भूतानां द्वि
जान्नोत्पद्यते भयं तस्य देहा
द्विमुक्तस्य भयं नास्ति कुत
श्चन ३९

निकले अर्थात संन्यास ग्रहण करै ३८ वेद
का पढने वाला जो पुरुष संपूर्ण जीवोंको
अभय देकर गृहसे निकलताहै उसको तेज
रूप लोक मिलताहै ३९ जिस ब्राह्मणसे

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
२११

212

सब जीवोंको थोड़ा भी भय नहींहै इसको प
रलोकमें किसीसे भय नही होती ४० गृहसे
निकला हुआ पवित्रतासे बढाहुआ विचारक
रनेवाला कोईसे प्राप्त जो सुंदर अन्न आदि ति
समें इच्छा रहित संन्यास ग्रहण करे ४१ सं

आगारादभि निष्क्रांता पवि
त्रोपचितो मुनिः समुपोढे
षु कामेषु निरपेक्षः परिव्र
जेत ४१ एक एव चरे नि॰
त्यं सिद्ध्यर्थ मसहायवान्
सिद्ध मेकस्य संपश्यन् न
जहाति न हीयते ४२ अ
नग्नि रनिकेतः स्या ग्राम
मन्नार्थ माश्रयेत् उपेक्षको
ऽसंकुको मुनिर्भाव समा
हितः ४३

हाय रहित अकेला नित्यही फिरै सिद्धिके
लिये एकहीको सिद्धि होतीहै इस बातको
देखता हुआ किसीको त्याग नही करताहै ।
और उसीकोभी कोईनही त्यागकरते ४२ ॥

अग्नि और गृह इन दोनोंसे रहित सब वस्तुओं-
का त्याग करत स्थिर मति ब्रह्ममें चित ल-
गाए हुए अन्नके अर्थ ग्रामका आश्रय करै
अग्निका लक्षण यह है कि जो भिक्षाके अ-
र्थ माटीका पात्र राखे वृक्षके मूलमें शय-

कपालं वृक्षमूलानि कुचे-
ल मसहायता समता चै-
व सर्वस्मि न्नेतन्मुक्तस्य ल-
क्षणं ४४ नाभिनंदेत मर-
णं नाभिनंदेत जीवितम् ।
कालमेव प्रतीक्षेत निर्दे-
शं भृतको यथा ४४ वृक्ष-
मूले न्यसे न्यादं वल्कलंत् ।
जले पिबेत् सत्यपूता वद-
द्वाचं मनः पूतं समाचरेत
४५ ॥

न करै निकाम वस्त्र राखे सहायतासे रहित
जो सब जीवोंमें सम भावराखे ४४ मरण औ-
र जीवन इन दोनोंमें कोईकी इच्छा न करै के-
वलकालहीकी प्रतीक्षा करै जिस रीतिसे ट-
हल स्वामी की आज्ञाकी प्रतीक्षा करताहै ४५

म॰
स्प॰ टी॰
भा
२१३

213

केश हाड आदिका त्याग करनेके लिये दे॰
खके पांव राखे छोटे छोटे जीवोंको बारण
के लिये छानिके जलको पीवे सत्य करके
पवित्र वाणीको बोले संकल्पसे शून्य मन
करके सर्वकाल पवित्र आत्मा होवे ४६ इस

अतिवादांस्तितिक्षेत नावमन्येत कञ्चन नचेमं देहमाश्रित्य वैरं कुर्वीत केनचित् ४७ क्रुध्यन्तं न प्रतिक्रुध्येदाक्रुष्टः कुशलं वदेत् सप्तद्वारावकीर्णाञ्च नवाचमनृतां वदेत् ४८ अध्यात्मरतिरासीनो निरपेक्षो निरामिषः आत्मनैव सहायेन सुखार्थी विचरेदिह ४९

हे मनुष्योंकी निकाम वाणीको सहन करै किसीका अपमान नकरै किसीमें वैर नकरै ४७ अपने ऊपरकोई क्रोधभी करै तो उस पर आप क्रोधनकरै अपनी निंदाभी करै कोई तो आप उसको अच्छी वाणीसे बोले ॥

पांच ज्ञानेन्द्रिय और मन बुद्धि इन सातोंसे गृहीत जो वस्तु है उसीमें वाणीकी प्रवृत्ति है इन सातों द्वारा करके गृहीत जो अर्थ तद्विषयक वाणीको न बोले किंतु ब्रह्ममात्र विषयक वाणीको बोले ब्रह्म विषयसे रहित जो वाणी सो असत्य है इसलिये सत्यबोले सत्यतो ब्रह्मही है इसलिये ब्रह्म विषयक वाणी बोले ४४ आत्मा

नचोत्पात निमित्ताभ्यां न नक्षत्राग विद्यया ना । नुशासन वादाभ्यां भिक्षां लिप्सेत कर्हिचित ४५ न तापसै र्ब्राह्मणै र्वा वयो । भि र्पवा श्वभिः आकी । र्णां भिक्षके वांन्ये रागार मुपसं व्रजेत् ५० ॥

मे रति करता रहे कोई वस्तुकी इच्छा न कर आमिषका त्यागकरे केवल अपनी आत्माही सहाय कर सुखके अर्थ इसलोकमें विचरै ४४ भूमि कंप आदि उत्पात नेत्र फरकना आदि निमित्त नक्षत्र हस्त रेखा इन्हों का फल कथन करके नीतिशास्त्रका उप

देशाकरके कभी ले भिक्षा लेनेकी इच्छा न
करै ५० तपस्वी ब्राह्म पक्षी कुक्कुर भिक्षुक
इन्होंसे युक्त जो गृह है उसको त्यागकरै ५१
केश नख मोछको छीटा किए रहै पात्र
दंड कमंडलु से युक्त रहै संपूर्ण जीवोंको

क्लृप्तकेश नख श्मश्रुः
पात्री दंडी कुसुंभवान् वि
चरे न्नियतो नित्यं सर्वभूं
तान्य पीडयन् ५१ अतैज
सानि पात्राणि तस्य स्यु
र्निं र्व्रणानि च तेषामद्भि
स्मृतं शौचं चमसाना मि
वाध्वरे ५२ अलाबुं दारु पा
त्रं च मृण्मयं वैदलं त
था एतानि यति पात्राणि
मनुः स्वायंभुवो ब्रवीत् ५३

पीडा नदेवै निश्चिंत होकर नित्यही विचरै
छिद्र रहित अतैजस पात्र राखै तिनका शो
च जल माटीसे करै जैसे यज्ञमें चमस पा
त्रका शौच होताहै ५२ ॥

लौकी काठ माटी बांस इन्होंका पात्र राखे
इतनेही यतीके पात्रहै यह मनुजीने क
हा ५४ एक कालमें भिक्षा चरण करै विस्ता
रमें प्रसक्त नहोवे भिक्षामें प्रसक्त नहोवे
भिक्षामें प्रसक्त होनेसे विषयमें भी प्रसक्त

एककालं चरेद्भैक्षं न प्रस
ज्जेत विस्तरे भैक्षे प्रसक्तो
हि यति विषयेष्वपि सज्ज
ति ५४ विधूमे सन्न मुसले
व्यंगारे भुक्त वज्जने वृत्ते
शराव संपाते भिक्षांनित्यं
यति श्चरेत ५५ अलाभेन
विषादीस्या लाभे चैवन
हर्षयेत प्राणयात्रिक मा
त्रः स्या न्मात्रासंगा द्विनिर्ग
तः ५६ ॥

यतीहो जायगा धूम मूसर शब्द अंगार इन्हों
से रहित गृह जब होवे और सब मनुष्य भो
जन कर चुके शराव पतल जूठी निकाला
जाय तब यती भिक्षाके लिये नित्यही जाय
५६

म॰
स्॰ टी॰
भा॰
२११

भिक्षा न मिले तो विषाद न करै और मिले
तो हर्ष न करै जिससे प्राण रहै सो करै देह
आदि जो सामग्री है उसमें आसक्त न होवे अ
र्थात् यह देह, अच्छा है ग्रहण करै ॥१३ पूजासे
अच्छा नहीं है इसको त्याग करै यह देह इसको

215

अभिपूजित लाभेभ्य उग्र
पसैव सर्वशः अभिपूजि
त लाभे स्म यतिर्मुक्तोपि
बध्यते ॥१३ अल्पाहारा व्यवहा
रेण वहुः स्थानासनेन च ।
क्रियमाणानि विषये विं
द्रियाणि निवर्तयेत् ॥१४ इं
द्रियाणां निरोधेन रागद्वे
ष क्षयेन च अहिंसया च
भूताना ममृतत्वाय कल्प
ते ॥१५

वस्त्र मिले उसकी निंदा करै पूजामें प्रसन्न ।
होनेसे मुक्त जो यती है सो बद्ध होजाता है ॥१४
थोडा भोजन करना एकांतमें रहना इससे वि
षयोंसे हरी गई इंद्रियोंको निवृत्त करै ॥१५॥

इन्द्रियोंका निरोध राग द्वेषका क्षय सभ जी
वोंका अहिंसा इन्हों से मोक्षके योग्य होताहै
१८ कर्म दोषसे उत्पन्न मनुष्योंकी गति नरः
कमें पतन यमस्थानमें बडा दुःख इन्होंके

अवेक्षेत गती र्न्टणां कर्म
दोष समुद्भवा निरये चैव
पतनं यातना च यमक्षः
ये ६० विप्रयोग प्रियं चैव
संयोगश्च तथाप्रियैः जर
या चाभि भवनं व्याधिभिः
श्चोप पीडनं ६१ देहा दुत्क्र
मणं चास्मा त्पुनर्गर्भे च स
भवम् योनि कोटि सहस्रे
षु सृती श्चास्यांतरात्मनः ६२

देखे ६१ प्रियका वियोग अप्रियका संयोग
वृद्धावस्थासे अनादर व्याधिसे पीडा देहसे जी
वका निकलना फेर गर्भमें वास कडोर योनि

म॰ में अन्तरात्मा जीवका गमन १३ देहवान् पु॰
स्म॰ टी॰ रुषोंके अधर्मसे उत्पन्न दुःख योग धर्म अर्थ
भा॰ से उत्पन्न अक्षय सुख योग १४ योग करके
२११

211

अधर्मं प्रभवञ्चैव दुःखयो
ग शारीरिणां धर्मार्थं प्रभवं
चैव सुख संयोग मक्षयम्
१३ सूक्ष्मता न्चान्ववेक्षेत यो
गेन परमात्मनः देहेषु च
समुत्पत्ति मुत्तमेष्वधमेषु च
१४ दूषितोपि चरे द्धर्मं यत्र
तत्राश्रमे रतः समः सर्वेषु
भूतेषु न लिंगं धर्म कारः
णम् १५ ॥

परमात्माकी सूक्ष्मता शुभ अशुभ फलकी
भोगके लिये उत्तम मध्यम अधम योनिमें
जीवोंके उत्पत्ति इन्होंकी देखे १५ ॥

कोई आश्रममें रहै और उस आश्रमके धर्मसे
रहित भी हो परंतु सर्वभूतमें ब्रह्म बुद्धि करः
के सम दृष्टि रूप जो धर्म है उसको करै काषा
यांबर आदि धारण जो चिन्ह है सो धर्मका का
रण नहीं है ११ कतक वृक्षका फल अर्थात्

फलं कतक वृक्षस्य यद्यप्य
म्बु प्रसादकं न नाम ग्रहणा
देव तस्य वारि प्रसीदति १२
संरक्षणार्थं जंतूनां रात्रा व
हनि वा सदा शरीरस्या त्य
ये चैव समीक्ष्य वसुधां च
रेत् १३ अह्ना रात्र्या च यां जं
तून् हिनस्त्य ज्ञानतो यतिः
तेषां स्नात्वा विशुद्ध्यर्थं प्र
णायामान् षडाचरेत् १४

निर्मली यद्यपि जलको स्वच्छ करती है तथा
पि नाम ग्रहणसे जल स्वच्छ नहीं होता जब
घसिके निर्मली जलमें डालैंगे तब स्वच्छ होता
१२ जंतुओंके रक्षार्थ रात्रिदिन सर्वकालमें भूमि
को देखकर चले जिसमें कोई जीव न मरै औः
र शरीरको पीडा भी न हो १४ ॥

म॰ स्मृ॰ टी॰ भा॰ २१७

217

जो यती बिना जाने जितने जीवोंको मारता
है उसके निमित्त स्नान करके छ प्राणाया
म करै तब शुद्ध होताहै ६९ व्याहृति प्रणव
करके युक्त प्राणायाम तीनभी विधि पूर्वक

प्राणायामा ब्राह्मणस्य त्रयो
पि विधिवत्कृताः व्याहृति
प्रणवैर्युक्ता विज्ञेयं परमं
तपः ६९ दह्यंते ध्मायमा॰
नानां धातूनां हि यथामः
लाः तथेंद्रियाणां दह्यंते
दोषाः प्राणस्य निग्रहात् ७॰
प्राणायामैर्दहेद्दोषान्धार
णाभिश्च किल्बिषं प्रत्याहा
रेण संसर्गान्ध्यानेनानी
श्वरान्गुणान् ७१ ॥

करै तो वह परम तपहै ब्राह्मणका ७॰ जिस
रीतिसे अग्निमे तपानेसे धातुओंका मल दूर
होताहै तिसी रीतिसे प्राणायाम करके इन्द्रि
योंका दोष दग्ध होताहै ७१ ॥

प्राणायाम करके राग द्वेष आदि दोषको द
हन करना धारण करना अर्थात् ब्रह्ममें म
न लगानासे पापको नाश करना प्रत्याहार
अर्थात् विषयोंसे इंद्रियोंको रोकनासे विष
य मिलापको दूर करना ध्यान करके ईश्वर

उच्चावचेषु भूतेषु दुर्ज्ञेया-
मकृतात्मभिः ध्यानयोगेन
संपश्येद्गतिमस्यान्तरात्म-
नः ७२ सम्यग्दर्शन संप-
न्नः कर्मभिर्न निबध्यते
दर्शनेन विहीनस्तु संसा
रं प्रतिपद्यते ७३ अहिंसये
न्द्रियासंगै वैदिकैश्चैव क
र्मभिः तपसश्चरणैश्चोग्रैः
साधयन्तीह तत्पदं ७४ ॥

संबंधी जो गुण नहीं है अर्थात् क्रोध लोभ
निंदा आदि इनको वारण करना ७२ ऊंच नी
च भूतोंमे इस अंतरात्माकी गतिको ध्यान यो-
ग करके देखे जिस गतिको शास्त्रोक्त संस्का
रसे रहित अंतरात्मा पुरुष कष्टसे भी नहीं देख

म॰
स्क॰ टी॰
भा॰
११८

218

सकते तत्त्व पूर्वक ब्रह्मको देखने वाला पु-
रुषकर्मोंसे बद्धनहीहोता और जैसा नही है
सो संसारको पाताहै १४ अहिंसा इंद्रियोंका
असंग वेदोक्त कर्म बडी तपस्या इन्हो करके
बुद्धिमान लोग ब्रह्मपदको साधन करते है
१५ अब शरीरका वर्णन करतेहै हाडके ।
खंभा नससे वेष्टित रक्तमांससे लेपित च-

अस्थिस्थूणं स्नायुयुतं मांस
शोणित लेपनं चर्मावनद्धं
दुर्गंधि पूर्णं मूत्र पुरीषयोः
१५ जरा शोक समाविष्टं रो
गायतन मातुरं रजस्वल
मनित्यं च भूतवासमिमं ।
त्यजेत् १६ नदी कूले यथा
वृक्षो वृक्षं वा शकुनि ।
यथा तथा त्यजन्निमं देहं
कृच्छ्रा ग्राहा द्विमुच्यते ॥

र्मसे बंधा दुर्गंध सहित मूत्र और विष्ठासे पूर्ण १६
जरा और शोकसे युक्त रोगका घर आतुर अ-
र्थात् क्षुधा पिपासा शीत उष्ण आदिसे कात-
र रजोगुणसे युक्त अनित्य अर्थात् नाशके प्रा-
प्त पृथिवी आदि पंच भूतका गृह ऐसी देह जी
विका रहेहै इसको त्यागकरे अर्थात् जिस

कर्म करके ऐसी देह न मिले उस कर्मको करे ॥

जिसप्रकारसे नदीके तीरको वृक्ष त्याग करता है और वृक्षको पक्षी तिसे प्रकारसे इस देहको त्याग करत संते ब्रह्मका उपासना करने वाला कष्ट रूपी ग्राहसे छूटताहै ७८ ब्रह्मको जानने वाला हितकारमें सहृन अहित को

प्रियेषु स्वेषु सुकृत मप्रियेषु च दुष्कृते विसृज्य ध्यान योगेन ब्रह्माभ्येति सनातनं ७८ यदा भावेन भवति सर्वभावेषु निस्पृहः तदा सुखे मवाप्नोति प्रेत्यचेहच शाश्वतं ७९ अनेन विधिना सर्वां स्त्यक्त्वा संगान् शनैः शनैः सर्वद्वन्द्व विनिर्मुक्तो ब्रह्मण्येवाव तिष्ठते ८० ॥

रीमें दुष्कृतको डालकर ध्यानयोगसे ब्रह्ममें लीन होताहै ७९ जब परमार्थसे विषयोंमें दोष भावना करके सब वस्तुमें इच्छासे रहित होताहै तब इस लोकमें परलोकमें सुखको पाताहै ८० ॥

म॰
स्क॰ टी॰
भा॰
५५

219

इस विधिसे धीरे सभ सर्गोंको त्याग करके का
म क्रोध शीत घाम आदि जो जोड़ा जोड़ा वस्तु
है तिन्होंसे छूटा हुआ ब्रह्महीमें लीन होताहै
८१ जो यह सभ कहाहै कि पुत्र आदिमें मम
ता का त्याग और मान अपमान जो जोड़ा जो
ड़ा वस्तुहै तिन्होंका सहन ये सब वस्तु जीवा
त्माको परमात्मता करके ध्यान संते होताहै

ध्यानिकं सर्व मेवैतत् यदेत
दभिशब्दिते नयनध्यात्मवि
ज्ञाने क्रियाफल मुपाश्न
ते ८१ अधियज्ञं ब्रह्मजंय दा
धिदैवक मेवच अध्यात्मि
कं च सततं वेदान्ताभि हि
तं च यत् ८२ इदं शरण म
ज्ञाना मिद मेव विजानतां
इद मन्विच्छतां स्वर्ग मिद
मानंत्य मिच्छतां ८३ ॥

आत्माको न जानने वाला कोई पुरुष क्रिया
फल अर्थात् ममताका त्याग और जोड़ा जोड़ा
वस्तुका सहन और मोक्षको नही पाताहै ८२
यज्ञदेवता जीव इन सभोंके अधिकार करके जो
कहाहै और वेदांतमें जो कहाहै ब्रह्मका स्वरूप
इन सभोंका प्रतिपादन करनेवाला जो वेद उसका
जपकरे ८३॥

ज्ञानी ओर अज्ञानी स्वर्गका इच्छा करनेवाला ओर मोक्षको इच्छा करनेवाला इन सभोंका प्र बरण अर्थात् उपाय बनानेवाला वेदहीहै ८४ इस क्रम करके जो ब्राह्मण संन्यासी होताहै

अनेन क्रमयोगेन परिव्रज ति यो द्विजः स विधूयेह पा प्मानं परंब्रह्माधिगच्छति ८४ एषधर्मोनुशिष्टोवो यतीनां नियतात्मनां वेद संन्यासि कानांत कर्मयोगं निबोध- त ८६ ब्रह्मचारी गृहस्थ श्च वानप्रस्थो यति स्तथा एते गृहस्थ प्रभवा श्चत्वारः ए- थगाश्रयः ८६ ॥

सो इस लोकमें पापको छोडकर परब्रह्मको प्राप्तहोताहै ८५ भृगुजी कहतेहैं कि हे ऋषि- यो आपलोगोंके चार प्रकारकी जो यतीहै कु टीचरहै बहूदक हंस परमहंस इन सभोंका साधारण धर्मकोकहा अबयतियोंमे विशेष

220

जो जटीचरहैं तिनके असाधारण धर्मोंको ह
निए ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ यती ये सभ
चारो आश्रम पृथक पृथक गृहस्थहीसे उत्प०
न्नहै ८७ क्रमसे यथाशास्त्र ये चारो आश्रमसे
वितहो जिस प्रकार करके वह प्रकार परम

सर्वेपि क्रमशस्त्वेते यथा
शास्त्रं निषेविताः यथोक्त०
कारिणं विप्रं नयंति परमां
गतिं ८७ सर्वेषा मपि चैते
षां वेद स्मृति विधानतः गृ
हस्थ उच्यते श्रेष्टः सत्रीनेता
न्बिभर्तिहि ८८ यथा नदी
नदाः सर्वे सागरे यांति सं
स्थितिं तथैवा श्रमिणः स०
र्वे गृहस्थे यांति संस्थितिं ८९

गतिको पाताहै ८८ वेद और स्मृति इन दोनों
के विधानसे चारो आश्रममे गृहस्थाश्रम श्रेष्ट
है क्यों कि तीनों आश्रमोंके भोजन वस्त्रसे भो
जन पोषण गृहस्थई करताहै ८९ ॥

जिस प्रकारसे सभ नदी नद समुद्रमें जाके ०
स्थितको पातीहैं तिसी प्रकारसे सभ आश्रमें
गृहस्थहीमें स्थितिको पातीहैं ९० चारो आ०
श्रम वाले नित्यही इस लक्षण वाला जो
धर्म इसका सेवन यत्न पूर्वक करें ९१ द
श लक्षण कहतेहैं धृतिः अर्थात् संतोष ०

चतुर्भि रपि चैवैते र्नित्यमा
श्रमभि र्द्विजैः दशलक्षण
कोधर्मः सेवितव्यः प्रयत्न
तः ९१ धृतिः क्षमा दमोस्ते
यं शौच मिंद्रिय निग्रहः
धी विद्या सत्य मक्रोधो दश
कं धर्मलक्षणं ९२ दश ल०
क्षणानि धर्मस्य ये विप्राः
समधीयते अधीत्य चानुव
र्तंते ते यांति परमां गतिं
९३

क्षमा अर्थात् किसी ने अपकारकोणाका
र उसपर अपकार न करना दम अर्थात् वि०
कार करने वाले विषयकोप्राकार मनमें ०
विकार न होगा चोरीका त्याग पवित्रता विषयों
से इंद्रियोंका रोकना शास्त्र आदिका तत्व ज्ञा
न आत्मज्ञान सत्य क्रोधका हेतु रहत संते भी

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
१११

221

क्रोध न करना ९२ ये दश धर्मके लक्षणहैं
इन्होंको जान कर और सेवन करताहै वह
परमगतिको पाताहै ९३ निर्विघ्न होकर इ॰
स धर्मको करताहुआ विधिपूर्वक वेदांतको

दशलक्षणं धर्म मनुतिष्ठ॰
न्समाहितः वेदांतं विधिव
च्छ्रुत्वा संन्यसे दनृणो द्विजः
९४ संन्यस्य सर्व कर्माणि
कर्म दोषानपानुदन् निय
तो वेद मभ्यस्य पुत्रैश्वर्ये
सुखं वसेत् ९५ एवं संन्य
स्य कर्माणि स्वकार्य परमा
स्पृहः संन्यासेनापहत्यैनः
प्राप्नोति परमां गतिं ९६

श्रवणकर तीनों ऋणसे रहितहो करसंन्या॰
स करै ९४ सब कर्मोंको छोड़कर और कर्म
दोषको नाशकर नियम सहित वेदका अभ्या
सकर पुत्रके ऐश्वर्यमें सुखपूर्वक वासकरै ९५

इस रीतिसे सभकर्मोंको छोड़कर आत्मज्ञा
नको प्रधान कर स्वर्ग आदिमें इच्छा छोड़क
र आत्मज्ञानको प्रधान कर संन्यास करके
पापोंको हरकर परमगतिको पाताहै ९६
भृगुजी कहतेहैं कि हे ऋषियो आप लोगों
को ब्राह्मणोंका चार प्रकार का जो धर्महै

एष वोभिहितो धर्मो ब्राह्म
णस्य चतुर्विधः पुण्योक्ष
य फलप्रेत्य राज्ञो धर्मं नि
बोधत ९७

इति मानवे धर्मशास्त्रे भृ
गु प्रोक्तायां संहितायां षः
ष्ठोऽध्यायः ६

उसको कहा वह धर्म पुण्यहै और परलो
कमें इसका फल अक्षयहै अब इसके अनं
तर राजोंका जो धर्महै उसको जानिए ९७
इतिश्री मनुस्मृति भाषा टीकायां जुहलक
भट्ट बाबाजुसारिणा श्रीबाबू देवीदयाल
सिंह कारितायां श्री कंपनी संस्कृत पाठ

शालीय धर्मशास्त्रि गुलजार शर्मा पंडित कृ
तायां षष्ठोध्यायः ६ ॥ जिस प्रकारसे राजों
की उत्पत्ति और परम सिद्धि और आचरण०
है उन सभोंको कहेंगे १ विधिपूर्वक यज्ञोपवी

222

राजधर्मान् प्रवक्ष्यामि यथा
वृत्तो भवेन्नृपः संभवश्च
यथातस्य सिद्धिश्च परमा
यथा १ ब्राह्मं प्राप्तेन संस्का
रं क्षत्रियेण यथाविधिः स
र्वस्यास्य यथान्यायं कर्तव्यं
परि रक्षणं २ अराजके हि
लोकेस्मिन् सर्वतो विद्रुते
भयात् रक्षार्थं मस्य सर्व०
स्य राजान मसृजत् प्रभुः ३

त पाकर क्षत्रिय अपने राज्य वासी सर्वजीव
का संरक्षण यथा न्यायकरै २ चोरो औरके
भय सहित राजा रहित लोकके रक्षाके लि
ये राजा को ब्रह्माने उत्पन्न किया ३ ॥

इंद्र वायु यम सूर्य अग्नि वरुण चंद्र कुबेर इ
न आठोंका सार भूत अंशोंको लेकर राजा
का निर्माण ब्रह्माने किये ४ जिसकारण
से देवतोंके अंशकरके राजा उत्पन्नहै इसी

इंद्रा निलय मार्काणा मं
ग्नेश्च वरुणस्य च चंद्र वि
त्तेशयो श्चैव मात्रा निर्हृ
त्य शाश्वतीः ४ यस्मादेषां
सुरेंद्राणां मात्राभ्यो निर्मि
तो नृपः तस्मादभिभवत्ये
ष सर्वभूतानि तेजसा ५
तपत्या दित्य वच्चैव चक्षूं
षिच मनांसि च नचैनं भु
वि शक्नोति कश्चिदप्यभि
वीक्षितुं ६

कारणसे अपने तेज करके सब जीवोंको प
राजय करताहै ५ सूर्यकी नाईं ताप करता
है देखने वालके नेत्रको और मनको पृ
थिवीमें कोई मनुष्य राजोंके सन्मुख राजोंका

म०
स्मृ० टी०
भा०
२२२

होकर राजाको देह नही सकता ६ प्रभावसे
सोई राजा अग्नि वायु सोम सूर्य धर्म राज कुबेर
व वरुण इन्द्रहै ७ राजा बालक भी हो तो म
नुष्य बुद्धि करके उसका अपमान नही कर

223

सोऽग्निर्भवति वायुश्च सोऽर्कः
सोमः स धर्मराट् स कुबेरः
स वरुणः स महेन्द्रः प्रभाव०
तः ७ बालोऽपि नाव मन्त०
व्यो मनुष्य इति भूमिपः म
हती देवता ह्येषा नर रूपे
ण तिष्ठति ८ एक मेव द०
हत्यग्नि र्नरं दुरुप सर्पिणं
कुलं दहति राजाग्निः स०
पशुद्रव्य संचयम् ९ ॥

ता क्यों कि मनुष्यरूपकरके बड़ा देवता य०
ह राजा स्थितहै ८ अग्निके समीपजो पुरुषजा
ताहै उसको अग्नि जलाताहै राज रूपी अग्नि
पशु द्रव्य सहित कुलको जलाताहै ९ ॥

वह राजा तत्व पूर्वक कार्य शक्ति देश काल
इन सभोंको देखकर धर्म सिद्धिके लिये ना॰
ना रूपको वारंवार धारण करताहै ९ जिस
राजाके प्रसन्नतामें लक्ष्मी वसतीहै और परा
क्रममें विजय और क्रोधमें मृत्यु वसतीहै

कार्यं सो ऽवेक्ष्य शक्तिंश्च
देशकालौ च तत्वतः कु
रुते धर्म सिद्ध्यर्थं विश्वरू
पं पुनः पुनः ९ यस्य प्र॰
सादे पद्माश्री विजयश्च प
राक्रमे मृत्युश्च वसति ॰
क्रोधे सर्व तेजोमयो हि स
१० तं यस्तु द्वेष्टि संमोहा
त्सविनश्यत्यसंशयं तस्य
ह्याशु विनाशाय राजा प्र
कुरुते मनः ११ ॥

सो राजा सर्व तेज मयहै १० मोहसे उसरा
जा का द्वेष जो करताहै सोनिश्चय विना
शको पाताहै उस पुरुषके नाशके लिये
राजा शीघ्र मनको करताहै ११ इस कार॰

ऐसे इष्ट अनिष्टमें जिसधर्मको स्थापन राजा करै उस धर्मका लंघन नही करना १३ ईश्वरने उसराजाकी लिये सभ जीवोंके रक्षार्थ अपना पुत्र ब्रह्म तेज रूप दंडको पहिलेही

224

तस्माद्धर्म्मं यमिष्टेषु सव्य॰
वसे न्नराधिपः अनिष्टं चा
प्यनिष्टेषु तद्धर्मं न विचा
लयेत् १३ तस्यार्थे सर्व भू
तानां गोप्तारं धर्म्म मात्मजं
ब्रह्मतेजोमयं दंड मसृजं॰
त्पूर्व मीश्वरः १४ तस्य स
र्वाणिभूतानि स्थावराणि
चराणि च भयाद्भोगाय
कल्पन्ते स्वधर्मान्न चलन्ति
च १५ ॥

उत्पन्नकिया १४ उस दंडके भयसे स्थावर जंगम सभ जीव भोगके लिये समर्थ होतेहैं और अपने धर्मसे विचल नही सकते १५

तत्व पूर्वक अर्थात् जैसाहै तैसाही देश
काल शक्ति विद्या इन सबको देखकर
यथा योग्य करनेवाले मनुष्योंको इस दंड
को देवै १६ सोई राजा दंड राजाहै और पु
रुषहै इतरा सभस्त्रीहै कार्य शासिकरः

ते देशकालौ शक्तिंश्च वि
द्यां चावेक्ष्य तत्वतः यथा
र्हतः संप्रणये न्नरेष्वन्या
यवर्तिषु १६ सराजा पु
रुषो दंडः सनेता शासि
ता च सः चतुर्णा माश्र
माणां च धर्मस्य प्रतिभूः
स्मृतः १७ दंडः शास्ति प्र
जाः सर्वा दंड एवाभि रक्ष
ति दंडः सुप्तेषु जागर्ति
दंडधर्मं विदुर्बुधाः १८ ॥

ने वाला वहीहै और आज्ञा देनेवालाभी
चारों आश्रमोंके धर्मका प्रतिभूः अर्थात्
जामिन वहीहै सभप्रजोंका रक्षा करने
वाला और आज्ञा देनेवाला वही दंडहै ।

म॰
स्॰ टी॰
भा॰
२२५

225

सोतेहुए पुरुषोंमे जागनेवाला वहीहै उसी
दंडको पंडित लोग धर्म कहतेहैं १८ जब ।
विचार करके अच्छे प्रकारसे दंडधारण कि
या जाताहै तब संपूर्ण प्रजाको रंजन कर।
ताहै और जब विना विचारि वह दंड धारण
किया जाताहै तब संपूर्ण प्रजोंका चारो ओ
रसेनाशकरताहै १९ जब राजा दंडदेने योग्य

समीक्ष्य सधृतः सम्यक स
र्वारञ्जयतिप्रजाः असमी
क्ष्य प्रणीतस्तु विनाशयति
सर्वतः १९ यदिन प्रणयेद्रा
जा दंडं दंडेष्व तंद्रितः शूले
मत्स्यानि वा पक्ष्यन् दुर्ब।
ला न्बलवत्तराः २० अद्या
त्काकःपुरोडाशं श्वावलि
ह्या द्धविस्तथा स्वाम्यं चन
स्यात्कस्मिंश्चित्प्रवर्तेताधरो
त्तरे २१ ॥

पुरुषोंको आलस पाके दंडनदेवे तब बलवा
न लोग दुर्बलोंको पकाय डाले जैसे शूलके
ऊपर मछलीपकतेहै २० दंडनहोवे तो देवतोंके
भागको काग भोजन करडालेगा और कुक्कुर
हविको भोजन करेगा स्वामीका भाव किसीमें

न रहैगा उलटा पलट सभ होजावेगा २१

जितने जीवहैं सो सभदंडके योग्यहैं पवित्र
पुरुष दुर्लभहैं दंडके भयसे सभ जीव भोग
के लिये समर्थ होतेहैं ११ देव दानव गंधर्व
राक्षस पक्षी ये सभ दंडही करके भोगके प्र-

सर्वो दंडजितो लोको दुर्ल
भो हि शुचिर्नरः दंडस्य हि
भयात्सर्वं जगद्भोगाय क
ल्पते ११ देव दानव गंधर्वा
रक्षांसि पतगोरगाः तेपि
भोगाय कल्पंते दंडेनैव
निपीडिताः १२ दुष्येयुः स
र्ववर्णाश्च भिद्येरन्सर्व से-
तवः सर्वलोक प्रकोपश्च
भवे दंडस्य विभ्रमात् १४

र्थ समर्थ होतेहैं १२ दंडके विभ्रमते अर्था-
त् दंडके योग्यको न दंडदेनेसे और दंडके
योग्य जो नहीं है उनको दंड देनेसे सम्पूर्ण
वर्ण दोषी हो जायगा १४ जहाँ श्यामव-

म॰ स्मृ॰ टी॰ भा॰ ११६

226

णे लाल नेत्र वाला पापका नाश करने वा
ला धर्म अर्थ काम तीनोंमें पंडित भले प्रका
रसे जाननेवाला जो राजाहै सो उस दंडका ।
देनेवाला होताहै दंड घूमताहै तहां प्रजोंकी
मोह नहीं होता परंतु जबदंड देनेवाला पुरु
ष अच्छी रीतिसे दंडको देवे २५ सत्य बोल

यत्र श्यामो लोहिताक्षो दंड
श्चरति पापहा प्रजास्तत्र ।
न मुह्यंति नेताचेत्साधु प
श्यति २५ तस्याहुः संप्र।
णेतारं राजानं सत्यवादि।
नं समीक्ष्यकारिणं प्राज्ञं
धर्मकामार्थकोविदं २६
तं राजा प्रणयन्सम्यक् त्रि।
वर्गेणाभिवर्द्धते कामात्मा
विषमः क्षुद्रो दंडेनैव निह
न्यते २७

नेवाला विचार करनेवाला धर्म अर्थ कामती
नोंमें पंडित भले प्रकारसे जाननेवाले जो रा
जाहै सो उस दंडको देनेवाला होताहै २६ उस
दंडको देते सते राजा धर्म अर्थ कामसे बढताहै
जितने कामी क्रूर नीचहैं तितने दंडहीसे मारेजा
तेहैं २७

बड़ा तेजस्वी दंडहै जिसका धारण शास्त्रसे रहित राजा लोग नहीं कर सकतेहैं सो दंड धर्मसे चलित जो राजाहै उसको और उस की बांधवोंके मारताहै २८ तदनंतर किला राज्य स्थावर जंगम रूप लोक अंतरिक्षमें

दंडोहि सुमहत्तेजो दुर्धरश्चा कृतात्मभिः धर्माद्विचलितं हंति नृपमेव सबांधवं २८ ततो दुर्गं च राष्ट्रं च लोकं च स चराचरं अंतरिक्ष गतांश्चैव मुनीन्देवांश्च पीडयेत् २९ सो सहायेन मूढेन लुब्धेनाकृत बुद्धिना न शक्योन्यायतो नेतुं सक्तेन विषयेषु च ३० ॥

स्थित जो मुनि देवता इन सभको पीड़ा करताहै २९ सहायसे रहित मूढ लोभी मूर्ख विषयोंमें सक्त जो राजाहै सो न्याय पूर्वक उस दंडको नहीं दे सकताहै ३० पवित्र सत्य वा

दी शास्त्रकी रीतिसे चलनेवाला सहाय सहि॰
त बुद्धिमान ऐसा जो राजाहै सो उस दंडको दे
सकताहै ३१ अपने राज्यमें न्यायके अनुसारसे
चले और शत्रोंको बड़ा दंड देवे स्वभावसे स्नेह
पात्र मित्रोंमें सीधारहै थोडा अपराधकरने॰

अविना सत्यसंधेन यथा
शास्त्रानुसारिणा प्रणेतुं॰
शक्यते दंडः सुसहायेन
धीमता ३१ स्वराष्ट्रे न्याय
वृत्तःस्या द्भृशदंडश्च शत्रु॰
षु सुहृत्स्वजिह्मःस्निग्धेषु
ब्राह्मणेषु क्षमान्वितः ३२
एवं वृत्तस्य नृपतेः शिलो
ञ्छेनापिजीवितः विस्ती॰
र्यतेयशोलोके तैलबिंदु॰
रिवांभसि ३३ ॥

वाले ब्राह्मणोंमे क्षमा सहित रैहे ३२ इसी री
तिसे रहताहुवा राजा छिल उञ्छसेभी जीवन
करताहो तो उसका यशलोकमें फैलताहै
जैसे जलमें तेलका बिंद फैलताहै ३३ ॥

इससे विपरीत जो राजाहै ग्रौर ग्रात्माको ।
जीता नहींहै उसका यश लोकमें फैलता
नहीं जैसे जलमें घीका बिंद फैलता नहीं
है नृप ग्रपने ग्रपने धर्मोंमें रहने वाले जो
वर्ण ग्रौर ग्राश्रमहैं उन्होंके रक्षाके लिये

ग्रतस्तु विपरीतस्य नृपते
रजितात्मनः संक्षिप्यते य
शो लोके घृत बिंदु रिवां
भसि नृप स्वे स्वे धर्मे निवि
ष्टानां सर्वेषा मनुपूर्वशः
वर्णाना माश्रमाणां च रा
जा सृष्टोभिरक्षिता नृप ते
न यद्यत्सभृत्येन कर्तव्यं ।
रक्षता प्रजाः तत्तेहं प्र
वक्ष्यामि यथावदनुपूर्वशः
२४

राजा उत्पन्न किए गए नृप भृगुजी कहतेहैं कि
हे ऋषिलोगो भृत्य सहित प्रजोंका रक्षा कर
नेवाले राजोंके करने योग्य वस्तुओंका ज्यो
का त्यों क्रमसे ग्रापलोगोंसे हम कहेंगे २४

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
११६

राजा प्रातःकाल उठके ऋग्यजुः सामवेदका अर्थ जाननेवाले ब्राह्मणोंकी उपासना करै और उनकी आज्ञामें रहै ३७ पवित्र वृद्धवेद के पढने वाले ब्राह्मणोंकी नित्यही सेवाकरै ऐसा राजा राक्षसोंसे भी पूजाका पाताहै

228

ब्राह्मणान्पर्युपासीत प्रात
रुत्थाय पार्थिवः त्रैविद्य
विद्वान् विदुष स्तिष्ठेत्तेषां
च शासने ३७ वृद्धांश्च नि
त्यं सेवेत विप्रान्वेदविदः
शुचीन् वृद्धसेवीहि सततं
रक्षोभि रपिपूज्यते ३८ ते
भ्योधिगच्छे द्विनयं विनी
तात्माभि नित्यशः विनी
तात्माहि नृपति र्न विनश्य
ति कर्हिचित ३९ ॥

नित्यही स्वभावसे उत्पन्न बुद्धि जो इन्द्रो करके नम्र आत्मा यद्यपिहै तथापि नम्र होकर उन ब्राह्मणोंसे विनयका अभ्यासकरै अधिक विनयसे अर्थ ऐसी राजा कभी नष्ट नही होता ३९
और त्रय्यर्थशास्त्रके ज्ञानसे उत्पन्नभी बुद्धि

राज्य सामग्री सहित बहुत राजालोग अविनय
से भ्रष्ट हुए हैं और वनमें रहने वाले राजालोग
विनयसे राज्यको पाए हैं ४० वेण नहुष यव-
नका पुत्र सुदास सुमुख निमि ये सभ अवि-

बहवो विनया न्नष्टा राजा
नः सपरिछदाः वनस्था अ
पि राज्यानि विनया त्प्रतिपे
दिरे ४० वेणो विनष्टो विन
या न्नहुष श्चैव पार्थिवः
सुदासो यवन श्चैव सुमु-
खो निमिरेवच ४१ पृथुस्तु
विनया द्राज्य प्राप्तवान्मनु
रेवच कुवेर श्च धनैश्वर्यं-
ब्राह्मण्यं चैव गाधिजः ४२

नयसे नष्ट हुए ४१ पृथु मनु ये दोनो राज्यको
कुवेर धनैश्वर्यको विश्वामित्र ब्राह्मण जाति
को विनयसे प्राप्त ४२ तीन वेदके जाननि वा-

ले ब्राह्मणोंसे तीन वेदका पाठ और अर्थको दंडनीतिके जाननेवालेसे नीति अर्थात् अर्थ॰ शास्त्रको तर्क विद्या जानने वालेसे न विद्या अर्थात् भूत आदिकी उक्ति प्रयुक्तिकी उपयोग वालीको ब्रह्म विद्याके जानने वालेसे ब्रह्मविद्या अर्थात् उदयमें और नाशमें हर्ष और ।

त्रैविद्येभ्य स्त्रयीं विद्यां दंड
नीतिं च शाश्वतीम् आन्वी॰
क्षिकीं चात्मविद्यां वार्तारंभां
श्च लोकतः ४३ इंद्रियाणां ।
जये योगं समातिष्ठे द्दिवानि
शं जितेंद्रियो हि शक्नोति
वशे स्थापयितुं प्रजाः ४४
दश कामसमुत्थानि तथाष्टौ
क्रोधजानि च व्यसनानि दुरं
तानि प्रयत्नेन विवर्जयेत् ४५

विषाद करनेवाले नाशकरनेवालीको धन मि॰ लनेकी उपायके जानेवाले खेती हरसे कृषि वाणिज्य पशु पालन आदि वार्ताको सीखे ४३ रात्रिदिन इंद्रियोंके जीतनेमें उद्योगको रोखे जि तेंद्रिय राजा संपूर्ण प्रजोंको अपनेवशरखने सकता है ४४

८५

कामसे उत्पन्न वस्तुमें प्रसक्त होनेसे राजा
धर्म और अर्थसे रहित होताहै और क्रोधसे
उत्पन्न वस्तुमें प्रसक्त होनेसे आप नष्ट होता
है ४६ शिकार और पासा इन्होंका खेलना
दिनमें सोना परका दोष कहना स्त्रीका स
वा सुरापानसे मद नाचाना गाना बजाना

कामजेषु प्रसक्तो हि व्यस
नेषु महीपतिः वियुज्यते
ऽर्थधर्माभ्यां क्रोधजेष्वात्म
नैव तु ४६ मृगयाक्षो दि
वा स्वप्नः परिवादः स्त्रियो
मदः तौर्यत्रिकं वृथाट्या
च कामजो दशको गणः
४७ पैशून्यं साहसं द्रोह ई
र्ष्यासूयार्थदूषणं वाग्दण्ड
जं च पारुष्यं क्रोधजोपि ग
णोऽष्टकः ४८ ॥ दशका

वृथा घोमनाये
मसे उत्पन्नहै ४७ विना जाना दोषका कहना
बलसे काम करना कपटसेवध दूसरेको गु
णको नसहना परके गुणमें दोष निकाल
ना अर्थका चोरना अथवा देने वस्तु योग्य
को न देना वाणीसे कठोर बोलना दंडमें ना

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
११॰

डन करना ये आठ क्रोधसे उत्पन्नहैं ४८ दो॰
नों गणोंका मूललोभहै इसको यत्नसे जी
तना इसके जीतनेसे दोनों गण जीते जाते
हैं इस बातको कवियोंने कहाहै ४९ काम
से जायमान दश वस्तुमें मदिरा पास पासा

तयोरप्येतयोर्मूलं यं सर्वे
कवयो विदुः तं यत्नेन ज॰
येल्लोभं तज्जावेतावुभौ ग
णौ ४९ पानमक्षाः स्त्रियश्चै
व मृगया च यथाक्रमं एत
त्कष्टतमं विद्या च्चतुष्कं का
मजे गणे ५०. दंडस्य पातने
चैव वाक्पारुष्यार्थ दूषणे
क्रोधजेपि गणेविद्या त्कष्टमे
तत्त्रिकं सदा ५१ ॥

खेलना स्त्री सेवन शिकार खेलना ये चारक
मसे अर्थात पूर्व पूर्व बहुत कष्टहै ५०. क्रो
धसे जायमान आठवस्तुमें देहसे मारना ला
गी देना देने योग्य वस्तुको न देना ये तीन ब
हुत कष्टहै ५१ ॥

ये सात सर्वत्र रहनेवालेहैं इनमें पहिला पहि
ला अतिकष्टहै ५२ ये अठारही व्यसन कहाः
तेहैं व्यसने और मृत्युमें व्यसन कष्टहै क्योंकि
व्यसन वाला नरकमें जाताहै और व्यसनसे
रहित मरके स्वर्गमे जाताहै इसलिये व्यसन

सप्तकस्यास्य वर्गस्य सर्वत्रैवा
नुषंगिणः पूर्वं पूर्वं गुरुतरं
विद्याद्व्यसनमात्मवान् ५२
व्यसनस्य च मृत्योश्च व्यसनं
कष्टमुच्यते व्यसन्यधोधो व्र
जति स्वर्यात्यव्यसनी मृतः ५३
मौलान् शास्त्रविदः शूरां
लब्धलक्षान् कुलोद्गतान् स
चिवान्सप्तचाष्टौवा प्रकुर्वीत
परीक्षितान् ५४

मे मृत्यु अच्छीहै ५३ कुलीन अर्थात् पितृ पिता
महके क्रमसे सेवा करने वाले शास्त्रके जानने
वाले शूरलब्ध लक्ष अर्थात् जिसका फेंका बा
ण और शूल निशानाको नही छोडता अच्छे कु
लमें उत्पन्न ऐसे मंत्री परीक्षा लेके सात वा आ

ठरावे ५४ जो सहज काम है सोभी अकेलेसे
नहीहोसकता और राज्य कार्य्य बडाभारी है ।
सो किस प्रकारसे अकेलेसे सधै ५५ इन मंत्रि
योंके साथ नित्यही मंत्रमें चोराने योग्य नही
ऐसाजो मिलाप विगाडस्थान अर्थात् दंड को
श पुर राज्य तिसमें हाथी गोडा रथ प्यादा इ॰

अपियत्सुकरंकर्म तदप्येके
न दुष्करं विशेषतो सहाये
न किंत राज्य महोदयं ५५
तैःसार्द्धं चिंतये नित्यं सामा
न्यं संधिविग्रहं स्थानं समुद
यं गुप्तिं लब्ध प्रशमनानि च
तेषां स्वंस्व मभिप्राय मुप॰
लभ्य पृथक् पृथक् सम
स्तानांच कार्येषु विदध्या
द्धितमात्मनः ५७ ॥

होंको दंडकहतेहै तिसका पोषण समुदय अ
र्थात् धान्य हिरण्य आदिका उत्पत्तिस्थान गुप्ति
अर्थात् आत्मरक्षा राज्यरक्षा मिले धनको स
त्पात्रमें दान इन सभको चिंतनकरे ५६ सभ॰
मंत्रियोंके अभिप्रायको पृथक् पृथक् समझ
के अथवा एकही वेर सभोंके अभिप्रायको जा
नकर कार्यमें अपने हितको करे ५७ ॥

सबमंत्रियोंमे जो श्रेष्ठहो उसके साथ छ गुणसे
युक्त परम मंत्रको चिंतनकरै ५८ विश्वासको
पाकर उसी ब्राह्मणको निश्चयकरके कार्यका

सर्वेषांतु विशिष्टेन ब्राह्मणे-
न विपश्चिता मंत्रयेत्परमं मं
त्रं राजा षाड्गुण्य संयुतं ५८
नित्यं तस्मिन्समाश्वस्तः सर्व
कार्याणि निःक्षिपेत् तेनसा
र्द्धं विनिश्चित्य ततः कर्म स
मारभेत् ५९ अन्यानपि प्रकु
र्वीत शुचीन् प्राज्ञान वस्थिता
न् सम्यगर्थ समाहर्तॄनमा-
त्यान् सुपरीक्षितान् ६० ॥

प्रारंभ करै ५९ पवित्र जाननेवाले अच्छे प्रकार
से द्रव्यको प्राप्तकरनेवाले सुंदर रीतिसे परी-
क्षित ऐसे और भी मंत्रीको राखै ६० ॥

जितने मनुष्योंसे अपना अर्थसिद्धहोवे तितने आ
लस्य रहितकार्यमें दक्षक्रियामें उत्साह युक्त म
नुष्यको राखे ६१ उन मंत्रियोंमें चतुर कुलीन
पवित्र निस्पृहहै उनको धनोत्पत्ति स्थानमें रा
खे जो डर पोकहतेहैं उनको गृहके भीतर राखे
६२ सब शास्त्रके जानने वाला इंगित अर्थात्

निवर्त्तेतस्य यावद्भिरितिक
र्त्तव्यतान्नृभिः तावतो तन्द्रिता
न् दक्षान् प्रकुर्वीत विचक्षण
न् ६१ तेषामर्थे नियुञ्जीत शू
रान्दक्षान् कुलोद्गतान् शुचीं
नाकरकर्मान्ते भीरूनन्त
र्निवेशने ६२ दूतंचैव प्रकुर्वी
त सर्वशास्त्रविशारदं इंगिता
कारचेष्टज्ञं शुचिं दक्षं कुलो
द्गतम् ६३ ॥

अभिप्रायका जानने वाला जो वचन स्वर आदि
आकार अर्थात् देह धर्म आदि प्रसन्नता अप्रस
न्नता चेष्टा अर्थात् हाथ पांवका हेलना इन स
भोंका जाननेवाला पवित्र दक्ष कुलीन ऐसे
को दूत करना स्वामीमें अनुराग सहित हो
पवित्र दक्ष स्मृतिमान् देशकालका जानने

वाला अच्छी शरीरवालाडरसेरहित बोलनेवाला ऐसा दूत राजाको अच्छाहै ६४ मंत्रीके अधीन दंडहै दंडके अधीन विनयहै राजाके अधीन । कोश अर्थात् खजाना और राज्यहै दूतके अ

अनुरक्तः शुचिर्दक्षः स्मृतिमा न्देशकालवित् वपुष्मान् वी तभी वाग्मी दूतोराज्ञः प्रश स्यते ६४ अमात्ये दंड आयत्तो दंडे वैनयिकी क्रिया नृ पतौ कोशराष्ट्रे च दूते संधि विपर्ययौ ६५ दूत एवहि सं धत्ते भिनत्येव च संहतान् दूत स्तत्कुरुते कर्म भिद्यंते येन वा नवा ६६ ॥

धीन मिलाप और बिगाडहै ६५ दूतहीबि गडे को मिलाताहै ६५ और मिलेको बिगाडताहै जिससे मिलाप और बिगाडहोताहै वहका म दूतही करताहै ६६ ॥

राजाका इंगित आकार चेष्टाकरके इतनोंमें राजाके करने योग्य वस्तुको इतनेही जाने १७ दूसरेराजाके मनकी बात इसके तैसा यत्नकरै जिससे अपने राजाको पीडा नहोवे १८ थोडा जल तृण वाला ब

सविग्रहस्य कल्पेत निगूढें गित चेष्टितैः आकारमिंगिते चेष्टां कृत्स्नेष्व चिकीर्षिते १७ बुद्धा च सर्वं तत्त्वेन परराज चिकीर्षितं तथा प्रयत्नमातिष्ठे यथात्मा न पीड्येत १८ जांगले सस्यसम्पन्न मार्यप्राय मनाविले रम्यमानत सामंत स्वाजीव्य देशमावसेत १९

हुत वायवाम अन्नवाला जो देशसो जांगलकहोता है धर्म युक्त जलसे सहित रोग आदिसे रहित फल पुष्पलता आदिसे मनोहर चारो ओरके मनुष्यानमु है जिस देशमे सुलभहै खेती वाणिज्य आदियन मिलनेके उपाय जिससे ऐसे देशमें वासकरै १९

चारो ओर जलसे रहित टेढी भूमिवाला चारो
ओर जलसे वेष्टित चारो ओर वृक्षवाला चारों
ओर लडोंका मनुष्यवाला चारो ओर पर्वत वा
ला ये छः दुर्गहैं अर्थात् किलाहै ऐसे देशमे
वासकरै जिसमे दूसरे राजाके सेना न आसके
७० तिसमें जो चारो ओर पर्वत वालाहै उसदे

धन्वदुर्गं महीदुर्गं मब्दुर्गं वा
र्क्षमेव वा नृदुर्गं गिरिदुर्गं वा
समाश्रित्य वसेत्पुरम् ७० सर्वे
ण तु प्रयत्नेन गिरिदुर्गं स
माश्रयेत् एषां हि बाहुगुण्ये
न गिरिदुर्गं विशिष्यते ७१ त्री
ण्याद्यान्याश्रितास्त्वेषां मृग॰
र्ताश्रयाप्चराः त्रीण्युत्तरा॰
णि क्रमशः प्लवंगमनराम
राः ७२ ॥

शमें प्रयत्नकरके वासकरै अर्थात् जबसे वह
मिलै तबसे दूसरे देशमें वासनकरै इन सभोमें
वह बहुत गुणकरके बडाहै ७१ आदिजो तीनहै
सो मृग मूस जलचर इन्हों करके क्रमसे आश्रि
तहै परजो तीनहै सो वानर मनुष्य देवता इन्हों
करके क्रमसे आश्रितहै अर्थात इन्होंका यह

किलाहै ७२ जिसप्रकारसे मृगआदि अपने किला
में रहनेसे शत्रुसे पीडाको नहीपाते तिसी प्रकार
से किलामें रहनेसे राजा शत्रोंसे पीडाको नही पा
ता ७३ दुर्गमे रहनेवाला एक धनुर्द्धर नीचे रहने
वाले सबसे और किलामें रहनेवाला सब नीचे र॰

यथा दुर्गाश्रिता नेता न्नोप
हिंसंति शत्रवः तथारयो न
हिंसंति नृपं दुर्गं समाश्रितं ७३
एकः शतं योधयति प्राकार
स्थो धनुर्धरः शतं दश सह॰
स्राणि तस्माद्दुर्गं विधीयते
७४ तत्स्यादायुध संपन्नं धन
धान्येन वाहनैः ब्राह्मणैः शि
ल्पिभिर्यंत्रै यवसेनोदकेन॰
च ७५ ॥

हनेवाले दश हजारसे युद्धकर सकताहै इसलिये
दुर्गकरनेका उपदेश करतेहै ७४ आयुध धन धान्य
वाहन ब्राह्मण कारीगर यंत्र घास जल इन्होंकरके
वहदुर्ग युक्त रहै ७५ ॥

उसके मध्यमें पृथक् पृथक् स्त्री देवता हथिया
र अग्नि इन्होंका गृह खाईसे युक्त सब ऋतुका
फल पुष्प सहित स्वेतवर्ण वापी आदि जल
युक्त वृक्ष सहित अपना गृह बनावे ७६ उ
सगृहमें बैठकर अच्छे कुलमें उत्पन्न हृदय
प्रियरूप गुणसहित लक्षण युक्त अपने वर्ण-

तस्य मध्ये सुपर्याप्तं कारये
द्गृहमात्मनः गुप्तं सर्वर्तुकं
शुभ्रं जलवृक्षसमन्वितं ७६
तदध्यास्योद्वहेद्भार्यां सवर्णां
लक्षणान्वितां कुले महति
संभूतां हृद्यां रूपगुणान्वि-
तां ७७ पुरोहितं च कुर्वीत
वृणुयादेव चर्त्विजः तेस्य
गृह्याणि कर्माणि कुर्युर्वैता
निकानि च ७८ ॥

की जो स्त्री उससे विवाह करै ७७ पुरोहित
और ऋत्विक इन्होंका वरण करै ये दोनों इस
राजाका अग्निहोत्र आदि गृहके कर्मको करै
७८ बहुत दक्षिणासहित नाना प्रकारके य-

ज्ञको करै धर्मके अर्थ ब्राह्मणोंकी स्त्री गृह शय्या
आदि भोग सुवर्ण वस्त्र आदि धनको देवै ७९ रा
ज्यसे अपना भाग वर्ष भरका लेवै यथार्थकारी म
नुष्यों करके वेदमें जो कहाहै उसको करै मनु

यजेतराजा क्रतुभि विविधै
रामदक्षिणैः धर्मार्थं चैव वि
प्रेभ्यो दद्याद्भोगान्धनानिच
७९ सांवत्सरिक माप्तैश्च रा
ष्ट्रादाहारयेद्बलिम् स्याच्चा
म्नाय परो लोके वर्तेत पितृ
वन्नृषु ८० अध्यक्षान्विविधा
न् कुर्यात् तत्र तत्र विपश्चितः
तेस्यसर्वाण्यवेक्षेरं न्नृणां
कार्याणि कुर्वतां ८१ ॥

ष्योंमें पिताकी नाईं रहै तहां तहां एक एक अधिका
री पंडित नाना प्रकारका राखै वे सब इसराजाके का
म करने वालेके कामको देखै ८१ ॥

गुरुकुलसे पढके पिताके घर आए जो ब्राह्म
णहैं तिनके पूजाकरै वहब्राह्मण इस राज्या
का अक्षयनिधिहै ८२ ब्राह्मणोंमें स्थापित जो
निधिहै सो अक्षयहै और उसको चोरलोग
चोराय नहीं सकते शत्रुलोग हरण नहीं

आवृत्तानां गुरुकुलाद्विप्रा
णां पूजको भवेत् नृपाणा
मक्षयो ह्येष निधिर्ब्राह्मोऽभि
धीयते ८२ नतंस्तेना नचा
मित्रा हरंति नच नश्यति त
स्माद्राज्ञा निधातव्यो ब्राह्म
णेष्वक्षयो निधिः ८३ न
स्कंदते न व्यथते न विनश्य
ति कर्हिचित् वरिष्ठ मग्नि
होत्रेभ्यो ब्राह्मणस्य मुखे हु
तम् ८४

कर सकते इसलिये ऐसेही स्थानमें निधिका
स्थापन राज्याकरै ब्राह्मणके मुखमें जो होम
किया गया सो न स्रवै न व्यथाकरै न नष्टहो
वे और वह अग्नि होत्रसे बडाहै ८४ ॥

ब्राह्मणसे भिन्न क्षत्रिय आदिके देनेसे जितनादे उत
नाही मिलताहै मूर्ख ब्राह्मण देनेसे दूनामिलता
है एकशाखा पढने वालेके देनेसे लक्षगुण मिल
ताहै मूर्ख समस्त वेद पढने वालेके देनेसे अनं
त फलहोताहै प्रतिग्रह करने वालीके बडाईमें

स मम ब्राह्मणेदानं द्विगुणं
ब्राह्मण ब्रुवे प्राधीते शतसा
हस्रं मनंत वेदपारगे ८५
पात्रस्यहि विशेषेण श्रद्दधा
न तयैवच अल्पं वा बहु वा
प्रेत्य दानस्यावाप्यते फलं ८६
समोत्तमाधमै राजा त्वाहूतः
पालयन्प्रजाः न निवर्तेत
संग्रामात् क्षात्रधर्म मनुस्म
रन् ८७ ॥

और श्रद्धासे दानका फल थोडा वा बहुत परलोक
में मिलताहै ८६ प्रजाको पालन करत क्षत्रियध
र्मको मारण करत युद्धके अर्थ अपनेसे समउत्त
म अधम राजाकरके बुलाया जाय तो न फिरै ८७

संग्राममें स्थिर रहना प्रजाका पालनकरना ब्रा
ह्मणकी सेवा करना यह तीनों कर्म राजोंका
परम कल्याण करन हारे हैं ८८ संग्राममें पर-
स्पर मारतेहुए नभागनेसे मरेहुए स्वर्गमें जा-
तेहैं ८९ विषसे बुझाए हुए शास्त्रउपर काटर

संग्रामेष्वनिवर्तित्वं प्रजानां
चैव पालनं शुश्रूषा ब्राह्मणा
नांच राज्ञां श्रेयस्करं परं ८८
आहवेषु मिथोन्योन्यं जिघां
सन्तो महीक्षितः युध्यमानाः
परंशक्त्या स्वर्गंयान्त्य पराङ्मुखाः
८९ नकूटै रायुधैर्हन्या युध्य
मानो रणे रिपून् न कर्णिभि:
नापि दिग्धैः नाग्नि ज्वलित
तेजनैः ९०

हे भीतर लोह रहे जिसमें ऐसा जो हाथिआरक
र्णोंके आकारफल जिसकाहै ऐसा जो बाण अ
ग्निसे तपाहुआ जो शास्त्र इन्हों करके रणमें शत्रु
ओंके लड़ाई करते हुए न मारे ९० भूमिमें स्थि-

न नपुंसक हाथ जोडनेवाला खुला केशवाला न
माराहूं ऐसाकहनेवाला और जो बैठाहै इन सभ॰
को नमारना ९१ सूताहै कवच अर्थात् बकतरसे
रहितहै आयुध और युद्ध इन्होंसे रहितहै देखने

नच हन्यात्स्थलारूढं नक्ली
वे न कृताञ्जलिं नमुक्तकेश
मासीनं नतवास्मीतिवादि॰
नं ९१ न सुप्तं विसन्नाहं
ननग्नं न निरायुधं नायुध्यमा
नं पश्यंतं न परेण समागतं
९२ नायुधव्यसनं प्राप्तं ना
र्तं नातिपरिक्षितं न भीतं
न परावृत्तं सतान्धर्ममनु॰
स्मरन् ९३॥

वाला दूसरे के साथ आयाहै ९२ टूटा शस्त्रवाला
पुत्र शोक आदिसे दुःखी बहु प्रहारसे व्याकुल
डरा हुआ युद्धसे भागाहुआ इनसभको सज्जनोंके
धर्मको स्मरणकरत संते न मारना ९३॥

जो डराकरके संग्राममें दूसरे के शस्त्रका घावपाके भागके मारागयाहै सो अपने स्वामीके पापको पाताहै ५४ और उसकाजो सुकृतहै परलोकार्थ अर्जित उसको उसका स्वामी पाताहै ५५

यस्तु भीतः पराहृत्तः संग्रामे हन्यते परैः भर्तु र्यद्दुष्कृतं किंचि त्तत्सर्वं प्रतिपद्यते ५४ यच्चास्य सुकृतं किंचि दमुत्रार्थमुपार्जितं भर्ता तत्सर्व मादत्ते पराहृत्त हतस्य च ५५ रथाश्वं हस्तिनं छत्रं धनधान्यं पशून् स्त्रियः सर्व द्रव्याणि कुप्यं च यो यज्जयति तस्य तत् ९६ ॥

रथ घोरा हाथी छाता धन धान्य पशु स्त्री संपूर्ण द्रव्य कुप्य अर्थात् सोना चांदीसे भिन्न सीसा पीतल आदि इन सभको जो जीते सोई पाताहै ९६ राजाको उद्धार अर्थात् जीती हुई द

म॰ स्मृ॰ टी॰ भा॰ २३८

थमें जो उत्तम द्रव्य है सोना चांदी भूमि आदि देवै
यह वेदमें कहा है राजा सब योधोंको उस वस्तु
को देवै जो कि सभों ने मिलके जीता है ९७ निं
द रहित नित्य यह योधोंको धर्मके कहा क्षत्रिय

238

राज्ञश्च दद्युरुद्धार मित्येषा वै
दिकी श्रुतिः राज्ञा च सर्वयो
धेभ्यो दातव्य मपृथग्जिते ९७
एषोऽनुपस्कृतः प्रोक्तो योधध
र्मः सनातनः अस्मान्न च्यव
उर्मान्नाः
ते—— क्षत्रियो घ्नन् रणे रि
पून् ९८ अलब्धं चैव लिप्सेत
लब्धं रक्षेत्प्रयत्नतः रक्षितं
वर्द्धयेच्चैव वृद्धं पात्रेषु निः
क्षिपेत् ९९

लोग रणमें शत्रुओंका नाश करत
न होवें जो वस्तु मिली नहीं है इस धर्मसे रहित
इच्छा करै और जो मिली है उसके मिलने की
करै रक्षित वस्तुको बढ़ावे बढ़ी वस्तुको सत्पात्रमें उसका यत्नपूर्वक रक्षा
स्थापन करै ९९

पुरुषार्थ जो स्वर्ग आदि इसका प्रयोजन यही चा
र प्रकारहै इसको जाने और नित्यही आलस रहि
त इसका सेवनकरै १०० अलब्ध वस्तुका इच्छाकरै
दंड करके लब्धवस्तुका रक्षाकरै रक्षाकरके देखने
से रहित वस्तुको बढावै व्याजसे बढीहुई वस्तुको

एतच्चतुर्विधं विद्यात्पुरुषार्थ
प्रयोजनं अस्य नित्यमनुष्ठा
नं सम्यक् कुर्यादतन्द्रितः
१०० अलब्धमिच्छेद्दण्डेन लब्धं
रक्षेदवेक्षया रक्षितं वर्द्धयेद्वृ
द्ध्या वृद्धं दानेन निःक्षिपेत्
नित्यमुद्यत दण्डःस्या न्नित्यं
विवृत पौरुषः नित्यं संवृत
संवार्यो नित्यं छिद्रानुसा
र्यरे १०२ ॥

स्थापन करै दानसे १०१ हाथी घोडा आदि संग्राम
आदि इन्होंके सीखने का अभ्यास शस्त्र विद्या आदि
करके अपने पौरुषका प्रकाश मंत्र आचार चेष्टा
आदिका अप्रकाश शत्रुके छिद्रका अनुसरण इन
सभको नित्यही करताहै १०२ ॥

जिसका दंड नित्यही उठितहै उस राजासे संपूर्ण
जगत डरताहै इसलिये सभ जीवोंको दंडही कर
के अपने अधीनकरै ४। ३ आप माया अर्थात् कप
टसे रहित रहै और शत्रुके मायाको नित्यही जा

नित्यमुद्यत दंडस्य कृत्स्नमु
द्विजते जगत् तस्मात्सर्वाणि
भूतानि दंडेनैव प्रसादयेत ४। ३
अमाययैव वर्तेत न कथंच
न मायया बुद्धेतारि प्रयुक्तां
च मायां नित्यं स्वसंवृतः ४। ४
नास्यच्छिद्रं परोविद्या छिद्रां॰
छिद्रं परस्यच गूहेत्कूर्म इवा
ङ्गानि रक्षे द्विवरमात्मनः ४।
५

ने अपने पक्षकी रक्षा यत्नसे करै ४। ४ इसराजा॰
के छिद्रको जाने कछुआकी नाई अपने अंगको
छिपावे अपने छिद्रकी रक्षाकरै ४। ५ ॥

बकुलाको नाईं अर्थका चिंतन सिंहकी नाईं परा
क्रम झेडरकी नाईं अव लुंपन अर्थात् वलकाले
ना खरहाकी नाईं भागना इन सभको करै इसरी
तिसे विजयके अहत जो राजा उसको विजयवि-
रोधी जो शत्रु है उनसबको सामदानभेददंड इन्हों

बकव च्चिंतयेदर्थो सिंहव
च्च पराक्रमेत् वृकवच्चावले
पेत शशवच्चैव निष्पतेत् १०६
एवं विजयमानस्य येस्यस्युः
परिपंथिनः तानानयेद्वश
सर्वा न्सामादिभि रुपक्रमैः
यदि ते तु न तिष्ठेयु रुपायैः
प्रथमै स्त्रिभिः दंडेनैव प्रस-
ह्यैतान् छनकै र्वशमानये
त् १०८ ॥

चारों उपायसे अपने वशकरै जब विरोधी जो शत्रु
प्रथम तीन उपायसे नवश होवे तोदंडही करके
हठते वशकरै सामआदि चारो उपायमें साम औ
र दंड इन दोनोको नित्य प्रसंसा पंडित लोग क

रनेहै राज्यकी वृद्धिके लिये १०९ जिसरीतिसे खेती करनेवाला धान्यकी रक्षा करताहै और तृण आदिको उखाड डारताहै तिस प्रकारसे रा जा राज्यकी रक्षाकरै और शत्रुओंका नाशाक

सामादीनामुपायानां चतु
र्णामपि पंडिताः सामदंडौ
प्रशंसंति नित्यं राष्ट्राभि वृद्ध
ये १०९ यथोद्धरति निर्दाता
कक्षं धान्यं च रक्षति तथा
रक्षेन्नृपो राष्ट्रं हन्याच्च परि
पंथिनः ११० मोहाद्राजा स्व
राष्ट्रं यः कर्षयत्यनवेक्षया
सोऽचिराद्भ्रश्यते राज्याज्जीवि
ताच्च सबांधवः १११

रै ११० जो राजा मोहसे विनादेखे राज्यको पीडा देताहै सो थोडेहीकालमें अपना प्राण और रा ज्य बांधव सहित नाशको पाताहै १११ ॥

जिस रीतिसे शरीरके कष्ट देनेसे सभ इंद्रियोंको कष्टहोताहै तिसी रीतिसे राज्यके पीडामें राजा का प्राणपीडन होताहै राज्यके संग्रहार्थ इस विधानको नित्यही आचरणकरे सुंदर रीतिसे

शरीर कर्षणात्प्राणाः क्षीयं ते प्राणिनां यथा तथा रा ज्ञामपि प्राणाः क्षीयंतेराष्ट्र कर्षणात् ४२ राष्ट्रस्य संग्रहे नित्यं विधान मिदमाचरेत् सुसंगृहीत राष्ट्रोहि पार्थिवः सुखमेधते ४३ द्वयोस्त्रयाः णां पंचानां मध्ये गुल्म मः धिष्ठितं तथा ग्राम शतानां च कुर्याद्राष्ट्रस्य संग्रहे ४४

जिसका राज्य संग्रहीतहै सो राजा सुखे एर्वक बढताहै ४३ दुइ तीन पांच सब ग्रामके मध्यमें रक्षाका स्थान बनावे इसमें राज्य संग्रहार्थ ग्राम ना अधिकारी पुरुषको राखे ४४ ॥

म० एक ग्रामका दशका बीस ग्रामका सौ ग्रामका
स्० भा० सहस्र ग्रामका स्वामी एक एकको करै ११५ ग्रा
टी० ममें दोष उत्पन्नहो तो उसको उस ग्रामकास्वा
२४१ मी धीरेसे दशग्रामके स्वामीको निवेदन करै

241

ग्रामस्याधिपतिं कुर्य्याद्दश
ग्रामपतिं तथा विंशतीशं
शतेशं च सहस्रपतिमेव च
११५ ग्रामे दोषान्समुत्पन्नान्
ग्रामिकः शनकैः स्वयं शं
सेद्ग्रामदशेशाय दशेशो ।
विंशतीशिने ११६ विंशती
शस्तु तत्सर्वं शतेशाय नि
वेदयेत् शंसेद्ग्रामशतेशस्तु
सहस्रपतये स्वयं ११७ ॥

और वह बीस ग्रामके स्वामीसे कहै ११६ बीस ।
ग्रामवाला सौग्रामकी स्वामीसे कहै और वह ।
सहस्र ग्रामके स्वामीसे कहै ११७ ॥

प्रतिदिन ग्रामवासी जनोंसे लेनेके योग्य जो राजा
का भाग अन्नपान लकडी आदिहै उसको ग्रामका
स्वामीलेवै ११८ छ वृषभसे एक हल चलाने ऐसे
दो हलसे जितनी भूमि जोती जाय उसका नाम

यानि राज प्रदेयानि प्रत्यहं ग्रा
मवासिभिः अन्नपानेन्धनादी
नि ग्रामिकस्तानि वाप्नुयात्
११८ दशी कुलंतु भुंजीत विंशी
पंचकुलानिच ग्रामं ग्रामशता
ध्यक्षः सहस्राधिपतिः पुरम्
११९ तेषां ग्राम्याणि कार्याणि
पृथक् कार्याणि चैवहि राज्ञः
ऽन्यः सचिवः स्निग्धस्तानि
पश्येदतंद्रितः १२०

कुलहै उसको जीवनके अर्थ दश ग्रामका स्वामी
लेवै पांच कुलको बीसग्रामका स्वामीलेवै एक
मध्यम ग्रामको सौ ग्रामका स्वामीलेवै एक पुरको
सहस्रग्रामका स्वामी लेवै अपने जीविकाके लिये १२०

नगर नगरमें संपूर्ण अर्थोंका चिंता करने वाला
एक पुरुषको एकस्थानवश ऊंचा भयानक रूप
को राखे जैसे नक्षत्रमें ग्रहहै २१ सो पुरुष नग
र स्वामी ग्रामस्वामी आदिको विना प्रयोजन सं
र्वकालमें बल करके देखे और हेतोंसे सभोंके

नगरे नगरे चैकं कुर्यात्सर्वा
र्थचिंतकं उच्चैःस्थाने घोररू
पं नक्षत्राणा मिवग्रहम् २१
सताननु परिक्रामे त्सर्वानेव
सदास्वयं तेषांवृत्तं परिणये
त्सम्यग्राष्ट्रेषु तच्चरैः २२ राज्ञो
हि रक्षाधिकृताः परस्वादा
यिनःशठाः भृत्या भवंति प्रा
येण तेभ्यो रक्षेदिमाः प्रजाः
२३

मनकी बातको जाने २२ बहुधा राजाके अधि
कारी लोग परद्रव्यके लेने वाले होतेहैं और श
ठ होतेहैं इसलिये उन्होंसे प्रजोंकी रक्षाकरे २३

पापचितवाले जो अधिकारी लोग प्रजोंसे द्रव्य-
को लेतेहैं तिन्होंका संपूर्ण द्रव्यको लेकर राज्य
से बाहर उन्होंको निकालदेवे राजोंके कामके
करनेवाले जो स्त्री जन भृत्यजनहैं तिन्होंके प्र
तिदिन कर्मके योग्य जीविका को करै १२५ गृह-
का मार्जन करने वाला और जललानेवाला जो

ये कार्थिकेभ्योर्थमेव गृह्णी-
योः पापचेतसः तेषां सर्वस्व
मादाय राजा कुर्यात्प्रवासनं १२४
राजा कर्मसु युक्तानां स्त्रीणां
प्रेष्य जनस्यच प्रत्यहं कल्प
येद्वृत्तिं स्थान कर्मानुरूपतः १२५
पणो देयोवकृष्टस्य षडुत्क-
ष्टस्य वेतनं षाण्मासिकस्त-
थाच्छादो धान्यद्रोणस्तुमासि
कः १२६

है उसको एकपण नित्यदेवे पणकाल-
क्षण आगे कहेंगे और मासमें एक द्रोण अन्नदेवे
छटे मासमें दो वस्त्रदेवे उत्तम कर्म करने वाले
को पण नित्यदेवे और छटे मासमें चार वस्त्र दे-
वे प्रतिमासमें छ द्रोण धान्यदेवे इस रीतिसे म
ध्यम कर्म करणे वालेको तीन पण नित्यदेवे प्र

म०
स्मृ०टी०
भा०
२४२

त्रिमासमें तीन द्रोण धान्य देवे छटे मासमें वस्त्र
देवे आठ मुट्ठीको किंचित कहतेहैं ८८ आठ १
किंचित्पुष्क कहतेहैं चार पुष्कलको आढक
कहतेहैं चार आढकको द्रोण कहतेहैं चार द्रो
णको खारी कहतेहैं २६ कितने मोलसे लिया
है और विक्रयमें कितना मिलेगा कितने दूर०

243

क्रिय विक्रिय मध्वानं भक्तं
च सपरिव्ययं योगक्षेमं च
संप्रेक्ष्य वणिजो दापयेत्करा
न् २७ यथाफलेन युज्योत ^युज्येत
राजाकर्ता च कर्मणां तथा
वेक्ष्य नृपो राष्ट्रे कल्पयेत्स
ततंकरान् १२८ ॥

से लायाहै इसके भोजनमें कितना लगाहै र
स्तामें कितना व्यय भयाहै कितना इसको ला०
भका योगहै इन सबको देखकर वनियोंसे क
रकोलेवे २७ जिससे कर्म करनेवालेको और रा
जाको फलमिले तैसा देखकर राजा निरंतर
करका कल्पना करे २८

जिस रीतिसे जोंक वछरू भंवरा ये सब भोज
नके योग्य वस्तुको थोड़ा थोड़ा भोजन करतेहैं
तिसी रीतिसे राज्यके वर्षके करको थोड़ा थो
डा राजालेवे १२९ पशु और हिरण्यके लाभमें

यथाल्पाल्प मदंत्याद्यं वार्यो
को वत्सषट्पदाः तथाल्पाल्पो
ग्रहीतव्यो राष्ट्राद्राज्ञाब्दिकः
करः २९ पंचाशद्भाग आदेयो
राज्ञा पशु हिरण्ययोः धान्या
नामष्टमो भागः षष्ठो द्वाद॰
श एव वा ३॰ आददीताथ ष
ड्भागं द्रुमांसमधुसर्पिषां गं
धौषधि रसानां च पुष्पमूल
फलस्य च ३१

पचासवां भागको धान्यके छटवां बारहवां भा
गको लेवे भूमिका गुण अपगुण जोताईका परि
श्रम औरवे परिश्रमको देखकर अंशका विक॰
ल्पकरना ३॰ वृक्ष मांस मधुघी गंध औषधी रस

पुष्प मूल फल ३१ पत्र शाक तृण चर्म बांसका
पात्र मट्टीका पात्र पत्थलका पात्र इन सबहोके
छटवां भागको राजालेवै ३२ मरता भीहो राजा
परंत वेद पारगसे करको नलेवे क्षुधासे पीड़ि

पत्रशाक तृणानां च चर्मणां
वैदलस्य च मृण्मयानां च भां
डानां सर्वस्याश्म मयस्य च ३२
म्रियमाणो प्याददीत नराजा
श्रोत्रियात्करं नच क्षुधास्य
संसीदेच्छ्रोत्रियो विषये वस
न् ३३ यस्य राज्ञस्तु विषये
श्रोत्रियः सीदति क्षुधा तस्या
पि तत्क्षुधा राष्ट्र मचिरेणैव
सीदति ३४

त वेदपाठी राज्यमें नरहै अर्थात् उनके भोजन
की उपायको राजा करता रहै ३३ जिसके रा
ज्यमें वेदपाठी भूखों मरताहै उसका राज्य झ
टपट नष्ट होजाताहै ३४ ॥

ब्राह्मणोंका पढन और आचरणको जानकर
धर्मयुक्त जीविकाको करै चारोंओरसे उसब्रा
ह्मणकी रक्षा करै जैसे पिता पुत्रकी रक्षा
करताहै १३५ राजासे रक्षाको पाकर दिन दि

श्रुतवृत्ते विदित्वास्य वृत्तिं
धर्म्यां प्रकल्पयेत् संरक्षेत्
सर्वतश्चैनं पिता पुत्र मिवौ
रसम् १३५ संरक्ष्यमाणो रा
ज्ञायं कुरुते धर्ममन्वहं ते
नायु र्वर्द्धते राज्ञो द्रविणं
राष्ट्रमेव च १३६ यत्किंचिद
पि वर्षस्य दापयेत्करसं
ज्ञितं व्यवहारेण जीवंतं रा
जा राष्ट्रे पृथग्जनम् १३७

नमें जोधर्म ब्राह्मण करताहै उसी राजाका द्र
व्य राज्य आयुर्व बढताहै १३६ राज्यमें निकृष्ट
जनोंसे थोडाभी शाक पत्ता आदि वर्ष भरमें
करके निमित्त लेवै १३७ ॥ रसोई करने वा

म· स्मृ·टी· भा· २४५

245/1

ले लोहकार आदि शूद्र देहके क्लेशसे जीने वाले बोझिया आदि शूद्र देहके इन सभोंसे प्रतिमासमें एक दिन कर्मको करावे इन्होंका यही कर है ३८ प्रजोंके स्नेहसे वर्धका कारन लेवै तो राजाका मूल छेद होताहै और अ·

काहकान् शिल्पिनश्चैव
शूद्रांश्चात्मोप जीविनः ए·
केकं कारयेत्कर्म मासिमा
सि महीपतिः ३८ नोच्छिंदा ध्या
त्मनो मूलं परेषां चाति तृ
ष्णया उच्छिंदन् ह्यात्मनो
मूलं मात्मानं तांश्च पीडये
त् ३९ तीक्ष्णश्चैव मृदुश्च
स्यात्कार्यं वीक्ष्य महीप·
तिः तीक्ष्णश्चैव मृदुश्चैव
राजा भवति सम्मतः ४०

ति तृष्णासे अधिक कर लेवै तो भी इसलिये इन दोनो कर्मको न करै तो अपनेको और प्रजोंके· पीडित करता है ३९ राजा कार्यको देखकर कार्यके अनुसारसे कोमल और क्रूर होवे अर्थात् अच्छा कार्य देखके कोमल होवे और बुरा कार्य देखके कठोर होवे ऐसा राजा सभको सम्मत है ४०

आप व्यवहारके देखनेमें खेदसे युक्तहोवे तो अपने आसनपर मंत्रियोंमे मुख्य धर्मका जाननेवाला जितेंद्रिय कुलीन ऐसे ब्राह्मणको स्थापनकरै ४० इसी प्रकारसे अपने करनेके योग्यवस्तुको विधान करके उद्योग सहित प्र

अमात्यमुख्यं धर्मज्ञं प्राज्ञं दांतं कुलोद्गतं स्थापयेदासने तस्मिन् खिन्नः कार्येक्षणे नृणां ४१ एवं सर्वं विधायेदमितिकर्तव्यमात्मनः युक्तश्चैवाप्रमत्तश्च परिरक्षेदिमाः प्रजाः ४२ विक्रोशन्त्यो यस्य राष्ट्राद्ध्रियन्ते दस्युभिः प्रजाः संपश्यतः सभृत्यस्य मृतः स न तु जीवति ४३

माद रहित सब प्रजोंका रक्षाकरै ४२ भृत्य सहित जिस राजाके देखते हुए उसके राज्यमें चोरोंसे लूटे गए प्रजा लोग पुकारतेहैं सोराजा जीता नहींहै किंतु मरगयाहै ४३ इंद्रियोंका प

तंत्रि

म० रम धर्म प्रजाका पालनहीहै शास्त्रोक्त कर्मको
स्मृ०टी० करनेवाला राजा धर्मसे युक्त होताहै ४४ पह
भा० र रात्रिरहे उठकरके शौचकर एकाग्र चित्त होके
२४५ अग्निहोत्र होमकरके ब्राह्मणोंकी पूजा करके

क्षत्रियस्य परोधर्मः प्रजाना
मेवपालनं निर्दिष्टफलभो॰
क्ता हि राजाधर्मेणयुज्यते ४४
उत्थाय पश्चिमे यामे कृतशौ
चः समाहितः हुताग्नि र्ब्रा॰
ह्मणांश्चार्च्य प्रविशेत्स शुभां
सभां ४५ तत्रस्थितः प्रजाः स
र्वाः मंत्रयेत्सह मंत्रिभिः वि
सृज्य च प्रजाः सर्वा प्रतिनंद्य
विसर्जयेत् ४६

तंदर शुभ सभामें प्रवेशकरै ४५ सभामें बैठ
कर समस्तजनोंकी भाषण दर्शन आदिसे विस
र्जन अर्थात् विदाकरै तदनंतर मंत्रियोंके सा
थ मंत्रको विचारै ४६ ॥

पर्वतके ऊपर अथवा अटारी पर एकांतमें अथ
वा वनमें बैठकर मंत्रके भेद करने वाले मनुष्यों
से रहित पंचांग मंत्रको चिंतन करै मंत्रके
पांचो अंगोंको लिखतेहैं कर्मोंके आरंभका उ
पाय पहिला अंगहै पुरुष द्रव्य संपत देशका
ल इन्होंका विभाग दूसरा अंगहै विनिपात प्र

गिरिपृष्ठे समारुह्य प्रसादे वा
रहोगतः अरण्ये निःशला
केवा मंत्रयेदविभावितः ५७
यस्य मंत्रे न जानंति समाग
म्य पृथग्जनाः सकलां पृ
थिवी भुंक्ते कोशहीनोपि
पार्थिवः ५८ जडमूकांधब
धिरांस्तिर्यग्योनान्वयोति
गान् स्त्रीम्लेच्छव्याधितव्यं
गान्मंत्रकालेपसारयेत् ५९

तीकार् ४ कार्यसिद्धि ५ येपांच अंगहै ५७ ।
मंत्रियोंको छोडकर दूसरे मनुष्य मिलके जि
स राजाकी मंत्रको नही जानतेहैं सो राजा
द्रव्यसे हीनहो तोभी संपूर्ण पृथिवीको भोग
कर सकताहै ५८ बौडा गूंगा अंधा बहिरा
पक्षी वृद्ध असी वर्षके ऊपर वयवाला स्त्री

म॰ स्मृ॰ टी॰ भा॰ २४१

248

म्लेच्छ व्याधित एक एक अंगसे रहित इन सभों
के मंत्रकालमें वर्जन करना १४९ येसभ पूर्व
जन्मके पापसे ऐसे हुए हैं इसलिये अपमानको
पाके मंत्रका भेद करते हैं और पक्षी हइस्त्री
इन्होंकी बुद्धि स्थिर नहीं रहती इसलिये येभी
मंत्रका भेदकरते हैं इसी कारणसे मंत्रकाल

भिन्दंत्य वमता मंत्रं तैर्यग्यो
नास्तथैवच स्त्रियश्चैव विशे
षेण तस्मात्तत्रादृतो भवेत्
५०॥ मध्यं दिनेर्द्धरात्रेवा वि
श्रांतो विगतक्लमः चिंतये
द्धर्म कामार्थान्सार्द्धं तैरे
क एववा ५१॥ परस्पर विरु
द्धानां तेषां च समुपार्जनं
कन्यानां संप्रदानं च कुमा
राणां च रक्षणं ५२॥

में ये सभ न रहने पावे १५०॥ मध्यदिनमें अथवा
अर्द्धरात्रमें श्रमसे रहित निश्चिंत होकर इन मं
त्रियोंके साथ अथवा अकेलाही धर्म अर्थ का
मको चिंतनकरे ५१॥ धर्म अर्थ काम येसभ (
परस्पर विरोध सहित हैं इन्होंका विरोधनहोवे

ऐसी उपायका चिंतन धन प्राप्तिके लिये करै और अपने कार्यके सिद्धार्थ कन्याकादान नीति शास्त्रोक्त विनय शिक्षाके लिये कुमारोंका रक्षण इन्होंका चिंतनकरै ५२ दूतका भेजना कार्यका शेष अर्थात् बाकी अंतःपुरका प्रचार अर्थात् चलन प्रणिधि अर्थात् दूसरे राजोंका समाचारका लेनावालोंका चेष्टित अर्थात् मनमें करनेकी जो इच्छा इन सभोंका चिंतनकरै ५३

दूतसंप्रेषणं चैव कार्यशेषं
तथैव च अंतःपुरप्रचारं च प्र
णिधीनां च चेष्टितं ५३।
कृत्स्नं चाष्टविधं कर्म पंच
वर्गं च तत्त्वतः अनुरागापरा
गौ च प्रचारं मंडलस्य च ५४

राजोंसे करलेना १ भृत्योंके धनदेना २ इसलोकके अर्थ और परलोकके अर्थ जो कर्म है उसका करना और नकरना ४ इसबातकी मंत्रीयोंके आज्ञादेना कार्यसंदेहमें आज्ञादेना ५ व्यवहार देखना ६ व्यवहारमें जो हारि दंडनसे शास्त्रोक्त धनलेना ७ पापियोंको प्रायश्चित कराना ८ इन आठों कर्मका चिंतन करना और तत्त्वतें अर्थात् सिद्धांतते पंच वर्गका चिंतनकरै सो पंचवर्ग लिखतेहैं दूसरेके भी त

म॰
स्क॰टी॰
भा॰
२४८

248

रकी बातको जानने वाला भयरहितबोलनेवा
ला कपट व्यवहार करनेवाला ऐसा मनुष्य जी
विकाके लिये आवे तो इसको दान मानसे अप
नाकरके एकांतमें बोले कि जिस दुष्ट कर्म दे
खो उसी समय हमसे कहो संन्याससे भ्रष्ट जोहै
इनका दोष तो लोकमें विदितहै इनको बुद्धि
और पवित्रतासे युक्तकरके बहुत उत्पत्तिवाली
मठमें स्थापनकरके एकांतमें पूर्ववत बोले ब
हुत धान्य उत्पन्नहो जिस भूमिमें उसभूमिको ।
जीविकाके लिये इसको देवे सो भ्रष्ट संन्यासी
दूसरी संन्यासी जोहै राजाके कामको करनेवा
ले उन्होंके भोजन और वस्त्रको देवे २ जीविका
से रहित खेती करनेवाला जोहै इसको बुद्धि
और शौचसे युक्तकरके एकांतमें प्रथमकीना
ई बोले और अपनी भूमिको खेती करनेके लि
ये देवे ३ जीविकासे रहित बनियांको पूर्ववत्
कहिके धन और मानको देके अपने अधीन ।
करके बनियोंके कर्मको करावे ४ मूड मुडा
ए होया जटा रखाएहो और जीविकासे रहित
हो उसको युक्तजीविका देकर एकांतमें पूर्वव
त करै और वह कपटी बहुत मुंडित और ज॰
टिल शिष्योंके तपस्याकरै महीने दो महीनेमें
सभको आगे मूठी भरबेरि आदिको भोजनकरै
और रात्रिके कोई जाने न इस रीतिसे भोजनकरै
और शिष्यलोग उसकी माहात्म्यको प्रकाशकरै
कि भूत भविष्य वर्तमान तीनो कालके जानने
वाले गुरुजीहैं इससे सभलोग अपने अर्थको कहेंगे ८

कि कौन राजा मेल चाहता है कौन विगाड चाहता है यह जानि के तैसी उपाय करै ४८॥

ये पांचो क्रमसे कापटिक उदास्थित गृहपति वैदि॰ कतापस कहाते हैं इन पांचो कर्मका चिंतन करै इन्होंसे दूसरे राजाका ओर ओर अपने मंत्री आदिका प्रेम ओर अप्रेम जानिके तैसी उपाय करै ॥४९॥ अ वि विजिगीषु अर्थात जितनेकी इच्छाका करनेवा ला मध्यम अर्थात् अरि विजिगीषु इन दोनोंके भूमिके समीपही रहनेवाला मिलेहुए दोनों रा जोंके अनुग्रहमें ओर विगडे हुए दोनों राजोंके निग्रहमें समर्थ ओर उदासीन अर्थात विजिगी॰

मध्यमस्य प्रचारं च विजिगी॰
षोश्च चेष्टितं उदासीन प्रचारं
च शत्रोश्चैव प्रयत्नतः ॥५५
एताः प्रकृतयो मूलं मंडल॰
स्य समासतः अष्टौ चान्याः
समाख्याता द्वादशैव तुताः
स्मृताः ॥५६

षु मध्यम मि ले हुए इन्होंके अनुग्रहमें ओर विगडे हुए इन्होंके निग्रहमें सम र्थ इन सभोंका चेष्टित अर्थात् करनेकी इच्छा का चिंतन करै संक्षेपसे राजमंडलका ये चारमू लप्रकृति हैं आठ ओर हैं सो कहते हैं शत्रुके भूमि के अगाडी मित्र अरिमित्र मित्रमित्र अरिमित्र मित्र ओर पिछाडी पार्ष्णिग्राह आक्रंद पार्ष्णिग्रा हासार आक्रंदासार ये आठ पूर्वकथित चारोंका मिलकर बारह होते हैं ॥५६॥ बारहमूल प्रकृति आठ पूर्वाक्त प्रकृति इन्होंमें एक एकके पांच २

म॰
स्म॰ टी॰
भा॰
२५१

249

इत्य प्रकृतिहै तिन पांचोका नाम यहहै कि अ
मात्य अर्थात् मंत्री राष्ट्र अर्थात् राज्य दुर्ग अर्था
त् किला अर्थ अर्थात् धन दंड सब मिलि संक्षे
पसे ७२ प्रकृतिहै ५७ अपने राज्यके समीपका
राजा शत्रुहै और उसका सेवा करनेवालाभी

अमात्य राष्ट्र दुर्गार्थ दंडाख्याः
पंचचापराः प्रत्येकं कथिता ॰
ह्येताः संक्षेपेण द्विसप्ततिः ५७
अनंतरमरिं विद्या दरिसेवि॰
नमेवच अरे रनंतरं मित्र मुदा
सीनं तयोः परम् ५८ तान्स॰
र्वानभि संदध्या त्सामादिभिरु
पक्रमैः व्यस्तैश्चैव समस्तैश्च
पौरुषेण नयेन च १५९ ॥

उसके आगेका राजा मित्रहै अरि मित्रसे जो परेहै
सो उदासीनहै ५८ इन सभोंको साम आदि उपाय
मेंसे यथा संभव एक एक करके अथवा चारो
करके और पुरुषार्थ करके नीति करके वश क
रना १५९

संधि अर्थात् मेल विग्रह अर्थात् विगाड यान अर्थात् शत्रुके ऊपर यात्रा आसन अर्थात् स्थिति द्वैधीभाव अर्थात् भेद संश्रय अर्थात् बलवान का आश्रय इन छवों गुणोंका सर्वकालमें चिंतनकरना ६०. इन छवों गुणोंका कार्य देखकर जहां जिसका कामपडै तहां तिसकोकरै

संधिंश्च विग्रहं चैव यानमासन मेवच द्वैधीभावं संश्रयं च षड्गुणांश्चिन्तयेत्सदा ६०. आसनं चैव यानं च संधिं विग्रह मेवच कार्यंवीक्ष्य प्रयुञ्जीत द्वैधं संश्रय मेवच ६१ संधिं तु द्विविधं विद्याद्राजा विग्रह मेवच उभे यानासने चैव द्विविधः संश्रयः स्मृतः ६२

संधि विग्रहयान आसन संश्रय द्वैध यह छवों दो प्रकारकेहैं तत्काल फल लाभार्थ एक राजा के साथ दूसरे राजाके ऊपर यात्रा करनासो समानयान कर्मा संधिहै और जो तुम इहां जाओ हम वहां जायेंगे ऐसा कहके करै सो अस-

म. स्.टी. भा. २५.

मान यान कर्मो संधि [illegible] कालमें
अथवा अकालमें आप किया जो विग्रह सो एक
भया अथवा मित्रका अपकार देखके अपकार
करने वालेसे विग्रह किया सो दूसरा भया १६४

250

समान यान कर्माच विपरी
त स्तथैवच तदा त्वायति
संयुक्तः संधिर्ज्ञेयो द्विलक्ष
णः १६३ स्वयं कृतश्च कार्या
र्थे मकाले काल एववा मि
त्रस्य चैवापकृते द्विविधो
विग्रहः स्मृतः १६४ एकाकि
नश्चात्ययिके कार्ये प्राप्त
यदृच्छया संहतस्य च मि
त्रेण द्विविधं यानमुच्यते १६५

आवश्यक कार्य प्राप्त भये संते अकेलाही या
त्राकरै अपने इच्छासे एक यानहै अथवा मि
त्रकी सहायतासे यात्राकरै सो दूसरा यान
है १६५ ॥

एवं जन्मके पापसे अथवा इस जन्मके पापसे हाथी घोड़ा धन आदि क्षीण भया तब दूसरे राजाके ऊपर यात्रा न करना अथवा हाथी घोड़ा धन आदि क्षीण नहीं हैं और जानिमें मित्रकी रक्षा नहीं होसकते तब उसके अर्थ न जाना यह दो प्रकारका आसन है १६ सा

क्षीणस्य चैव क्रमशो दैवात्
एवं कृतेन च मित्रस्य चानु
रोधेन द्विविधं स्मृत मासनं
बलस्य स्वामिनश्चैव स्थितिः
कार्यार्थ सिद्धये द्विविधं की
र्त्तते द्वैधं षाड्गुण्य गुणवेदि
भिः १७ अर्थ संपादनार्थं
च पीड्यमानस्य शत्रुभिः सा
धुषु व्यपदेशार्थं द्विविधः
संश्रयस्स्मृतः १८ ॥

धन करनेके योग्य अपने प्रयोजनके सिद्धके लिये सेनापति सहित हाथी घोड़ा आदिको पृ कम रखना शत्रु नृपकी किसी उपद्रव कारणा र्थ यह एक द्वैधभया और किलामें बलाध्यक्ष अर्थात् संपूर्ण सेनाका स्वामी सहित राजाको स्थापनकरणा यह दूसरा द्वैध है १७ शत्रुसे पीड़ित हो अथवा शत्रु करिके पीड़ा नहोवे इ०

251

सलिये बलवान राजाका आश्रयणकरै यह दो
प्रकारका आश्रयहै ॥१६॥ जब युद्ध कालांतर अ
पनी अधिकोई को ध्रुवजानै और इसकालमें
थोड़ा धन आदिका पीड़ादेवे तब संधिकरै ॥१॥

अर्थ संपादनार्थं च पीड्यमा
नस्य शत्रुभिः साधुषु व्यपदे
शार्थं द्विविधः संश्रयस्तः
यदावगच्छेदायत्या माधि
कं ध्रुव मात्मनः तदात्वे
चाल्पिका पीड़ां तदा संधि
समाश्रयेत् ॥१५॥ यदा प्रहृ
ष्टा मन्येत सर्वास्तु प्रकृती
र्भृशं अत्युच्छ्रिते तथात्मानं
तदा कुर्वीत विग्रहं ॥१७॥

यदामन्येत भावेन हृष्टं पुष्टं बलं स्वकम् परस्य विपरीत
ञ्च तदा यायाद्रिपुम्प्रति ॥१८॥

जब अपनी प्रकृतिको हृष्टदेखे और अपने को
अति ऊंच देखे तब विग्रह करे ॥१७॥ जब अपने
सेनाको हृष्ट पुष्ट देखे और शत्रुकी सेनाको
विपरीत अर्थात हृष्ट पुष्ट नदेखे तब शत्रुके ऊप
रयात्राकरै ॥१८॥

जब वाहन और सेनासे क्षीण होवे तब शत्रु को सांत्वन अर्थात् साम उपाय करके अप ने अस्थानमें रहै १२ जब शत्रुको सर्वथा बल वान जाने तब बलको द्विधा करके अर्थात्

यदा तु स्यात्परिक्षीणो वाह नेन बलेन च तदासीत प्र यत्नेन शनकैः सान्त्वयन् न रीन् १२ मन्येतारिं यदा राजा सर्वथा बलवत्तरं तदा द्वि धाबलं कृत्वा साधयेत्का र्यमात्मनः यदा परबला नां तु गमनीयतमो भवेत् तदा तु संश्रयेत्क्षिप्रं धार्मि कं बलिनं नृपम् १४ ॥

आधी सेनाले की आप किलामें रहै और आधी सेना लडनेको भेजे अपने कार्यको सिद्ध करै १३ जब जाने कि शत्रुसे आवेंगे तब जल दीसे बलवान धार्मिक राजाका आश्रय लेनक रै १४

म॰ जो राजा शत्रुकी प्रकृतिको और सेनाको नि
स्व॰टी॰ ग्रहकरनेमे समर्थ होवे उसकी सेवा नित्यही
भा॰ यत्नसे गुरुसेवाके नाई करै ।१५ जब आश्रय
२५२ करनेमें भी कुछ दोषको देखे तब शंकारहि

252

निग्रहं प्रकृतीनां च कुर्यात्
योरिबलस्य च उपसेवेत तं
नित्यं सर्वयत्नैर्गुरुं यथा ।१५
यदि तत्रापि संपश्येत् दोषं
संश्रयकारितं सुयुद्धमेव
तत्रापि निर्विशंकः समा-
चरेत् ।१६ सर्वोपायैस्तथा
कुर्यात् नीतिज्ञः पृथिवीपतिः
यथास्याभ्यधिका न स्युर्मि
त्रोदासीनशत्रवः ।१७ ॥

त संदेह युद्धको करै ।१६ नीति जाननेवाला
राजा सब उपायसे अपने को तैसा करै जिसमें
अपनेसे मित्र उदासीन शत्रु ये सबबडा न हो
ने पावैं ।१७ ॥

संपूर्ण कार्य्यका भूत भविष्य वर्तमान जो दो
ष गुणहै उसको तत्वपूर्वक विचारै ७८ ऐसा
विचार करनेवाला राजा शत्रुवोंसे पीडित

ध्यायति सर्वकार्य्याणां तदा
ते च विचारयेत् अतीता॰
नो च सर्वेषां गुणदोषौ च
तत्वतः ७८ ध्यायतो गुण॰
दोषज्ञ स्सदात्व विमृनिश्च
यः अतीते कार्य्ये शेषज्ञः
शत्रुभि र्नाभि भूयते ७९
यथेते नाभि संदध्यु र्मित्रो
दासीनशत्रवः तथा सर्वं
संविदध्या देष सामासिको
नयः ८०

नहीं होता ७९ संक्षेपसे सभनीतिका नि
चोड यहहै कि शत्रु मित्र उदासीन ये सभ
वाधान करसकै ऐसी उपायको करै ८० ॥

म. स्मृ.टी. भा. २५३

253

जब शत्रुके ऊपर जानेकी इच्छाकरै तब आ-
गे जो रीतिकही जायगी उसरीतिसे धीरे धीरे
शत्रुके पुरमें जावै १८१ अगहन फागुन चैतमा
समें यात्राकरै १८२ और कालमें भी जब अप

यदा तु यान मातिष्ठेदरिरा
ष्ट्रंप्रति प्रभुः तदानेन विधा
नेन यायादरिपुरं शनैः ८१
मार्गशीर्षे शुभे मासि याया
द्यात्रां महीपतिः फाल्गुनं
वाथ चैत्रंवा मासौ प्रतिय-
था बलं ८२ अन्येष्वपि तु
कालेषु यदापश्येद्ध्रुवं जयं
तदा यायाद्विगृह्यैव व्यस-
ने चोत्थिते रिपोः ८३ ॥

ना जय ध्रुव जानै तब विग्रह करके जावै ।
और जब शत्रुके ऊपर दुःखहो तब जा-
वै १८३ ॥

अपने राज्यका रक्षाकरके यथाविधि यात्रा
समयके कर्म अर्थात् वाहन आयुध वख्त
रका ग्रहणको करके शत्रुके गृहमें जाके
जिससे अपनी स्थितिहोवे उसको लेके जि
तने योग्य जो राजा उसके भृत्योंको अपने
अधीन करके शत्रुको देशाकीवासी जान॰
नेकी लियेचार अर्थात् कापटिक आदिदू
तकास्थितको प्रस्थान करके १८४ तीन प्रका

कत्वा विधानं मूलेन या
त्रिकं च यथाविधिः उपगृ॰
ह्यास्पदं चैव चारान्सम्यग्वि
धायच ८४ संशोध्य त्रिवि॰
धं मार्गं षड्विधं च बलं स्व
कं सांपरायिक कल्पेन या
यादरिपुरं शनैः ८५ ॥

रकरके जो मार्गहै जांगल अनूप आटवि॰
क इनको शोधनकरके अर्थात् वृक्ष गुल्म॰
का छेदन ऊंच नीच भूमिका समीकरण
आदि करके और छः प्रकारके जो बलहै॰
हाथी घोड़ा रथ पियादा सेना कर्मकर इन
को आहार औषध सत्कार आदिसे शोधन
करके संग्राममें उचित विधान करके शी
घ्र शत्रुके पुरमें जावे १८५ अपने शत्रुग

म सेवा करने वाला जो अपना मित्र है और श॰
त्रु आदि निकलजायके जो फेरि आयाहै इन
दोनोंसे बहुत सावधानतासे रहै क्यों कि इन्हों
का निग्रह बडी कठिनतासे होताहै ८६ दंड॰
शकट वराह मकर सूची गरुड इसव्यूह करके
गमन करै दंडके आकार व्यूह रचना दंड व्यूह
कहाताहै इसीरीतिसे गाडीके आकार शकट

शत्रुसेविनि मित्रेव गूढे॰
युक्ततरो भवेत् गत प्रत्या
गते चैव सहि कष्टतरो रि
पुः १८६ दंडव्यूहेन तन्मा॰
र्गं याया त्तु शकटेन वा व॰
राह मकराभ्यांव सूच्या वा
गरुडेनवा १८७ ॥

व्यूह जानना अब दंड व्यूहको दिखातेहैं बला
ध्यक्ष आगे मध्यमें राजा पीछे सेनापति दो॰
नो पार्श्वमें हाथी उसके समीपमें घोडा तब
प्यादा इस रीतिसे लंबा और चारो ओरसे सम
यह दंड व्यूह कहाताहै जब चारो ओरसे भ
य उत्पन्न होवे तब इस व्यूहसे जावे आगे॰
पतला सूईकी न्याई पीछे मोटा शकट॰
व्यूह कहाताहै ॥

जब पीछे भय उत्पन्न होवे तब शकट व्यूह
से जावे आगा पीछा पतला होवे वीचमें
मोटा होवे से वराह व्यूह कहाता है और यही
वीचमें बहुत मोटा होवे तो गरुड व्यूह क
हावे जब पार्श्वमे भय उत्पन्न होवे तब इन
दोनों व्यूहसे जावे आगा पीछा मोटा होवे
मध्यमें पतला होवे सो मकर व्यूह कहाता
है जब आगे पीछे भय उत्पन्न होवे तब इस
व्यूहसे जावे चिउंटीके पांतीकी नाईं आगा
पीछा सम होवे और वीर पुरुष आगे रहै सो

यतस्तु भयमाशंके ततोवि
स्तारयेद्बलं पद्मेन चैव व्यू
हेन निविशेत सदा स्वयं ८८

सूचीव्यूह कहाते है जब आगे भय उत्पन्न हो
वे तब सूची व्यूहसे जावे ८७ जिधर भयकी
शंका होवे उधर बलका विस्तार करै समान
सेना और मध्यमें राजा रहै स्वामी सो पद्म व्यूह
कहाता है इस व्यूहसे पुरसे निकलके सर्व
कालमें राजा गुप्त रहै ८८ हाथी १ घोडा
१ रथ १ प्यादा १ इतनेका एक स्वामी क
रना उसका नाम पत्तिक है १ पत्तिकका
एक सेनापति कहाता है १ सेनापतिका
एक स्वामी बलाध्यक्ष कहाता है सेनापति
को और बलाध्यक्षको सर्व दिशामें रखना १

जिस दिशासे भयकी शंकाहोवे उसको प्राची अर्थात् पूर्वदिशा जानिए १८९ भले लोगोंसे युक्तस्थिति भागना युद्ध इसके लिये भेरी पटह शंख आदि वाद्यसे संकेतकि ज्ञानस्थिति और युद्धमें प्रवीणभय और व्यभिचारसे रहित ऐसा जो सेनाका एक देशसेनापतिवालाध्य

सेनापति बलाध्यक्षौ सर्वदि
क्षु निवेशयेत् यतश्च भय
माशंके प्राचींतां कल्पयेद्दि
शं १९० गुल्मांश्च स्थापयेदा
प्तान् कृतसंज्ञान्समन्ततः
स्थाने युद्धे च कुशला नभी
रुन विकारिणः १९१ संहता
न्योधयेदल्पान् कामं वि
स्तारयेद्बहून् सूच्या वज्रेण
चैवैतान् व्यूहेन व्यूह्ययोधये
त् १९

त उनको हर सर्वदिशामें शत्रुका प्रवेश वार- णार्थ और शत्रुकी चेष्टा परिज्ञानार्थ आज्ञादेवे १९१ सेना थोड़ी होवे तो मिलकरके युद्धकरे और सेना बहुत होवे तो जैसा मनहो तैसा विस्तारकरके युद्धकरे १९२ ॥

व्यूहरची वज्रव्यूहकरके युद्धकरै समभू-
मिमें रथ और घोडासे जलसहित भूमिमें नौ-
का और हाथीसे वृक्षगुल्म आदिसे युक्तभू-
मिमें धनुषसे स्थलमें ढाल तरवारसे युद्ध
करै १९२ कुरुक्षेत्र मत्स्य पांचाल शूरसेन इस
देशमें उत्पन्न जो छोटी बडी मनुष्य उनको

स्पंदनाश्वैस्समेयुद्धे दनूपेनौ
द्विपैस्तथा वृक्ष गुल्मावृते
चापै रसि चर्मायुधैः स्थले १९२
कुरुक्षेत्रांश्च मत्स्यांश्च पांचा
लान् शूरसेनजान् दीर्घांल्ल
घूंश्चैव नरा नग्रानीकेषु यो
धयेत् १९३ प्रहर्षयेद्बलं व्यू
ह्य तांश्च सम्यक् परीक्षये
त् चेष्टाश्चैव विजानीयाद
रीन् योधयतामपि १९४।

आगे करके युद्धकरै १९३ व्यूहरचना करा-
के सेनाको हर्षितकरै और इस सेनाकी भली
प्रकारसे परीक्षा करै शत्रुके साथ युद्ध कर-
ते जो अपनी सेनाहै उसकी चेष्टाको जानना
कि शत्रुओंके साथ मिलैहै कि नहीं १९४

शत्रु किलामें रहै अथवा बाहर रहै और युद्धभी
न करता हो परंतु उसको घेर करके रहै और
उसके राज्यको पीडा करै घास जल लकडी इ
नमें निकाम वस्तु डालके दूषित करै १५५ त
डाग किला अटारी खांई इनको भेदन करै शं
का रहित शत्रुको शंकित करै शक्तिग्रहणक
रके रात्रिमें ढक्काके शब्दसे अधिक त्रास क

उपरुध्यारि मासीत राष्ट्रं चा
स्योपपीडयेत् दूषयेच्चैव स
ततं यवसान्नोदकेंधनं १५५
भिंद्याच्चैव तडागानि प्रकार
परिखा स्तथा समवस्कंदये॰
च्चैनं रात्रौ वित्रासयेत्तथा १५६

रै १५६ राजाके वशमें भए जो राज्यके लेनेकी इ॰
च्छा करनेवाले मंत्री आदि तिनको भेदकरके अ॰
पने वशमें करै और उन्होंकी चेष्टाको जाने कि
वशभये कि नहीं जय कि इच्छा करने वाले रा
जा डर छोडके शुभग्रह दशा आदिसे शुभफल
देव युक्त रहत संते युद्धको करै १५७ ॥

सामदान भेद इन्होंमेसे एक एक करके अथवा
संपूर्ण करके शत्रुओंके जीतने के लिये प्रयत्न
करै केवल युद्धही करके नहीं १९८ क्यों कि
संग्राममें जय अनित्यहै इसलिये युद्धको व

उपजप्या उपजपे बुध्येतैव
तत्कृतं युक्ते च दैवे युध्येत
जयप्रेप्सुरपेतभीः ९७ सा
म्ना दानेन भेदेन समस्तै रथ
वा पृथक् विजेतुं प्रयतेता
री न युद्धेन कदाचन ९८ अ
नित्यो विजयो यस्मा दृश्यते
युध्यमानयोः पराजयश्च सं
ग्रामे तस्माद्युद्धं विवर्जयेत् ९९
त्रयाणामप्युपायानां पूर्वो
क्तानामसंभवे तथा युध्येत
सम्पन्नो विजयेत रिपून् यथा २००

र्जन करना १९९ पूर्वकथित तीनों उपायके
असंभवमें जिस प्रकारसे संयत होके युद्धको
करै जिस प्रकारसे जितैवे करै २०० ॥

म॰
स्र॰टी॰
भा॰
२५७

257

जीत करके देवता और धर्मयुक्त ब्राह्मण इन्होंका पूजन करै जीती जो द्रव्यहै सुवर्ण आदि तिस करके और देव ब्राह्मणके अर्थ यह मैने दिया ऐसा उस देशके निवासी जनोंकी परिहार अर्थात् जो फेर नलेना देवै और सभ मनुष्योंके अभयदेवै २०१ संक्षेपसे सभोंकामत समझके उस॰

जित्वा संपूजयेद्देवान् ब्राह्मणांश्चैव धार्मिकान् प्रदद्यात्परिहारांश्च ख्यापयेदभयानि च २०१ सर्वेषां तु विदित्वैषां समासेन चिकीर्षितं स्थापयेत्तत्र तद्वंश्यं कुर्याच्च समयक्रियाम् २०२ प्रमाणानि च कुर्वीत तेषां धर्मान् यथोदितान् रत्नैश्च पूजयेदेनं प्रधानपुरुषैः सह २०३ ॥

राजाके वंशमें जो होवे उसको उसीके स्थानमें स्थापित करै और यह तुम करना यह न करना ऐसा उसराजाको और मंत्रियोंको कहै २०२ ॥ तिन्होंका धर्मसे युक्त और शास्त्र कथित जो आचारहै उसको प्रमाण करै और रत्नोंसे प्रधान पुरुषोंसहित राजाका पूजन करै २०३ ॥

यद्यपि अभिलषित द्रव्योंका ग्रहण अप्रिय करैहै और दान प्रियकरैहै यह स्वाभाविकहै तथापि समय विशेषमें दान और ग्रहण अप्रशस्त होताहै इसलिये उस समयमें दानै करना २५ पूर्वजन्ममें किए जोपाप और पुण्य सो दैव कर्म कहाताहै और इसलोक में किए

आदान मप्रियकरं दानं च प्रियकारकं अभीप्सितानामर्थानां कालेयुक्ते प्रशस्यते २५ सर्व कर्मेदमायत्तं विधाने दैवमानुषे तयोर्दैव मचिन्त्यंतु मानुषे विद्यते क्रिया २५ ॥

जो पाप और पुण्य सो मानुष कर्म कहाता है इन्ही दोनो कर्मके अधीन करनेके योग्य जो सभ वस्तुहै तिसमें दैव कर्मतो चिंताके योग्य नहींहै मानुष कर्ममें विचारहै २५ ॥

म॰
स्व॰ टी॰
भा॰
२५८

258

इस रीतिसे युद्धकरै अथवा वह राजा मित्रता
करै तो यात्रा का फल भूमि मित्र हिरण्य इन
तीनो वस्तुमे एक वस्तुका लाभ होना इसको
देखत संते उसके साथ मिलकरै २९ मंडल
में पार्ष्णिग्राह अर्थात् पीछे रहने वाला राजा
और आक्रंद अर्थात् जो संकेत कियाहै उससे
भिन्न करनेवाला जो पार्ष्णिग्राहहै उसके कि
ए हुए संकेत पर रखने वाला इन दोनो राजा

सहवापि व्रजेद्युक्तः संधिंकृ
त्वा प्रयत्नतः मित्रं हिरण्यं
भूमिं वा संपश्यं स्त्रिविधं फ
लं २९ पार्ष्णिग्राहं च संप्रे
क्ष्य तथाक्रंदं च मंडले मि॰
त्राद्याप्य मित्राद्वा यात्रा।
फलमवाप्नुयात् २३ ॥

के अपेक्षा विना यात्रा करना इन्होंकी दोष
से अपेक्षा विना यात्रा करनेसे इन्होंके दोष
से रहीतहो जायगा अर्थात् ये सभ उपद्रव
करैगे इसलिये अपेक्षा करके यात्रा करने॰
से मित्रसे अथवा शत्रुसे यात्राका फल।
प्राप्तहोताहै २३ ॥

वर्तमान कालमें कृश ओर भविष्य कालमें बु
ड्ढिगुन स्थिर मित्रको पाके जैसा राजा बढता
है तैसा हिरण्य भूमिको पानेसे नही बढता
२८ उपकार ओर धर्मका जानने वाला स्थि
र कार्य्यका आरंभ करनेवाला प्रकृतिके प्रि
य अनुराग युक्त ऐसा जो मित्र है सो अति

हिरण्य भूमिसंप्राप्त्या पार्थि
वो न तथैधते यथा मित्रं ध्रु
वं लब्ध्वा कृशमप्यायतिक्षं
मे २८ धर्मज्ञं च कृतज्ञं च
तुष्टप्रकृति मेवच अनुरक्तं
स्थिरारंभं लघुमित्रं प्रशस्य
ते २९ प्राज्ञं कुलीनं शूरंच
दक्षं दातार मेवच कृतज्ञं
धृति मंतं च कष्टमाहुररिं
बुधाः २९

प्रशस्त है २९ पंडित महाकुलमें उत्पन्न शू
र निपुण दाता का उपकारका जानने वाला
धीर ऐसा शत्रु बडा कष्ट है अर्थात् ऐसेका उ
च्छेद नहीं हो सकता इसवातको पंडितोंने क
हा २९ ॥ साधु पुरुष विशेषका जानने

म॰
स्व॰टी॰
भा॰
२५४

259

वाला शूर कृपालु सर्व कालमें बहुत देने- वाला ऐसा जो उदासीन राजा है उसको आश्रय करके शत्रुके साथ युद्ध करे रोग रहित धान्य देने वाली नित्य ही पशुकी वृद्धि करने वाली ऐसी जो भूमि है उसको भी त्याग

आर्यता प्रज्ञता शौर्यं क
रुणं वेदिता स्थौल लक्ष्यं च
सततं उदासीन गुणोदयः ॥
क्षेमां सस्य प्रदां नित्यं पशु
वृद्धि करीमपि परित्यजेत् नृ-
पो भूमि मात्मार्थं मविचारये
त् ॥ आपदर्थे धनं रक्षेत् दारा
न् रक्षेद्धनै रपि आत्मानं स
ततं रक्षेत् दारै रपि धनैरपि ॥
१३ ॥

करै आत्माकी रक्षाके लिये अर्थात् ऐसी भूमि त्याग विना आत्म रक्षण नहीं होसकता तो उसको भी त्याग करना ॥ आपत्के अर्थ धनका रक्षा करै धन करके स्त्रीका रक्षा करै और आत्म रक्षण करै ॥ १३ ॥

एकही कालमें कोषका लय प्रकृतिका को
प मित्रके दुःख ये सब शामहोवे तो मोहनक
रे किंतु साम आदि जो उपायहै उसमेंसे एक
एक को अथवा सभको करै २१४ उपाय उपा
यका करने वाला उपायसे सिद्धभये जो व

महसर्वाः समुत्पन्नाः प्रसमी
क्ष्यापदोध्रुशं संयुक्तांश्च वियु
क्तांश्च सर्वोपायान्सृजेद्बुधः ११
उपेतारमुपेयं च सर्वोपायां
श्च कृत्स्नशः एतत्त्रयं समा
श्रित्य प्रयतेतार्थसिद्धये ११
एवं सर्वमिदं राजा सहसं
मंत्र्य मंत्रिभि व्यायाम्या प्लु
त्य मध्याह्ने भोक्तुमंतःपुरं
विशेत् ११

त्तु इन तीनोंका आश्रयकरके अर्थ सिद्धके
लिये यत्नकरै ११ इस रीतिसे इन सभको मंत्रि
योंके साथमंत्र करके तदनंतर व्यायाम अर्था
त् दंडकरके मध्याह्नकालमें स्नान करके भो
जनके लिये अंतःपुरमें प्रवेश करै २१६ अप

अपने तुल्यकालका जानने वाला द्रव्य आदिके पानीसे भेदको न होने देने वाला ऐसा जो परि॰ चारक और विषका नाश करन हार जो रत्नहै उसको सर्वकालमें निश्चयसे धारण करना विष सहित अन्नको देवे मंत्र इन सभ करके परी॰ क्षित जो अन्नहै उसको भोजन करै २७ विष और इन दोनोंका नाश करने वाली जो वस्तु ।

तथाप्तभूतैः कालज्ञै राहा॰
र्यैः परिचारकैः सुपरीक्षित
मन्नाद्य मश्नीयात् विषाप॰
हैः ७ विषघ्ने अगदे चास्य
सर्वद्रव्याणि योजयेत् वि॰
षघ्नानि च रत्नानि नियतो
धारये त्सदा २८ ॥

उसका द्रव्य योग सभद्रव्योंमें करना और विषके नाश करनहार जो रत्नहै उसको सर्वकालमें निश्चयसे धारण करना विष सहित अन्नको देखनेसे चकोर पक्षीका नेत्र लाल हो जाताहै इस॰ लिये उसको देखकर परीक्षा करना २८ ॥

सेदर रूपवाली शुद्ध आभरण वाली एकाग्र
चित्तवाली परीक्षित जो स्त्री है सो पंखा जल
धूप स्पर्श इन सभको करै २१९ इस रीतिसे या
न शय्या आसन स्नानकेश प्रसाधन सर्व अ-

परीक्षिताः स्त्रियस्त्वेनं व्यज-
नोदकधूपनैः वेषाभरण सं-
शुद्धा स्पर्शयुः सुसमाहिताः
एवं प्रयत्नं कुर्वीत यानशा-
य्यासनाशने स्नाने प्रसाध-
ने चैव सर्वालंकारकेषु च
भुक्तवा विहरेच्चैव स्त्री-
भिरन्तःपुरे सह विहृत्य तु
यथाकाले पुनः कार्या-
णि चिंतयेत् २२१ ॥

लंकारका यत्न करै २२० भोजन करके
स्त्रियोंके साथ अंतःपुरमें विहारकरै तद
नन्तर यथा कालमें पुनः कार्यको देखे गह

म.
स्व. टी.
भा.
२६१

ना पहिर के पुनः योधा वाहन शस्त्र आभरण इन सभको देवे २२ सायंकालमें संध्योपासन करके अंतःपुरमें शास्त्रधारण किए इए रहस्य कहने वाले और प्रणिधी इन सभोंके कानेके

261

अलेहानस्त्र सेपश्ये दायुधी । ये पुनर्गजनम् वाहनानिच स र्वाणि शस्त्राण्याभरणानिच २२ संध्या श्चोपास्य शृणुया देतः वेश्मनि शस्त्रभृत रहस्याख्या यिनां चैव प्रणिधीनां च चे । ष्टितं २३ गत्वा कक्ष्यांतरं त्व न्य त्समनुज्ञाप्य तज्जनं प्रवि शे द्भोजनार्थं च स्त्रीवृतोंतः पुरम्पुनः २ २४ ॥

तत्र भुक्ता पुनः किञ्चि त्तूर्यघोषैः प्रहर्षितः संविशेत्तुयथा कालमुत्तिष्ठेच्च गतश्रमः २२५

योगप वनको सुने २३ दूसरे स्थानमें जाकर वहांके मनुष्योंके आज्ञा देकर भोजनके लिये स्त्रियोंके पुनः अंतःपुरमें प्रवेश करे २ २४ ।

फेर थोड़ा भोजन करके शब्द से हृष्ट होकर सोवे तदनन्तर परिश्रम रहितयथा काल में उठे २२५

रोगसे रहित राजा ऐसा विधानको करै कदाचि
त् आप अस्वस्थहोवे तो यह सभकर्म करनेके
लिये भृत्योंके आज्ञादेवै २२६ इतिश्री मनुस्मृति
भाषा टीकायां कुल्लुक भट्ट व्याख्यानुसारिण्यां
श्री बाहदेवीदयाल सिंह कारितायां श्रीकंप॰

एतद्विधानमातिष्ठेदरोगः
पृथिवीपतिः अस्वस्थः सर्वमे
तत्तु भृत्येषु विनियोजयेत्
२२६ इतिमानवे धर्मशास्त्रे
भृगुप्रोक्तायां संहितायां रा॰
जधर्मो नाम सप्तमोध्यायः ७
व्यवहारान्दिदृक्षुस्तु ब्राह्मणैः
सहपार्थिवः मंत्रज्ञैर्मंत्रि॰
भिश्चैव विनीतः प्रविशेत्स
भां १

नी संस्कृत पाठशालीय धर्मशास्त्रि गुलजार
शर्म पंडित कृतायां सप्तमोध्यायः ७ व्यवहारो
की दर्शनकी इच्छा करत संते राजा मंत्रके जा
नने वाले मंत्री और ब्राह्मणोंके सहित नम्रवे
षहोकर सभामें प्रवेश करै १ सभामें बैठक

म. स्मृ. टी. भा. २६२

262

२ अथवा खड़ा होकर दक्षिण हाथ उठाकर
नम्र वेष आभरण करके कार्यवालोंके कार्य-
को देखै २ ऋण लेना आदि अठारह प्रकारके
व्यवहार मार्गमें पठित जो कार्य उसको देश
जाति कुल व्यवहारसे जाने गए और शास्त्रसे

तत्रासीनः स्थितोवापि पाणि
मुद्यम्य दक्षिणं विनीतवेषा
भरणः पश्येत्कार्याणि कार्यि
णां २ प्रत्यहं देशदृष्टैश्च शा
स्त्रदृष्टैश्च हेतुभिः अष्टादश
सुमार्गेषु निबद्धानि पृथक्
पृथक् ३ तेषामाद्य मृणादा
नं निक्षेपो स्वामि विक्रयः सं
भूयच समुत्थानं दत्तस्यानप
कर्मच ४

जाने गए साक्षी दिव्य अर्थात् सौगंध आदि जो
कारण इन्हें करके पृथक् पृथक् प्रतिदिन वि-
चारकरै ३ अब अठारह प्रकारके व्यवहार मा-
र्गको गणाते हैं ऋणदान १ निक्षेप २ अस्वामि
विक्रय ३ संभूयसमुत्थान ४ दत्तानपाकर्म ५ ।

वेतनादान ६ सम्बिद्व्यतिक्रम ७ क्रियविक्रयानुशय ८ स्वामिपालविवाद ९ सीमाविवाद १० दंडपारुष्य ११ वाक्पारुष्य १२ स्तेय १३ साहस १४

वेतनस्यैव चादाने संविदश्च व्यतिक्रमः क्रयि विक्रयानुशयो विवादः स्वामिपालयोः
५ सीमा विवाद धर्मश्च पारुष्ये दंडवाचिके स्तेयं च साहसे चैव स्त्री संग्रहणमेवच ६
स्त्रीपुंधर्मो विभागश्च द्यूतमाह्वय एवच पदान्यष्टादशैतानि व्यवहार स्थिताविह ७ ।

स्त्रीसंग्रहण १५ स्त्रीपुंधर्म १६ विभाग १७ द्यूतसमाह्वय १८ ये अठारह प्रकारके व्यवहार मार्गके पद इसग्रंथमें व्यवहारके मर्यादामेंहैं ७ ॥

राजा नित्यधर्मके आश्रित होकर इस अठारह
प्रकारके व्यवहार मार्गमें बहुत कार्य करने
वाले मनुष्योंके कार्य विशेषका निर्णय करै ८
जब राजा आप कार्यको न देखै तब पंडित ब्रा॰

पशु स्थानेषु भूयिष्ठे विवाद
चरतां नृणां धर्मं शाश्वत मा
श्रित्य कुर्य्यात्कार्यविनिर्णयं
८ यदा स्वयं न कुर्य्यात्तु नृप
ति कार्यदर्शनं तदा नियुंज्या
द्विद्वांसं ब्राह्मणं कार्य्यदर्शी
ने ९ सोस्य कार्य्याणि संपः
श्ये त्सभ्यैरेव त्रिभिर्वृतः स
भामेव प्रविश्याग्र्या मासीनः
स्थित एव वा १० ॥

ह्मणको कार्य देखनेकी आज्ञा देवै ९ वह ब्राह्म
ण श्रेष्ठ सभामें बैठकर अथवा खड़ा होकर
तीन मंत्रियोंके साथ इस राजाको कार्यको
देखै १० ॥

जिस देशमें एक ब्राह्मण पंडित वेद पढे हुए तीन ब्राह्मण सहित व्यवहारमें दर्शन राजा॰ की आज्ञा पाकर बैठतेहैं उस सभाको ब्रह्माकी सभा जानना ॥ अधर्मसे वेधाहुआ धर्म जि

यस्मिन्देशे निषीदंति विप्रा वेद विदस्त्रयः राज्ञा श्चाधि॰ कृतो विद्वान् ब्राह्मणस्तां स भांविदुः ॥ धर्मो विद्धस्त्वधर्मेण सभां यत्रोपतिष्ठेत शल्यं चास्य निकृंतंति विद्धास्तत्र सभासदः ॥ सभावान प्रवे॰ ष्टव्या वक्तव्यं वा समंजसं अब्रुव न्विब्रुवन्वापि नरो भ वति किल्बिषी ॥ ॥

स सभामें रहतेहैं और सभासद उस अधर्म॰ का छेदनहीं करसकतेवे सभ वेदे गऐहैं ॥ सभामें जाना नहीं जाके यथार्थ बोलना जा नके नबोले अथवा विरुद्ध बोले तो पापी होता

धर्मरक्षा करतीहै मारागया

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
२६४

264

है १३ जहां अधर्म करके धर्म और असत्य क-
रके सत्य मारा जाता है और देखने वाले उसको
निवारण नहीं करते तहां सभासद मारे गए
है १४ मारागया धर्म मारता है रक्षा किया ग-
या धर्म हमको न मारे इस लिये धर्मको न मा

यत्र धर्मो ह्यधर्मेण सत्यं य
त्रानृतेन च हन्यते प्रेक्षमा
णानां हतास्तत्र सभासदः
१४ धर्म एव हतो हन्ति धर्मो
रक्षति रक्षितः तस्माद्धर्मो न
हन्तव्यो मानो धर्मो हतो व
धीत् १५ वृषो हि भगवान्
धर्मस्तस्य यः कुरुते ह्यलं
वृषलन्तं विदुर्देवास्तस्माद्ध
र्मं न लोपयेत् १६ ॥

रना १५ भगवान जो धर्म है उसको वृष कहते
है उसका जो अलं अर्थात वारण करता है उस
को देवता लोग वृषल लोग कहते हैं इसलि
ये धर्मका लोपन करना १६ ॥

एक धर्महीं मित्रहै क्यों कि मरे पीछेभी जाताहै क
दाचित् कहो कि मरे पीछे तो अधर्मभी जाताहै
तो औरभी मित्रहै तिसका समाधान यहहै कि
धर्म इष्ट फलदेनेके लिये जाताहै और अधर्म
अनिष्टफल देनेके लिये जाताहै तो जो इष्टफ॰
ल देनेके लिये जाय सोई मित्र कहाताहै और
भार्या पुत्र आदितो शरीरके साथही अदर्शन

एकएव सुहृद्धर्मो निधनेप्य
नुयातियः शरीरेण समंनाः
शं सर्वमन्यद्धिगच्छति १७ पा
दो धर्मस्य कर्तारं पादः साक्षि
णमृच्छति पादःसभासदःस
र्वान्पादोराजानमृच्छति १८
राजाभवत्यनेनास्तु मुच्यंते च
स सभासदः एनो गच्छति
कर्तारं निंदार्हो यत्र निंद्यते
१९

को प्राप्तहोतेहैं इस लिये पुत्र आदिमें स्नेहके
अपेक्षा करके धर्मको न मारना १७ अधर्मका
चारभाग होताहै एक एक भागको कर्ता साक्षी
सभासद राजाये चारो पाताहै १८ जहां निंदाके
योग्य पुरुष निंदाको पाताहै तहां राजा पापसे
रहित होताहै और सभासद पापसे छूटजाते
हैं अधर्म करनेवालेही को पापलगताहै १९ ।

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
२६५

265

जो जातिही करके ब्राह्मणहो ब्राह्मणका कर्म कुछभी न करताहो मूर्ख हो तोभी वह राजाके धर्मका उपदेश करनेवाला होताहै शूद्र तो कैसाभी हो तो नही होता २० जिस राजाके धर्मका विचार शूद्र करताहै तिस राजाका ।

जातिमात्रोपजीवीका कामं
स्याद्ब्राह्मणब्रुवः धर्म प्रवक्ता
नृपतेर्न तु शूद्रः कथंचन २०
यस्य शूद्रस्तु कुरुते राज्ञो
धर्म विवेचनं तस्य सीदति
तद्राष्ट्रं पंके गौ विव पश्य
तः २१ यद्राष्ट्रं शूद्रभूयिष्ठं
नास्तिकाक्रान्त मद्विजं विन
श्यत्याशु तत्कृत्स्नं दुर्भिक्ष
व्याधिपीडितं २२ ॥

राज्य उसके देखतेही कादवमें फंसी गौकी नांई कष्टको पाताहै २१ जिस राज्यमें बहुत शूद्र और नास्तिकहै ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य नही है वह संपूर्ण राज्य दुर्भिक्ष व्याधिसे पीडित होकर झटपट नाशको पाताहै २२ ॥

धर्म सभामें बैठकर वस्त्रोंसे अंगको ढांपकर एकाग्रचित्त होकर लोकपालोंको प्रणाम करके कार्यदेखनेका आरंभकरै २३ प्रजाका रक्षण और उच्छेद ये दोनो इसलोकके अर्थ और अन्र्थहै इसका मुक्तिके और परलोकके अर्थ धर्म

धर्मासनमधिष्ठाय संवीतांगः समाहितः प्रणम्य लोकपालेभ्यः कार्यदर्शनमारभेत् २३ अर्थानर्थावुभौ बुध्वा धर्माधर्मौच केवलौ वर्णक्रमेण सर्वाणि पश्येत्कार्याणिकार्यिणां २४ वाह्यै र्विभावयेल्लिङ्गै भावमन्तर्गतंनृणां स्वरवर्णेङ्गिताकारै श्चक्षुषा चेष्टितेन च २५ ॥

अधर्महै इसका केवल अनुरोध करके जिसमें विरोध न होवे तिस रीतिसे वर्ण क्रम करके कार्य वालेके कार्यको देखै २४ वाहरकी जो चिह्नहै स्वर वर्ण इंगित आकार चेष्टित इन करके मनुष्योंके भीतरके भावजाने २५ आकार इंगित ग

को

ति चेष्टा भाषित और नेत्र मुखका विकार इन
सभोंसे भीतरका मन जाना जाता है २६ अना॰
थ बालकके धनको उसके चाचा आदि लेते हों
तो उस धनको तब तक राजा पालन करे ज॰

आकारै रिंगितैर्गत्या चेष्टया
भाषितेनच नेत्रवक्त्र विका
रैश्च गृह्यतेन्तर्गतं मनः २६ बा
लदायादिकं रिक्थं तावद्रा
जानु पालयेत् यावत्सस्यात्
समावृतो यावच्चातीत शैश
वः २७ जीवन्तीनां तु तासां॰
ये तद्धरेयुः स्वबांधवाः तां॰
श्छिष्यां चौरदंडेन धार्मिकः
पृथिवीपतिः २८

ब तक उसका समा वर्तन कर्म न होवे और ल
डकाई नबीते २७ वंध्या अपुत्रा उलसे निका॰
ली हुई पतिव्रता विधवा रोगिणी इन सभोंके
धनकोभी रक्षाकरे अन्यायसे कोई लेने नपावे २८

इन सबको जीतेहुए और इन्हींको धनको इन्हीं
के बांधव लोग हरण करें तो धर्म करनेवाला
राजा उस धनके लेने वालेको चोर दंडकी ना
ई शासन करै २८ जिस धनका स्वामी कोई न
हीहै उस धनको तीन वर्षतक राजा अपने
यहां स्थापन करै और तीन वर्षके भीतर उस

प्रणष्टस्वामिकं रिक्थं राजा
त्र्यब्दं निधापयेत् अर्वाक् त्र्यं
ब्दाद्धरेत्स्वामी परेण नृपति
र्हरेत् २९ ममेदमितियो ब्रू
यात्सोनुयोज्यो यथाविधि
संवाद्य रूपसंख्यादीन् स्वामी
तद्द्रव्यमर्हति ३० अवेदयानो
नष्टस्य देशंकालं च तत्वतः
वर्णं रूपं प्रमाणं च तत्समं
दंडमर्हति ३१ ॥

धनका स्वामी आवै तो उसको पावै और तीन
वर्षके उपर राजालेवै ३० जो मनुष्य राजाके
समीप जाके कहै कि यह वस्तु हमारी है तो
उसपर अनुयोग अर्थात् प्रश्न करै उस वस्तु-
का स्वरूप संख्या आदिसे जब ठीकठीक उस-
का स्वरूप संख्या आदिको कहै तो उस वस्तुको

म·
स्मृ· टी·
भा·
२६७

267

पावै ३१ जब नष्ट वस्तुका देशकाल वर्ण रूप
परिमाणको न कहै तो उस वस्तुके समान दे
उको पावै ३२ उसवस्तुका छटवां दशवां बार:
हवां भागको रक्षण निमित्त राजा लेवै सज्जनों
के धर्मको स्मरण करते संते प्रशंका विव:

प्रवेदयानो नष्टस्य देशकालं च तत्त्वतः वर्णं रूपं प्रमाणं च तत्समं द्रव्यमर्हति ३२
आददीताथ षड्भागं प्रणाष्टाधिगतान्नृपः दशमं द्वादशं वापि सतान्धर्ममनुस्मरन् ३३
प्रणष्टाधिगतं द्रव्यं तिष्ठेद्युक्तैरधिष्ठितं यांस्तत्र चोरान् गृह्णीयात्तान् राजेभेन घातयेत् ३४ ॥

ला जोहै सो धनीका निर्गुणत सगुणता देख
के करना ३३ गिरीहुई वस्तु मिले तो उसकी र
क्षा युक्त लोगोंसे कराके राखै और उसके चोरा
ने वालेको राजा हाथीसे घात करावै ३४ ॥

भूमिमें गडीहुई वस्तुको निधिकहतेहैं उसको
राजाके समीप लेजावे और हमरा आके कोई
कहै कि यह हमारीहै और रूप संख्या करके
ऐसी वस्तुहै तैसी सिद्धकरै तो उस वस्तुको
वहपावे और उस वस्तुका छटा अंश अथवा
बारहवें अंशको राजा लेवे अंश विकल्पतो

ममाय मितियो ब्रूया न्निधिं
सत्येन मानवः तस्याददीत
षड्भागं राजा द्वादशमेववा
३५ अन्टते तुवदे दण्डः स्ववि
तस्यांशमष्टमं तस्यैववा नि
धानस्य संख्यया लीयसी क
ला ३६ विद्वांस्तुब्राह्मणो दृष्ट्वा
पूर्वोपनिहितं निधिं अशेषतः
तोप्याददीत सर्वस्याधिपति
हिसः ३७ ॥

निधि स्वामीका गुण अगुण देखके करना गुणी
निधि स्वामीसे छटा भागलेवे ३५ झूठबोले तो
अपने द्रव्यको अटवां भाग दंडदेवे अथवा उसी
निधिका थोडा भागके समान अपने द्रव्यसे दंड
देवै अंश विकल्पतो एवं कथितकी नाई जानना
पंडित ब्राह्मण निधिको पावै तो वह संपूर्ण लेवे

बारहवां भाग और अगुणी निधि स्वामी से॰

म॰ स्म॰ टी॰ भा॰ २६८

268

राजा निधिको आप पावे तो उसमेंसे आधा ब्रा-
ह्मणोंके देके आधा अपने कोश अर्थात् खजा-
नामें राखें ३८ निधिके आधाभागको ग्रहणक-
रनेवाला राजाहै क्योंकि रक्षण करताहै और

यस्तु पश्येन्निधिं राजा पुराणं
निहितं क्षितौ तस्माद्द्विजेभ्यो
दत्वार्द्धं मर्द्धं कोशे प्रवेशयेत्
३८ निधीनां तु पुराणानां धा
तूना मेवच क्षितौ अर्द्धभागर-
क्षणाद्राजा भूमेरधिपतिर्हि-
सः ३९ दातव्यं सर्ववर्णेभ्यो
राज्ञा चौरैर्हृतंधनं राजा तदु
पयुंजानश्चौरस्याप्नोति कि-
ल्बिषम् ४० ॥

सभका अधिपति अर्थात् स्वामीहै ३९ चोरको
चोराई वस्तुको लेकर सर्व वर्णोंको राजादेवे क-
दाचित् उसवस्तुको आप भोगकरे तो चोरके
पापको पावे ४० ॥

जातिदेश बनियां आदिवोल इन सभोंके धर्मो
को देखकर अपने धर्मको स्थापनकरै ४१ अप
नेकर्मको करते संते दूरभी रहनेवाले मनु
ष्यलोकके प्रियहोतेहैं ४२ राजा और राजाके

जातिजानपदान्धर्मान् श्रेणी
धर्मांश्च धर्मवित् समीक्ष्य कु
लधर्मांश्च स्वधर्मं प्रतिपादये
त् ४१ स्वानि कर्माणि कुर्वा
णा दूरे संतोपि मानवाः प्रि
याभवंति लोकस्य स्वेस्वे क
र्मण्यवस्थिताः ४२ नोत्पाद
येत्स्वयं कार्यं राजानाप्यस्य
पूरुषः न च प्रापितमन्येन
ग्रसेतार्थं कथंचन ४३ ॥

पुरुष आपसे कार्यको उत्पादन न करै अर्थी अ
र्थात् अपने कार्यको निवेदन करनेवाला प्रत्य
र्थी अर्थात् अर्थीके वचनको खंडनकरनेवाला
इन दोनों करके आवेदित जो कार्यहै उसकोध
न आदि लाभकरके उपेक्षा नकरै अर्थात् उस
का विचारकरै ४३ ॥

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
१९१

269

जिस प्रकारसे व्याधा रुधिरके गिरनेसे मृगको स्थान पाताहै अर्थात् एक बाणसे वेधाहुआ भागता मृग जिस मार्गसे जाताहै उस मार्गमे उसके शरीरसे गिरे हुए रुधिरको देखकर यह बात जानी गए कि मृग इधर गयाहै तिस प्रकारसे अनुमान करके धर्मके पदको राजा

यथा नयत्य सृक्पातै र्मृगस्य मृगयुः पदम् नये त्तथानुमानेन धर्मस्य नृपतिः पदं ४४ सत्यमर्थं च संपश्ये दात्मान मथसाक्षिणः देशं रूपं च । कालं च व्यवहार विधौ स्थितः ४५ सद्भिरा चरितं यत्स्या द्धार्मिकैश्च द्विजातिभिः तद्देश कुलजातीना मविरुद्धं । प्रकल्पयेत् ४६ ॥

प्राप्त करै ४४ व्यवहार विधिमें स्थित होकर राजा सत्य अर्थ आत्मा साक्षी देश रूपकाल इन सब को देखे ४५ धार्मिक सज्जन द्विजाति लोगोंने जिस धर्मको आचरण कियेहै उसदेश कुल जातिके अविरुद्ध जो धर्महै उस धर्मका कल्पना करै ४६

उत्तमर्ण अर्थात् ऋणदेनेवालाने अपने दिये हुए धनको पानेके लिये राजाके समीप निवेदन किया और साखी लेख आदि प्रमाणोंसे उसको सिद्ध किया तब उसके धनको अधमर्ण अर्थात् ऋणलेनेवाला से दिलादेवे ४७

धन

अधमर्णार्थ सिद्ध्यर्थमुत्तमर्णेन चोदितः दापयेद्धनिकस्यार्थं मधमर्णाद्विभावितं ४७
यैर्यैरुपायैरर्थं स्वं प्राप्नुयादुत्तमर्णिकः तैस्तैरुपायैः संगृह्य दापयेदधमर्णिकं ४८
धर्मेण व्यवहारेण छलेनाचरितेन च प्रयुक्तं साधयेदर्थं पंचमेन बलेनच ४९

जिस जिस उपायसे अधमर्णको ग्रहण करके राजा धनको दिलावे ४८ धर्म अर्थात् सत्यवचन व्यवहार अर्थात् साखी लेख आदि छल अर्थात् बहाना आचरित अर्थात् उपवास बल इन पांचों इन उपायमेंसे कोई एक करके अपने दिये हुए धनको ग्रहण करे ४९

उत्तमर्ण अपने धन को पावे उस उस उपायसे:

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
२३॰

270

जो उत्तमर्ण अपने धनको अधमर्णसे उपाय करके लेताहै उसको राजा मानन करै कि हमसे यहां निवेदन क्यों नहीं किया आपही उपायसे लेताहै ५० अर्थीके निवेदित अर्थको प्रत्यर्थीने अपलाप किया अर्थात् हम नहीं जानते ऐसा कहा और अर्थीने साक्षी लावे

यः स्वयं साधयेदर्थं उत्तमर्णो
धमर्णिकात् न स राज्ञाभि॰
योक्तव्यः स्वकं संसाधयन्ध॰
ने ५० अर्थेपव्ययमाने तु क
रणेन विभाविते दापयेद्धनि॰
कस्यार्थं दंडलेशं च शक्तितः
५१ अपन्हवे धमर्णस्य देही॰
त्युक्तस्य संसदि अभियोक्ता
दिशेद्देश्यं करणं वान्यदुद्दि॰
शेत ५२ ॥

आदिसे विभावित अर्थात् सिद्ध किया जो राजा उत्तमर्णके धनको अधमर्णसे दिलाय देवे और यथाशक्ति दंडभी अधमर्णको देवे ५१ सभामें न्यायके देखने वालेने अधमर्णसे कहा कि उ॰त्तमर्णका धन दो और अधमर्णने कहा कि हम नहीं लियाहै तब उत्तमर्ण साक्षी लावे आदि साधनको कथन करै ५२ ॥

जिस देशमें अर्थमर्थकी स्थिति सर्वथा नहीं से
भवतीहै और उसदेशका कथन उत्तमर्थ कर
के फिरकहै कि इसदेशको मेने नही कहा ॥
और पूर्वापर विरुद्धबोलताहै ५३ जो कहताहै
किमेरे हाथसे चार पैसाभर सुवर्ण इसने लि
या ऐसा कहके फेर कहताहै किमेरे लडके
के हाथसे लिया ऐसा बोलताहै और जिसवा

अदेश्यं यश्च दिशति निर्दि
श्यापह्नुतेचयः यश्चाधरोत्त
रानर्थान् विगीतान्नाववुध्य
ते ५३ अपदिश्यापदेश्यं च
पुनर्यस्त्वपधावति सम्यक्
प्रणिहिते चार्थे पृष्टस्सन्नाभि
नन्दति ५४ असंभाष्ये साक्षि
भिश्च देशे संभाषते मिथः
निरुच्यमानं प्रश्नं च नेच्छेय
श्चापि निष्पतेत ५५ ॥

नको प्राड्विवाक अर्थात् न्यायके देखने वा
ला पूछने वाला देखताहै और उसवातका स
माधान नही करना ५४ जो एकांतमे साक्षियों
के साथ संभाषण करताहै और भाषा अर्थात्
सवालके स्थिर करनेके लिये प्राड्विवाक पूछ
ताहै और उसका उत्तर नही देताहै और जो प
रदेशमे स्थित नही रहताहै ५५ जो बोला

म॰ स्मृ॰ टी॰ भा॰ २३१

271

ऐसा आह्विवाक ने पूछा और बोलता नहीहै और जो कथित अर्थका साक्षी लेख आदिसे सिद्ध नही करताहै और जो पूर्वापर बातको नही जानताहै ये सभ अपने अर्थकी हानि को पातेहै ५६ साक्षी हमारेहै ऐसा कहके और साक्षियोंको लाता नही इन कारणों॰

ब्रूहीत्युक्तश्च न ब्रूया दुक्तंच
न विभावयेत् न च पूर्वापरं
विद्या तस्मादर्थात्स हीयते
५६ साक्षिणःसंति मे त्युक्त्वा
दिशेत्युक्तो दिशेन्नयः धर्म
स्थः कारणै रेतै र्हीनं तमपि
निर्दिशेत् ५७ अभियोक्ता न
चे द्ब्रूया द्बध्यो दण्ड्यश्च धर्मतः
नचेत्त्रिपक्षा त्प्रब्रूया द्धर्मं
प्रति पराजितः ५८ ॥

से न्यायका देखनेवाला उसको हीन जाने अर्थात् हार जावेगा ऐसा जाने ५७ जो अर्थी राजस्थानमे कहके और भाषा समयमे अर्थात् प्रत्यर्थीके समीपमे उत्तर बोलता नहीहै सो व्यवहारका गौरव लाघव अर्थात् बडा छोटा विचारके बंध और दंडके योग्य होताहै ५८ ॥

जो प्रत्यर्थी जितने धनको अपलाप करताहै
और जो अर्थी जितने धनको मिथ्या बोलता॰
है दोनों अधर्मके जाननेवालेहै उस धनसे
दूना दंड दोनोंको राजादेवै ५९ जब प्रत्यर्थी
सभामें आके कहै कि हमने इसका धन न॰

यो यावन्निह्नवीतार्थं मिथ्या
यावति वा वदेत् तौ नृपेण
ह्यधर्मज्ञौ दाप्यौ तद्द्विगुणं द
मं ५९ पृष्टोऽपव्ययमानस्तु
कृतावस्थो धनेषिणा अवरैः
साक्षिभिर्भाव्यो नृप ब्राह्म॰
ण सन्निधौ ६० यादृशा धनि
भिः कार्या व्यवहारेषु सा॰
क्षिणः तादृशान्सप्रवक्ष्या
मि यथावाच्यमृतं चतैः ६१

ही लियाहै तब अर्थी प्राड्विवाकके समीप ती
नसे ऊपर साक्षियों करके अपने दिए हुए ध॰
नको सिद्ध करै ६० व्यवहारमें धनीलोगोंको
जैसा साक्षीकरना चाहिए और जैसा वह सा
क्षीलोग सत्यबोलें उस सबको हम कहैंगे ६१

आपत्कालके अभावमें जो कोई मिले सो सा
क्षी हो तो ऐसा न चाहिए किंतु गृहस्थ पुत्रवा
न कुलीन क्षत्रिय वैश्य शूद्र जाति अर्थीके
किए हुए साक्षिभावके योग्य होते हैं ६२ सब
वर्णोंके कार्यमें यथार्थ वक्ता सर्वधर्मके जा
नने वाले लोभसे रहित जो पुरुष हैं सो सा

गृहिणः पुत्रिणो मौलाः क्ष
त्रविट्शूद्रयोनयः अर्थ्युक्ताः
साक्ष्यमर्हन्ति न ये केचिदना
पदि ६२ आप्ताः सर्वेषु वर्णेषु
कार्याः कार्येषु साक्षिणः सर्व
धर्मविदोऽलुब्धा विपरीतां
स्तु वर्जयेत् ६३ नार्थसंबं
धिनो नाप्ता न सहाया न वै
रिणः न दृष्टदोषाः कर्तव्या
न व्याध्यार्ता न दूषिताः ६४

क्षी पनाके योग्य होते हैं और विपरीत अर्थात्
पूर्वकथित गुणसे हीनको वर्जन करना ६३
जिस अर्थका विवाद है उस अर्थ संबंधी जो पु
रुष है और मित्र सहाय करने वाला शत्रु जि
सका दोष सर्वत्र देखनेमें आया है सो और व्या
धिसे दुःखित दोषसे युक्त ६४ ॥

राजा रसोई करनेवाला नटआदि वेद पढनेवा
ला ब्रह्मचारी आदिसंगसे जो निकालागयाहै
१५ दास क्रूरकर्मकरने वाला विरुद्धकर्मकरने
वाला अस्सी वर्षके ऊपर वय वाला सोलह व
र्षसे नीचे वयवाला अकेला चांडाल आदि को

न साक्षी नृपतिः कार्यो न
कारुक कुशीलवौ न श्रोत्रि
यो न लिंगस्थो नसंगेभ्यो वि
निर्गतः १५ नाध्यधीनो नव
क्तव्यो नदस्यु ने विकर्मकृत
नवृद्धो न शिशु र्नैको नान्त्यो
न विकलेंद्रियः १६ नार्तो न
मत्तो नोन्मत्तो न क्षुत्तृष्णोप
पीडितः नश्रमार्तो नकामा
र्तो नक्रुद्धो नापि तस्करः १७

हे इंद्रियसे रहित १६ दुःखित मदनीयद्रव्य अ
र्थात् भांग गांजा आदिसे मत्त उन्मत्त अर्थात् भू
त आदिकी उपद्रव सहित क्षुधा तृषासे पीडि
त परिश्रमसे दुःखकामसे दुःखित क्रोध सहित
चोर इनसभको साक्षी न करना १७ स्त्रियोंकी

साक्षी स्त्री लोग होवे द्विजोंके साक्षी सदृश
द्विज लोग होवे शूद्रोंके साक्षी शूद्र होवे अन्त्य
अर्थात् चांडाल आदिके साक्षी अन्त्य होवे ६८ वा
दी अथवा प्रतिवादी अर्थको जो जाने सो साक्षी
होवे वन और गृह इन्होंके भीतर और शरीर

स्त्रीणां साक्ष्यं स्त्रियः कुर्यु ।
द्विजानां सदृशाः द्विजाः शू
द्राश्च संतः शूद्राणां मन्त्याना
मन्त्ययोनयः ६८ अनुभावीत
यः कश्चित्कुर्यात्साक्ष्यं विवा
दिनां अंतर्वेश्मन्यरण्ये वा ।
शरीरस्यापि चात्यये ६९ स्त्रि
याप्यसंभवे कार्य्यं बालेन स्थ
विरेण वा शिष्येण बंधुना वा
पि दासेन भृतकेन वा ७० ।

का नाश यह तीनों कार्य्यमें अरण लेनेमें जैसा
साक्षी बोलनेवाला कहाहै इसका आदर न क
रना ६९ इन तीनों कार्य्यमें पूर्वकथित साक्षी
के असंभवमें स्त्री बाल वृद्ध शिष्य बंधु दास
मजूर ये सब भी साक्षी होवें ७० ॥

बाल वृद्ध आतर उन्मत्त आदि इन्होंकी वाणी॰
को स्थिर न जानना ७१ साहस अर्थात् बलक
रके काम करना चोरी स्त्रीका ग्रहण वाणीसे
कठोर बोलना लाठी आदिसे मारना इन कर्मों
में साक्षियोंकी परीक्षा न करना जहां साक्षि॰

बालवृद्धातुराणां च साक्ष्येषु
वदतां मृषा जानीयादस्थि
रां वाचमुत्सिक्तमनसां त॰
था ७१ साहसेषु च सर्वेषु स्ते
यसंग्रहणेषु च वाग्दण्डयोश्च
पारुष्ये न परीक्षेत साक्षिणः
७२ बहुत्वं परिगृह्णीयात्साक्षि॰
द्वैधे नराधिपः समेषु तु
गुणोत्कृष्टान् गुणिद्वैधे द्वि॰
जोत्तमान् ७३ ॥

योंकी दो मत है तहां बहुत साक्षीके वचन
को ग्रहण करना संख्यामें सम है और दो मत॰
है तब गुणियोंके वाक्यको ग्रहण करना गुणि
योंके दो मत है ब्राह्मण जो हो उसके वाक्यको
ग्रहण करना ७३ साक्षात् देखनेसे और सुनने

से साक्ष्य अर्थात साक्षी पना सिद्ध होता है उस में सत्य बोलनेसे धर्म अर्थकी हानी नही होती ७४ भले लोगोंके सभामें सुननेसे और देखनेसे विरुद्ध जो बोलता है सो अधोमुख अर्थात नीचे मुख होकर नर्कमें जाता है ।

समक्ष दर्शनात्साक्ष्यं श्रवणाच्चैव सिध्यति तत्र सत्यं ब्रुवन्साक्षी धर्मार्थाभ्यां न हीयंते ७४ साक्षी दृष्टश्रुतादन्यद्विब्रुवनार्य्यसंसदि अवाङ्नरकमभ्येति प्रेत्य स्वर्गाच्च हीयते ७५ यत्रानिबद्धो पीक्षेत शृणुयाद्वापि किंचन पृष्टस्तत्रापि तद्ब्रूयात् यथादृष्टं यथाश्रुते ७६ ॥

और परलोकमें स्वर्गसे हानिको पाता है ७५ तम इसमें साक्षी हों ऐसा कहा नहीं है और व्यवहार को तो उसने देखा है और वह बुलाके पूछा जाय तो जैसा देखा है और सुना है तैसा कहे ७६

लोभ रहित एक पुरुषभी साक्षी होताहै और प
वित्रतासे सहित बहुत स्त्री साक्षी नही होती
क्यों कि स्त्रियोंकी बुद्धि स्थिर नहीहै और जो दो
षसे युक्तहै सोभी साक्षी नही हो सकते १७
अपने स्वभावसे जो कथन करे उस बातको
ग्रहण करना और जो सिखलानेसे कहै वह

ह्य

एकोलुब्धस्तु साक्षीस्याद्बह्व्यः
शुच्यापि न स्त्रियः स्त्रीबुद्धे र
स्थिरत्वान्न दोषैश्चान्येपि ये
वृताः १७ स्वभावेनैव यद्ब्रूयु
स्तद्ग्राह्यं व्यावहारिकं अतो
यदन्यद्विब्रूयुर्धर्मार्थे तदपा
र्थकम् १८ समंतः साक्षिणः
साम्ना नर्थि प्रत्यर्थि सन्निधौ
प्राड्विवाको नियुंजीत विधि
नानेन सांत्वयन् १९ ॥

बात व्यर्थहै अर्थात् उसको ग्रहण न करना १८
सभाके मध्यमें अर्थी और प्रत्यर्थीके समीप आ
गे जो विधान कहेंगे उस रीतिसे सांत्वन करते
अर्थात् साम उपायसे साक्षियोंको प्राड्विवाक
अर्थात् राजाके आज्ञाको पाके व्यवहार देखने
वाला ब्राह्मण नियोग करे अर्थात् आज्ञा देवे १९

अर्थीके अथवा प्रत्यर्थीके इसकार्य्यमें परस्पर
चेष्टित जो जानतेहो सोसत्यकरके कहो इस
कार्य्यमें तुम्हारा साक्षी पनाहै ८० साक्षी पना
में सत्य बोलने संते उत्कृष्ट लोक अर्थात् ब्र॰
ह्मलोक आदिको पाताहै और इस लोकमें ब

यद्द्वयो रनयो र्वेत्थ कार्य्येऽस्मि
न् चेष्टितं मिथः तद्ब्रूत सर्वं
सत्येन युष्माकं ह्यत्र साक्षि॰
ता ८० सत्यं साक्ष्ये ब्रुवन्सा
क्षी लोकानाप्नोति पुष्कला
न् इह चानुत्तमां कीर्तिं वा॰
गेषा ब्रह्मपूजिता ८१ साक्ष्ये
ऽनृतं वदन् पाशै र्बध्यते वा॰
रुणैर्भृशं विवशः शतमाजा
तीस्तस्मात्साक्ष्यं वदेदृतं ८२

डी कीर्तिको पाताहै और वाणी उसकी ब्रह्म
लोकमें पूजित होतीहै ८१ साक्षी पनामें झूठ बो
लने संते इसरके वशहोकर सो जन्म पर्यंत
वरुणके पाशमे अत्यंतबाधा जाताहै इसलि
ये सत्य बोलना ८२ ॥

सत्य करके साक्षी पवित्र होताहै और उसका
धर्म बढ़ताहै इसलिये सर्व वर्णमें साक्षीको
सत्यही बोलना चाहिए ८३ आत्माकी गति
और साक्षी आत्माहीहै इसलिये सब मनुष्यों
मे श्रेष्ठ अपनी आत्माहै उसका अपमान मत

सत्येन पूयते साक्षी धर्मः
सत्येन वर्द्धते तस्मात्सत्यं हि
वक्तव्यं सर्व वर्णेषु साक्षि-
भिः ८३ आत्मैव ह्यात्मनः ।
साक्षी गतिरात्मा तथात्मनः
मावमंस्था स्वमात्मानं नृणां
साक्षिणमुत्तमं ८४ मन्यते
वै पापकृतो न कश्चित्पश्य-
तीतिनः तांस्तु देवाः प्रपश्य-
न्ति स्वस्यैवान्तर पूरुषः ८५ ।

करो ८४ पाप करनेवाले यह मानतेहैं कि ह
मको कोई नहीं देखताहै और उस पापको दे
खता और अपने भीतर रहने वाला पुरुष देख
ताहै ८५ स्वर्ग भूमि जल हृदयमें स्थित जीव

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
२२१

206

चंद्र सूर्य अग्नि यम वायु रात्रि दोनों संध्या ध
र्म ये सब मनुष्योंके कर्मको जानने वाले हैं
८६ देवता और ब्राह्मणके समीपमें ब्राह्मण
क्षत्रिय वैश्य जो साक्षी हैं सो पवित्र होकर॰
पूर्वमुख अथवा उत्तर मुख हो उनसे पूर्वाह्ण
कालमें अर्थात् दिनके प्रथमभागमें पवित्र

देव ब्राह्मण सान्निध्ये साक्ष्यं
पृच्छेदृतं द्विजान् उदङ्मुखो
प्राङ्मुखो वा पूर्वाह्णे वै शुचिः
शुचीन् ८६ द्यौर्भूमि रापो॰
हृदयं चंद्रार्काग्नि यमानि॰
लाः रात्रिसंध्ये च धर्मश्च वृ
त्तज्ञाः सर्वदेहिनो ८७ ब्रूही
ति ब्राह्मणं पृच्छेत् सत्यं ब्रू
हीति पार्थिवं गोबीजकां
चनै र्वैश्यं शूद्रं सर्वैस्तु पात
कैः ८८

होकर साक्षीवा क पूछे ८७ कहो
ऐसा ब्राह्मणसे पूछे सत्य कहो ऐसा क्षत्रिय॰
से पूछे गौ बीज सुवर्ण इसकी सौगंध देके वै
श्यसे पूछे अर्थात् असत्य बोलोगे तो तुम्हारा
बैलबीया सोना ये सब नष्ट हो जायगे असत्यबो
लनेसे संपूर्ण पातक करके युक्त होगे ऐसा कहि
के शूद्रसे पूछे ८८

ब्राह्मण स्त्री बालक इनको मारने वाला मित्र
से द्रोह करनेवाला उपकारको न माननेवा
ला इन सभोंको जो लोक होताहै सो लोक
झूठ बोलने वाला तुमको होवे ८४ जन्म
भर जो पुण्य तुमनेकी है सो सम झूट बोल

ब्रह्मघ्नो ये स्मृतालोका ये
च स्त्रीबालघातिनः मित्र
द्रुहः कृतघ्नस्य तेतेस्युर्ब्रुव
तो मृषा ८४ जन्म प्रभृति
यत्किंचि त्पुण्यं भद्र त्वया
कृतम् तत्ते सर्वं शुनो गच्छे
यदिब्रूयास्त्व मन्यथा ८५ए
कोहम स्मीत्यात्मानं यत्वं
कल्याणमन्यसे नित्यं स्थि
तस्ते हृदये पुण्यपाप क्षिता
मुनिः ८६

तेसे जनों को मिले ८५ अपनेको तुम ऐसा
मानतेहो किमे अकेलाहूं सो न मानो नित्य
ही तुम्हारे हृदयमें पाप पुण्यका देखने वा
ला मुनि स्थितहै ८६ सूर्यका पुत्र यम देव

ता तुमारे हृदयमें स्थितहै उसके साथ ज॰
ब तुम्हारा विवाद नहो तो गंगा और कुरुक्षे
त्र इसमें मति जाओ अर्थात् झूट बोलनेसे
यमके साथ विवाद होगा तो उसके छोडने
के लिये गंगा और कुरुक्षेत्र इसमें जाना पडे

यमो वैवस्वतो देवो यस्तवै
ष हृदिस्थितः तेन चेद वि॰
वादस्ते मा गंगां मा कुरून्
गमः ९२ नग्नो मुंडः कपा॰
लेन भिक्षार्थी क्षुत्पिपासि
तः अंधः शत्रुकुले गच्छेद्यः
साक्ष्य मनृतं वदेत् ९३ अ॰
वाक् शिरा स्तमस्यंधे कि॰
ल्बिषी नरके व्रजेत् यः प्र॰
श्नं वितथं ब्रूयात् पृष्टः सन्ध
र्मे निश्चये ९४

गा ९२ जो साक्षी झूटबोले सो नंगा मुंड मुंडाए
हुए क्षुधा पियाससे पीडित अंधा हुआ भिक्षाके
अर्थ कपाल लिए हुए शत्रु कुलमें जावे ९३ ध
र्मके निश्चयमें पूछागया और झूटबोला सो पापी
नीचे शिर किए बहुत अंधेरासे युक्त नरकमें जाता
है ९४

जो सभामें जाके झूठ लेके जाके असत्य बोल
ताहै सो मनुष्य अंधेकी नाईं कांटा सहित म
छलीको भोजन करताहै ९५ जिस मनुष्य
के बोलते समेते क्षेत्रज्ञ अर्थात् अंतरात्मा शंका

अन्धो मत्स्यानिवाश्नाति स न
रः कण्टकैः सह यो भाषतेऽर्थ
वैकल्यमप्रत्यक्षं सभांगतः
९५ यस्य विद्वान् हि वदतः
क्षेत्रज्ञो नाभिशंकते तस्मान्न
देवाः श्रेयांसं लोकेन्यं पुरुषं
विदुः ९६ यावतो बांधवान्
यस्मिन् हंति साक्ष्ये नृतंवद
न् तावतः संख्यया तस्मिन्
शृणु सौम्यानुपूर्वशः ९७ ॥

को नहीं करताहै उससे श्रेष्ठ लोकमें दूसरे पु
रुषको देवता लोग नहीं जानते ९६ जिस कर्म
में झूठ बोलनेसे जितने बांधवों को साक्षी मार
ताहै सो सब हे ऋषिलोगो क्रमसे सुनो ९७

म० स्मृ०टी० भा० २९८

पशुके निमित्त गौके निमित्त घोडाके निमित्त पु
रुषके निमित्त साक्षी कर्ममे झूटबोलनेसे क्र०
मकरके पांच दश सौ सहस्र बांधवोंको नाश
करताहै ९८ सुवर्णके निमित्त साक्षी कर्ममें
असत्य बोलनेसे जो भएहैं और जो होंगे बांध
व तिन सभको और भूमिके निमित्त साक्षी ।

पंच पशुनृतेहंति दशहंति
गवानृते शतमश्वानृतेहंति
सहस्रं पुरुषानृते ९८ हंति
जातो नजातांश्च हिरण्यार्थे
नृते वदन् सर्वं भूमिनृते ।
हंति मास्मभूतनृतंवदीः ९९
अप्सुभूमिवदित्याहुः स्त्रीणां
भोगे च मैथुने अब्जेषु चैव
रत्नेषु सर्वेष्वश्ममयेषु च
१००

कर्ममें असत्य बोलनेसे सभको नाशकरता०
है इसलिए भूमिके निमित्त साक्षी कर्ममें कभी
असत्य नबोलना ९९ जलस्त्री संभोग अथा
त मैथुन कर्म मोती आदि वैडूर्य माणि आदि
इसमें भूमिकी नांई जानना १०० ॥

झूठ बोलनेमें दोषोंको देख कर जैसा देखाहो और जैसा सुनाहो तैसाबे मह्नत बोले ९१ जीविकाके लिये गोका रक्षा करने वाला ब नियांका काम करनेवाला पराई रसोई बना नेवाला गानेवाला दास कर्म करने वाला ॥

एतान् दोषानवेक्ष्यात्वं सर्वा न नृतभाषणे यथाश्रुतं यथा दृष्टं सर्व मेवाञ्जसा वद ९१ गो रक्षिका न्वाणि जकां स्तथा कारु कुशील वान् प्रेष्यान्वाद्रर्षिकां श्चैव विप्रान् शूद्र वदाचरेत् ९२ तद्वदन् धर्मतोर्थेषु जानन्न प्यन्यथा नरः न स्वर्गात्च्यव ते लोका देवी वाचं वदंति तां ९३

ब्याज लेनेवाला जो ब्राह्मणे इनको शूद्रकी ना ई आचरन करना ९२ जाना करके दयासे झू ठ बोलनेमें स्वर्गसे नहीं गिरता और इसकी वा णीको देवताकी वाणीसी मनु आदि बोलतेहें ९ ३

म॰
स्क॰ टी॰
भा॰
२३४

270

जहां सत्य बोलनेसे शूद्र वैश्य क्षत्रिय ब्राह्म
ण इन्होंका वध होता है तहां झूठ बोलना
यह सत्यसे भी श्रेष्ठ है १४ झूठ बोलके गृहमें
आयके सरस्वती देवताकी याग करे तब झू

शूद्र विट् क्षत्रविप्राणां यत्र
र्तोक्तौ भवेद्वधः तत्र वक्तव्य
मनृतं तद्धि सत्याद्विशिष्य
ते १४ वाग्दैवत्यैश्चरुभि
र्यजेरंस्ते सरस्वतीं अनृतस्यै
नसस्तस्य कुर्वाणा निष्कृतिं
परां १५ कूष्माण्डैर्वापि जुहु
यात् घृतमग्नौ यथाविधि
उदित्यृचा वा वारुण्या तृचे
नाब्दैवतेन वा १६ ॥

ट बोलनेसे पापसे छूटै १५ अथवा कूष्माण्ड मं
त्र यजुर्वेदमें है उसकरके किम्वा उदुत्तमं आ
वारुणि ऋचा इन दोनों मंत्रोंमेंसे कोई एक मंत्र कर
के घी को अग्निमें विधि पूर्वक होमकरे १६ ॥

ऋण आदि व्यवहारमें रोगरहित साक्षी डेढ महीनाके भीतर कुछ न कहे तो जिस व्यवहारमें साक्षीभयाहै उस व्यवहारके ऋणको और उसके दशवां अंश दंडको देवै ९१ न्याय सभामें बोलके साक्षी आया और सात दिनके भीतर रोग अग्निदाह ज्ञाति मरण इसमेंसे को

त्रिपक्षादब्रुवन्साक्ष्यमृणादिषु नरोऽगदः तदृणं प्राप्नुयात्सर्वं दशबन्धं च सर्वतः १ यस्य दृश्येत सप्ताहादुक्तवाक्यस्य साक्षिणः रोगोऽग्निर्ज्ञातिमरणमृणं दाप्योदमं च सः ८ असाक्षिकेषु त्वर्थेषु मिथो विवादमानयोः अविन्दंस्तत्त्वतः सत्यं शपथेनापि लम्भयेत् ४ ॥

ई एक उसको हो तो वह साक्षी उस ऋणको और उसका दशवां अंश दंडको देवै ९८ जिस व्यवहारमें साक्षी नहीं है और विचारसे सिद्धांत बातको न्याय देखनेवाला पा नही सकता तब आगे जो कहैंगे शपथ अर्थात सौगंधसे सिद्धांत बातको जाने ९९

देवता और बडे ऋषियोंने कार्यके लिये शपथ कीहै वसिष्ठनेभी विश्वामित्रके विवादमें पिय॰वनका बेटा सुदामा नाम राजके समीप शपथ किया इसस्थानमें ऐसी कथाहै विश्वामित्रने कहा कि वसिष्ठने हमारा सब लडका भक्षण किया तब अपनी शुद्धिके लिये वसिष्ठने

महर्षिभिश्च देवैश्च कार्यार्थं
शपथाः कृताः वसिष्ठश्चापि
शपथं शेपे पैयवने नृपे ॥११॰
न वृथा शपथं कुर्यात्स्वल्पे
ऽप्यर्थे नरो बुधः वृथाहि शप
थं कुर्वन् प्रेत्य चेह च नश्य॰
ति ॥१११॥ कामिनीषु विवाहे॰
षु गवां भक्ष्ये तथेंधने ब्रा॰
ह्मणाभ्युपपत्तौ च शपथे
नास्ति पातकं ॥११२ ॥

शपथ किया ॥११॰ थोडे अर्थमें भी मूर्ख लोग झूठ शपथ करै झूठ शपथ करनेसे इस लोकमें परलोकमें नष्ट होताहै ॥१११॥ स्त्री विवा॰ह गौके भोजनकी वस्तु ईंधन ब्राह्मण की रक्षा इनमें झूठ शपथ करनेसे पातक नहीं होता ॥११२॥

सत्यवाहन आयुध गौ बीज सुवर्ण संपूर्ण पात
क इन्हों करके क्रमसे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शू
द्रको शपथ देवै ।१३ अग्निको उठावे अथवा
जलमें डुबावे स्त्रीके पुत्रके मस्तक को छुआ

सत्येन शापयेद्विप्रं क्षत्रियं ।
वाहनायुधैः गोबीज कांचनै
वैश्यं शूद्रं सर्वैस्तु पातकैः ॥
अग्निम्वाहारयेदेन मप्सुचैनं
निमज्जयेत् पुत्रदारस्य वाप्ये
ने शिरांसि स्पर्शयेत्पृथक् ।१४
यमिद्धो न दहत्यग्नि रापोना
न्मज्जयन्ति च न चार्ति मृच्छ
ति क्षिप्रं सज्ञेयः शपथे शु
चिः ।१५ ॥

वे ।१४ जिसको अग्नि न जलावे और जल न उत
रावे और जो जलदी दुःखको न पावै उसको
शपथमें शुद्ध जानना ।१५ पूर्वकालमें छोटे

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
२८

भाईने वत्स ऋषीको अपवाद लगाया और व॰
त्स ऋषीने अपने शुद्धताके लिये अग्निको उठा
वे परंत सभ जगतका शुभाशुभ कर्मको जान
ने वाला अग्निमे एकरोमभी दहनन किया १६
जो जो कार्य साक्षियोंके झूठबोलनेसे सिद्धहो

वत्सस्य ह्यभिशस्तस्य पुराभ्रा
त्रायवीयसा नाग्निर्ददाह रो
मापि सत्येन जगतः स्पशः
१६ यस्मिन् यस्मिन् विवादे॰
तु कौटसाक्ष्यं कृतं भवेत् त
त्तत्कार्यं निवर्तेत कृतं चाप्य
कृतं भवेत् १७ लोभान्मोहाद्भ
यान्मैत्रा त्कामा त्क्रोधा त्तथै॰
वच अज्ञाना द्बालभावाच्च
साक्ष्यं वितथमुच्यते १८ ॥

गयाहै और पीछेसे साक्षियोंका झूट बोलना
जानागया तोसिद्ध होआ कार्य असिद्ध होजा॰
ताहै १७ लोभ मोह भय मित्रता काम क्रोध
अज्ञान बालकपना इन सभकारणोंमेसे कोई
एक कारणकरके साक्षी झूठबोलतेहै १८

इनको दंड विशेष क्रमसे कहेंगे ।११९ लोभ मो-
ह भय मित्रता इनसे झूठबोलनेमें साक्षियोंके
क्रमसे सहस्र पण पूर्व साहस मध्यम साहस
दो पूर्व साहस चार दंड देवे ।१२० काम क्रोध

एषामन्यतमे स्थाने यः साक्ष्य-
मनृतं वदेत् तस्य दंड विशेषां-
स्तु प्रवक्ष्याम्यनुपूर्वशः ।११९
लोभात्सहस्रं दंड्यस्तु मोहा-
त्पूर्वं तु साहसं भयाद्द्वे मध्य-
मौ दंड्यौ मैत्रात्पूर्वं चतुर्गुणं
।१२० कामाद्दशगुणं पूर्वं क्रोधा-
त्तु त्रिगुणं परम् अज्ञानाद्द्वे
शते पूर्णे बालिश्याच्छतमे-
व तु ।१२१ ॥

अज्ञान बालक पना इनसे झूट बोलनेमें साक्षि-
योंके क्रमसे पूर्व साहस दश उत्तम साहस ।
तीन दो सौ एकसौ पण दंड देवे ।१२१ अधर्मके रो

करनेसे लिये धर्मके स्थापनके लिये साक्षियोंके । झूठबोलनेसे इन दंडोंको पंडितोंने कहा (२२) क्षत्रिय वैश्य शूद्र ये तीनों वर्णसाक्षीहोके झूठबोले । तो धार्मिकराजा पूर्वकथित दंडको देके अपने राज्यसे बाहर निकालदेवे और ब्राह्मणको तो पू

एतानाहुः कौटसाक्ष्ये प्रोक्ता
न् दंडान्मनीषिणः धर्मस्या व्य
भिचारार्थ मधर्म नियमायच
२२ कौटसाक्ष्यं तु कुर्वाणान्
त्रीन्वर्णान् धार्मिको नृपः ।
प्रवासयेद् दंडयित्वा ब्राह्मणं
तु विवासयेत् २३ दशस्थाना
नि दंडस्य मनुः स्वायंभुवो ब्र
वीत् त्रिषु वर्णेषु यानिस्यु र
क्षतो ब्राह्मणो व्रजेत् २४ ॥

र्व कथित अपराधमें अपने राज्यसे धन सहित नि कालदेवे २३ क्षत्रिय वैश्य शूद्र इन तीनो वर्णोंके दंडका दशस्थान स्वयंभूके पुत्र मनुने कहा और ब्राह्मणतो शरीरदंडरहित गमनकरे (२४ ॥

उपस्थ उदर जिह्वा हस्त पाद नेत्र नासिका क
र्ण धन देह ये दश दंडके स्थानहैं १२५ वारं वा
र इच्छासे अपराध करना ग्राम बन आदि अ
पराधस्थान दिनरात अपराध काल अपराध
करनेवालेका धन शरीर आदि सामर्थ्य वडा

उपस्थ मुदरं जिह्वा हस्तौ पा
दौ च पंचमं चक्षुर्नासा च
कर्णौ च धनं देहस्तथैव च
२५ अनुबंधं च विज्ञाय देशं
कालौच तत्त्वतः सारापराधौ
चालोक्य दंडं दंड्येषु पातये
त् २६ अधर्मं दंडनं लोके
यशोघ्नं कीर्तिनाशनं अस्व
र्ग्यं च परत्रापि तस्मात्तत्परि
वर्जयेत् १२७ ॥

छोटा अपराध इन सबको देखकर दंडके यो
ग्य मनुष्योंको दंडदेवे १२६ लोकमें यश अर्था
त् जीते हुए प्रसिद्ध कीर्ति अर्थात् मरेहुए प
सिद्ध इन दोनोंका नाशकरनेवाला और पर
लोकमें स्वर्गका नाश करनेवाला अधर्म दंड

है इसलिए अधर्मसे दंड न करना १२७ दंडके योग्य नहीं है उसको दंड देनेसे और के योग्य है उसको न दंड देनेसे राजा बडा अपयशको पाता है और नरकमें जाताही है १२८ प्रथमतो तुमने अच्छा नही किया फेर ऐसा न करना ऐसी वाणीसे ड

अदंड्यान्दंडयन्राजा दंड्यांश्चैवाप्यदंडयन् अयशो महदाप्नोति नरकं चैव गच्छति १२८ वाग्दंडं प्रथमं कुर्याद् धिग्दंडं तदनंतरं तृतीयं धनदंडं तु वधदंडमतःपरं १२९ वधेनापि यदा त्वेता न्निग्रहीतुं न शक्नुयात् तदैषु सर्वमप्येतत् प्रयुंजीत चतुष्टयं १३० ॥

राना यह पहिला दंड है तदनंतर धिक्कार तुमको है बडा पापी है मूर्ख है तेरा जीना न होवे ऐसा कहना यह दूसरा दंड है धनदंड तीसरा है वध अर्थात् अंगच्छेद दंड चौथा है १२९ केवल वध करके भी अपराधीको वश न कर सके तो चारो दंड देवे १३०

लोकके संव्यवहारके लिये तांबा रूपा सो
नाकी संज्ञा कहीहै उनसंपूर्णोंकोंमें कहूंगा ३१
झरोखोंमें सूर्यके किरण आनेसे जो तिनका दे
ख पडताहै वह सब प्रमाणमें पहिला क

लोकसंव्यवहारार्थं याः संज्ञाः
प्रथिता भुवि ताम्ररूप्य सुव-
र्णानां ताः प्रवक्ष्याम्यशेषतः
३१ जलांतरगते भानौ यत्
सूक्ष्मं दृश्यते रजः प्रथमं त-
त्प्रमाणानां त्रसरेणुं प्रचक्ष
ते ३२ त्रसरेण्वोऽष्टौ विज्ञेया
लिक्षैका परिमाणतः ता रा-
ज सर्षप स्तिस्र स्ते त्रयो गौ-
र सर्षपः ३३ ॥

होताहै उसको त्रसरेणु कहतेहैं ३२ आठ त्र
सरेणुका १ लिक्षा ३ लिक्षाकी १ राई ३ राईका १
पीली सरसों होताहै ३३ छ सरसोंका १ म

म०
स्मृ०टी०
भा०
२८४

ध्यम यव ३ यवकी १ रत्ती ५ रत्तीका १ मासा १६ मासाका १ सुवर्ण होता है १३४ चार सुवर्णका १ पल १० पलका १ धरण होता है अब रूपेका मान कहते हैं

284

सर्षपाः षड्यवो मध्य स्त्रियवं त्वेक कृष्णलं पंच कृष्णलको माषस्ते सुवर्णस्तु षोडश १३४ पलं सुवर्णाश्चत्वारः पलानि धरणं दश द्वे कृष्णले समधृते विज्ञेयो रौप्यमाषकः १३५ ते षोडश स्याद्धरणं पुराणश्चैव राजतः त्वतः सौवर्णिको निष्को विज्ञेयस्तु प्रमाणतः १३६ ॥

कर्षापणं तु विज्ञेयस्ताम्रिकः कार्षिकः पणः १३६

२ रत्तीका १ मासा १३५ सोलह मासाका १ धरण और उसको पुराणभी कहते हैं १६ मासा ताम्बाको ताम्रिक और कार्षिक पण कहते हैं १३६ ॥

दश धरणका १ शतमान ४ सुवर्णका १ नि
ष्क होताहै १३७ अढाई सो पणका प्रथम ॰
साहस ५०० पणका मध्यम साहस १००० प॰
णका उत्तम साहस होताहै १३८ सभामें ॰
जाके प्रथमर्ण अर्थात् ऋणी कहै कि उत्त॰
मर्ण अर्थात् धनीका ऋण हमको देनाहै

धरणानि दशज्ञेयः शतमा
नस्तु राजतः चतुः सौव॰
र्णिको निष्को विज्ञेयस्तु
प्रमाणतः १३७ पणानां द्वेश
ते सार्द्धे प्रथमः साहसः स्मृ
तः मध्यमः पंचविज्ञेयः स
हस्रं त्वेव चोत्तमः १३८ ऋ
णेदेये प्रतिज्ञाते पंचकं श
त मर्हति अपह्नवे तद्विगु
णं तन्मनो रनुशासनं १३९

तो १०० पण पीछे ५ पण देउदेवै और सभामें
जाके अपलाप करै अर्थात् हम नही धरात
ऐसा कहै और उत्तमर्ण साक्षी और पत्रसे अ
पना देना सिद्धकरै तो १०० पण पीछे १० प॰
ण देउ प्रथमर्णके ऊपर होवै यह मनुजी
की आज्ञाहै १३९ द्रव्यके बढाने वाली

म. स्मृ. टी. भा. २८५

285

वशिष्ठ ऋषिजीकी कई हुई जो वृद्धि अर्थात्
व्याज उसको त्याग करै सो रुपैया का अस्सी
वां भाग अर्थात् १ रुपैया लेवे महीना भरमें
१०० रुपैया पीछे व्याज लेनेवाला १४१ अथवा
सज्जनोंके धर्मको स्मरण करत संते १०० रु

वसिष्ठविहितां वृद्धिं सृजे
द्वित्तविवर्द्धिनीम् अशीति
भागं गृह्णीयान्मासाद्वार्द्धु
षिकः शते १४१ द्विकं शतं
वा गृह्णीयात्सतां धर्ममनु
स्मरन् द्विकं शतं हि गृह्णा
नो न भवत्यर्थकिल्बिषी
१४२ द्विकं त्रिकं चतुष्कं च
पंचकं च शतं समं मासस्य
वृद्धिं गृह्णीयाद्वर्णाना
मनुपूर्वशः १४२ ॥

पैया पीछे २ रुपैया महीना भरमें लेवे इसके
लेनेसे द्रव्य पापी नहीं होता १४१ ब्राह्मण क्षत्रि
य वैश्य शूद्र इन्होंसे क्रमकरके मासा भरमें
१०० रुपया पीछे २।३।४।५ रुपया लेवे १४२ ॥

उपकार करनेवाला अर्थात् भूमि गो दास आ
दि जो आधि अर्थात् बंधक उसमें व्याज न
लेना बंधकको बहुत दिनभया और जित-
ना द्रव्य लिया रहा बंधकरखके उसका द्-
ना धनको बंधकके फलसे धनीने पाया त
ब उस बंधकको किसीको देडाले या बेचडा
ले सो नहीं जब तक मूल धनको न पावै

नत्वेवाधौ सोपकारे कौसी-
दीं वृद्धि माप्नुयात् नचाधेः
कालसंरोधा न्निसर्गोस्ति न
विक्रयः ४३ न भोक्तव्यो बला
दाधि र्भुंजानो वृद्धि मुत्सृजे
त् मूल्येन तोषयेच्चैनं माधि
स्तेनोन्यथाभवेत् ४४ आधि
श्चोप निधिश्चोभौ न काला-
त्यय मर्हतः अवहार्यौ भवे-
तौ तौ दीर्घकाल मवस्थितौ ४५

तब तक उसके फलको भोग कर्त्ता है १४३ ब
लसे बंधकको भोग न करै और करै तो व्याजको
छोड़देवै अथवा जिसकी वस्तु है उसको मूल
देके सन्तुष्ट करै ऐसा न करै तो बंधकका चोर
होता है १४४ बंधक और उपनिधि अर्थात् प्रीति
करके भोगके अर्थ अर्पित जो द्रव्य इन दोनोंका
जब स्वामी मांगे तबै देना चाहिए यह न कहना

म०
स्०टी०
भा०
२८१

286

कि इतना दिनमें देंगे और बहुत दिनके रहने-
से यह दोनो नष्ट नहीं होते मूल स्वामीका स्वा-
मित्व अर्थात् मालिकपना बने रहता है जिसके
यहां है उसका स्वामित्व उसमें नहीं रहता १४५
धेनु ऊंट घोड़ा बैल इन सभको स्वामीके प्रेमसे
कोई भोग करै तो जिसके वह सभ हैं उसका
स्वामित्व नष्ट नहीं होता १४६ धनी देखता है औ

संप्रीत्या भुज्यमानानि न न-
श्यंति कदाचन धेनुरुष्ट्रो वह-
न्नश्वो यश्च दम्यः प्रयुज्यते १४६
यत्किंचिद्दशवर्षाणि सन्नि-
धौ प्रेक्षते धनी भुज्यमाने प-
रैस्तूष्णीं न स तल्लब्धुमर्हति
१४७ अजडश्चेदपोगंडो विष-
ये चास्य भुज्यते भग्नं तद्व्य-
वहारेण भोक्ता तद्धनमर्हति
१४८

र मना नहीं करता उसको वस्तुको दूसरा मनु-
ष्य दशवर्षतक भोगकिया फेर धनी उस वस्तुको
नहीं पासकता १४७ क्यों कि भोगकरनेवाला क-
हता है कि यह जड अर्थात् बौरहा और बालक
नहीं है इसके देखते हुए भोग किया है तब वह
उत्तर कुछ नहीं देसकता इसलिये व्यवहारसे वह
भोग होता है भोगकरनेवाला उसद्रव्यको पाता है १४८

बंधक सीमा बालकका धन निक्षेप अर्थात् देखाके कोई वस्तुको किसीके स्थापन किया उपनिधि अर्थात् देखाके गिनाये बिना कोणी वस्तुको किसीके यहां स्थापित किया स्त्री अर्थात् दासी राजा और वेदपाठी इन दोनोंका धन ये सब भोग करनेसे नष्ट नहीं होते ॥४॥

आधिः सीमा बालधनं निःक्षेपोपनिधिः स्त्रियः राजस्वं श्रोत्रियस्वञ्च न भोगेन प्रणश्यति ॥४॥ यः स्वामिनाननुज्ञातमाधिं भुंक्तेविचक्षणः तेनार्द्धं वृद्धिर्मोक्तव्या तस्य भोगस्य निष्कृतिः ॥५॥ कुसीदवृद्धिर्द्वैगुण्यं नात्येति सकृदाहृता धान्ये सदे लवे वाह्ये नातिक्रामति पंचतां ॥६॥

बंधकके स्वामीकी आज्ञा बिना जो बंधकका भोगकरे सो व्याजको छोडदेवे उस भोगका यही प्रायश्चित्त है ॥५॥ एकही वेर लेनेमें जितना मूलहै उतनाही व्याज मिलताहै औ र अन्न वृक्षका फल ऊर्णा आदि लोम वृषभ आदि इन सभोंका व्याज मूलका चौगुनाके

म॰
स्म॰टी॰
भा॰
२८७

287

ऊपर नहीं मिलता ५१ शास्त्र कथित वृद्धिसे अ
धिक वृद्धि नहीं होती और जिस वर्णसे जो वृ॰
द्धि लेनेको कहाहै उसका उलट पलट करने
से अाक्षित पथ कहाताहै और उधार देके फेर मां
गा उसने न दिया तो उसदिनसे लेकर ५ रुपैया
सैकडा वृद्धि लेना ।५२ एक दो तीनमास बीते पी
छे गणना करके एक ही वेर वृद्धि देना इस रीति
से नियमकरके वर्ष पर्यन्त वृद्धि ग्रहण करै और
वर्षके बीते नियमकी वृद्धिका न लेवै और शा॰
स्त्रसे अकथित वृद्धिको नलेवै और लेवै तो अध

कनाऽनुसारा हधिका व्यतिरि
क्ता नसिध्यति ऊसीदपथमा
हुस्तं मान्द्वंके शतमर्हति ५२
नाति सांवत्सरीं वृद्धिं नचा
दृष्टां पुनर्हरेत् चक्रवृद्धिः
कालवृद्धिः कारिताकायि॰
का च या ।५३ ॥

से होताहै चक्रवृद्धि कालवृद्धिः कारिता कायि॰
का इन वृद्धियोंको न लेवै क्यों कि ये सब शास्त्र
कथित नहींहै शरीरके लेशसे जो फल मिलता
है सो कायिक वृद्धि कहातीहै जैसे वृद्धिदेनेके
निमित्त गौ बैलको बंधक रक्खा उसके दोहन
वाहनसे वृद्धिका दिया मासमें लेना वह कालि
का कहातीहै वृद्धिके वृद्धि चक्र वृद्धि कहातीहै
ऋणीने आपसे जो किया सो कारिता कहातीहै ति
समें चक्र वृद्धितो स्वरूपे करके निंदितहै द्विगुण
से अधिक लेनेसे कालवृद्धि निंदितहै अधिकदो
हन वाहनसे कायिका निंदितहै ऋणीने आपत्कालमें धनीसे पीडापाके कियासो
कारिता कहातीहै सो भी निंदितहै ।५३ ॥

ऋण देनेको समर्थ नहीं है और फेर पत्र लि
खनेको चाहे तो वृद्धिदेके पुनः पत्र लिखे ५ ४
जब वृद्धि देनेकी भी सामर्थ न हो तो वृद्धिसं
हित मूलका दूसरा पत्र लिखे ५५ गाडी भा
डिका भाडा करनेवाला जो पुरुष सो गाडी
वान जो करै है उसको न करै तो उसके संपू

ऋणं दातुमशक्तो यः कर्तु
मिच्छेत्पुनः क्रियाम् स दत्वा
निर्जितां वृद्धिं करणं परिव
र्तयेत् ५४ अदर्शयित्वा तत्रै
व हिरण्यं परिवर्तयेत् याव
ती संभवेद् वृद्धिस्तावतीं दा
तुमर्हति ५५ चक्र वृद्धिं स
मारूढो देशकाल व्यवस्थि
तः अतिक्रामन्देशकालौ
न तत्फलमवाप्नुयात् ५६

र्ण फलको नहीं पाता जैसे इहांसे बनारस त
क इतना बोझा पहुंचादेंगे हमको इतना दे
ना अथवा एकमास बोझा ढोवेंगे इतना देना
ऐसा करके काम करने लगा और पूर्व कथि
तको संपूर्ण न किया तो संपूर्ण भाडाको न पावे

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
२८८

288

गा १५६ समुद्रके मार्गमें कुशल देशकाल अर्थ
इसके देखने वाले जो वृद्धि स्थापन करें उस स्था-
नमें सोई लेना १५७ जो मनुष्य जिस मनुष्यका
प्रतिभू अर्थात् जामिन होवे दिखानेके लिये और
देखनेके समयमें दिखाना नहीं सो अपने धनसे

समुद्रयाने कुशला देशका-
लार्थदर्शिनः स्थापयंति तु
यां वृद्धिं सा तत्राधिगमं प्र-
ति १५७ यो यस्य प्रतिभूस्तिष्ठे
द्दर्शनायेह मानवः अदर्शय
न्स तं तस्य प्रयच्छेत्स्वधनादृ
णम् १५८ प्रातिभाव्यं वृथादा
नं माक्षिकं सौरिकं च यत्
दंडशुल्कावशेषं च न पुत्रो
दातुमर्हति १५९ ॥

उस ऋणको देवे १५८ जामिनी वृथा दान अर्थात्
धूर्तभाट माल इन सभको दिया इन करके जो ऋ-
णहै और पासा मद्य दंड इन्होंका शेष शुल्क अर्थात्
~~धूर्तभाट माल इन सभको~~ इजाराका शेष ये सभ पि-
ताके किये हों तो पुत्र उसको न देवे १५९ ॥

दान प्रतिभू अर्थात् माल जामीन इसके मरे
पीछे इसका पुत्र इस ऋणको देवै जिस ऋण
के देनेके निमित्त इसका पिता जामिन हुआ
है और दर्शन प्रतिभू के मरे पीछे इसका पु
त्र देखनेके समयमें ऋणीको न देखावै ५९॰
दर्शन प्रतिभू प्रत्यय प्रतिभू अर्थात् विश्वास
जामिन कि हमारे विश्वाससे इसको धन दो

दर्शनप्रतिभाव्येत्र विधिः स्या
त्पूर्वचोदितः दानप्रतिभुवि
प्रेते दायादानपि दापयेत् ६०
अदातरि पुनर्दाता विज्ञात
प्रकृतावृणं पश्चात्प्रतिभुवि
प्रेते परीप्सेत् केन हेतुना ६१
निरादिष्टधनश्चेत्तु प्रतिभूः
स्यादलंधनः स्वधनादेव तद्द
द्यान्निरादिष्ट इति स्थितिः ६२

तमको न ठगेगा भले मनुष्यका पुत्र है अच्छा
ग्राम इसको है बहुत अन्नका उत्पन्न करने वा॰
ली भूमि इसको है इन दोनो ऋणीसे जितना
ऋण देना है उतना धनको लेके प्रतिभू हुए
हों और पीछे मरगए तो धनी अपना धनले॰
नेकी इच्छा किसकारणसे करै प्रतिभू तो मर
गया और उनके पुत्रसे लेनेका निषेध तो पूर्व॰
कह आए है ऐसा शंकाका करके कहते हैं ६१

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
२८४

289

कि जो धनलेके पिता प्रतिभू भयाहै इसी धनसे
प्रतिभूका पुत्र ऋणको देवै ।६२। मत्त भांग गांजा
आदिसे उन्मत्त व्याधि आदिसे पीडित आर्त दुःखि
त पेडहरु बाल वृद्ध संबंध रहित इन्होंकरके कि
या व्यवहार सिद्ध नहीहोता ।६३। यह हमको क
रनाहै ऐसा लिखके स्थिर किया और वह जब शा

मत्तोन्मत्तार्त्तव्यधीनैर्बालेन
स्थविरेणवा असंबद्धकृतश्चै
व व्यवहारो न सिध्यति ।६३।
सत्या न भाषा भवति यद्यपि
स्यात्प्रतिष्ठिता बहिश्चेद्भाष्य
ते धर्मान्नियताद्व्यवहारिका
त् ।६४। योगाधमनविक्रीतं
योगदानप्रतिग्रहं यत्र वाप्यु
पधिम्पश्येत्तत्सर्वं विनिवर्त
येत् ।६५।

स्त्र कथित धर्म और परम्परासे चला आया जो स
मीचीन व्यवहार इन दोनोंसे बाहर होवै तो सत्य॰
नहीहै अर्थात् उसको न करना ।६४। छल करके
जो बंधक विक्रय दान प्रतिग्रह है सो सभ निह
त हो जाताहै और जिसकार्यमें छल जाना गया
सो सभ निहत होताहै ।६५ ॥

ऋणलेके कुटम्बके अर्थ व्यय करके ऋणी
मरगया तो उस ऋणको विभक्तबांधवलोग
देवै ११ अपने देशमें अथवा विदेशमें कुटंब
अर्थात् पोष्यवर्ग अर्थ दासने भी जिस व्यव
हारको किया उस व्यवहारको कुटुंबी अ-

गृहीता यदि नष्टः स्यात् कुटुं-
बार्थे कृतोव्ययः दातव्यं बां-
धवैस्तत्स्यात् प्रविभक्तैरपि
स्वतः ॥ ११ कुटुंबार्थेध्यधीनो-
पि व्यवहारं यमाचरेत् स्वदे-
शे वा विदेशे वा तं ज्यायान्न
विचालयेत् ॥ १२ बलाद्दत्तं
बलाद्भुक्तं बला यच्चापि ले-
खितं सर्वान् बलकृतानर्-
थान् न कृतान्मनुरब्रवीत् ॥ १३

र्थात् पोष्यवर्गका स्वामी विचलन नकरै किंतु
माने १२ बलसे देना भोग करना पत्रलिखा-
ना इन आदिसे जितने कार्य किए गए हैं सो स-
ब अकृत हैं अर्थात् सिद्ध नहीं हैं १३ साक्षी

प्रतिभू कुलये तीनों परके अर्थ क्लेशको पातेहै
और ब्राह्मण धनी वनिया राजा ये चारों परके अ
र्थ पडतेहै इसलिये पूर्व कथित जो तीनहै सो अर्थ
महीं क्रमसे अपने कार्यको स्वीकार नकरै अर्था
त् साक्षीपना जामिनी व्यवहार देखना इन का॰
मोंको नकरै और जो पीछे कथित जो चारहै सो
क्रमसे अपने कार्यको बलसे ग्रहन करै अर्थात्
दान फलोत्पादन ऋण द्रव्यार्पण विक्रय व्य॰
वहार दर्शन इनको परअर्थ करै अर्थात् ब्राह्म॰

त्रयः परार्थे क्लिश्यंति साक्षि
णः प्रतिभूः कुलं चत्वारस्तू
पचीयंते विप्रआढ्यो वणिङ्नृ
पः १६९ अनादेयं नाददीत प
रिक्षीणोपि पार्थिवः नचादे
यं समृद्धोपि सूक्ष्ममप्यर्थमु
त्सृजेत् १७० ॥

ण दाता धनी ऋणीको कीननेवालेको राजा व्य
वहार करने वालेको बलसे कार्यमें ग्रहन करै १६९
निर्धन भी राजा हो परंतु ग्रहणके योग्य जो वस्तु
नहींहै उसको ग्रहण नकरै और बडा धनी भी
राजाहो परंतु ग्रहणके योग्य छोटी भी वस्तुहै
तो उसको ग्रहण करै १७० ॥

ग्रहणके योग्य वस्तुके त्यागसे और ग्रहणके यो
ग्य वस्तु नहीं है उसके ग्रहणसे राजाकी दुर्ब-
लता प्रकाशित होतीहै और वह राजा इस लो
कमें और परलोकमें नाशको पाताहै ११ ग्र-
हणके योग्य वस्तुको लेनेसे और सजातीयों
का सजातीयके साथ शास्त्रोक्त विवाह आ-

अनादेयस्य चादाना दादेय-
स्य च वर्जनात् दौर्बल्यं ख्या-
प्यते राज्ञः सप्रेत्येह च नश्य-
ति ११ स्वदाना द्दाण संसर्गा-
त्त्वबलानां च रक्षणात् बले
संजायते राज्ञः सप्रेत्येह च
वर्द्धते १२ तस्माद्यम इव स्वा-
मी स्वयं हित्वा प्रियाप्रिये
वर्तेत याम्यया वृत्त्या जित-
क्रोधो जितेंद्रियः १३ ॥

दि संबंध करानेसे बलरहित प्रजाओंके रक्षणसे
राजाको बल होताहै और वह राजा इसलोकमें
और परलोकमें बढताहै १२ इसलिये यमकी
नाई राजा प्रिय अप्रियको छोडकर क्रोध और
इंद्रिय इनको जीतकर रहै १३ जो राजा मो
हसे अधर्म करके कार्यको करै उस दुरात्मा-

म० स्म० टी० भा० २५१

राजाको शत्रुलोग वशकरलेतेहैं १७४ जो रा
जा काम क्रोधको छोड़कर धर्मसे अर्थको देख
ताहै उसके पीछे सब प्रजा रहतेहैं जैसे सब
नदी समुद्रके पीछे रहतीहैं अर्थात् समुद्रमें
जाकर फेर उससे भिन्न नहीं होतीं तिसप्रकार

यस्त्वधर्मेण कार्याणि मोहा
त्कुर्यान्नराधिपः अचिरात्तं दु
रात्मानं वशे कुर्वंति शत्रवः
१४ कामक्रोधौ न संयम्य ।
योऽर्थान्धर्मेण पश्यति प्रजा
स्तमनुवर्तंते समुद्र मिव सिं
धवः १५ यः साधयंतं छंदे
न वेदये द्धनिकं नृपे सरा
ज्ञा तच्चतुर्भागं दाप्य स्तस्य च
तद्धनम् १६ ॥

से राजासे भिन्न नहीं रहते १७५ जो धनी अपने
बलसे ऋणीसे अपने दिये धनको ग्रहण कर
ताहै और ऋणी राजाके पास जाकर निवेदनक
रै तो राजा उस ऋणीसे ऋणका चतुर्थांश दंड
आपलेवे और धनीको धन दिलादेवे १७६ ॥

धनीके समान जातिवाला अथवा धनीसे नीच
जाति वाला जो ऋणीहै और धन देनेसे असमर्थ
है सो धनीका काम करके ऋणको पटावे और
जो धनीकी जातिसे ऊंची जातिवाला ऋणीहै
सो धनीका काम न करै किंतु धीरे धीरे जबज
ब मिले तब देवै ७७ इस विधि करके परस्पर

कर्मणापि समंकुर्याद्धनि-
कायाधमर्णिकः समोव कृ
ष्ट जातिस्तु दद्याच्छ्रेयांस्तु त
च्छनैः ७७ अनेन विधिना
राजा मिथो विवदतां नृणां
साक्षि प्रत्यय सिद्धानि का-
र्याणि समतां नयेत् ७८ कु
लजे वृत्तसम्पन्ने धर्मज्ञे सत्य
वादिनि महापक्षेधनिन्या-
र्ये निक्षेपं निक्षिपेद्बुधः ७९

विवादकरनेवाला मनुष्योंके साक्षियोंसे सिद्ध
जो कार्य उसको राजा विरुद्ध वाक्यको खंडन क
रके सम करै ७८ कुलीन साधु आचार युक्त धर्मजा
नने वाला सत्यबोलनेवाला बहुत पुत्र पौत्र आ
दिसे युक्त धनी ऐसा जो मनुष्यहै उसके यहां
निक्षेपको स्थापन करना ७९ जो मनुष्य जि

स मनुष्य के हाथमें जिसवस्तुको जिस प्रका
रसे स्थापनकरै सो उससे उस वस्तुको उसी
प्रकारसे लेवै जैसा देना वैसाही लेना ८० नि
क्षेपकरने वाला अपनी वस्तुको जिस पुरुष
को यहां निक्षेप कियाहै उससे मांगताहै और

यो यथा निक्षिपेद्धस्ते यम-
र्थं यस्य मानवः स तथैव गृ
हीतव्यो यथादाय स्तथाग्र-
हः ८० यो निक्षेपं याच्यमा-
नो निक्षेप्तुर्न प्रयच्छति स-
याच्यः प्राड्विवाकेन तन्नि
क्षेप्तुरसन्निधौ ८१ साक्ष्यभा-
वे प्रणिधिभि र्वयोरूप सम
न्वितैः अपदेशैश्च संन्यस्य
हिरण्यं तस्य तत्त्वतः ८२ ॥

वह देता नहीं तब निक्षेप करनेवालेके असं
निधिमें जिसके पास निक्षेपहै उससे प्राड्विवाक
पूछे ८१ साक्षीके अभावमें अपदेश अर्थात् रा-
जोपद्रव आदिका बहानाके करनेवाले अपने
जो सभ्य और चारहैं इन्होंको जो निक्षेप नहीं देता
उसकी यहां हिरण्यको रखके ८२

तदनंतर निक्षेप करने वाला जिसके यहां नि
क्षेप कियाहै उससे अपने निक्षेपको मांगे जब
वह देवे तो उसको सच्चा जानना उससे जो नि
क्षेपको मांगताहै सो झूठाहै पर और जब सभ्य
अथवा चारने जो निक्षेप कियाहै उसको भी

सचिवैः प्रणिधिभिः यथान्या
से यथाकृते न तत्र विद्यते
किंचि यत्परैः अभियुज्यते ध च
तेषां न दद्याद्यदि तु तद्धिरः
ण्यं यथाविधि उभौ निगृह्य
दाप्यः स्यादिति धर्मस्य धार
णात् १८४ निक्षेपोपनिधी नि
त्यं न देयौ प्रत्यनंतरे नश्यतः
तो विनिपाते ता वनिपाते
त्वनाशिनौ १८५ ॥

वह निक्षेपधारी न देवे तो उससे दोनो निपतः
को राजा लेवे यह धर्मका निश्चयहै १८४ नि
क्षेप और उपनिधि इन दोनोंको स्वामीके पुत्र
आदिको न देवे कितु जिसका निक्षेपहै उसीको

म॰
स॰टी॰
भा॰
२९३

293

देवे १८५ कोई वस्तुका निक्षेप करके निक्षेपक
रनेवाला मरगया अनंतर जिसके यहां निक्षेप
है वह आपसे उस निक्षेपको मरे हुए निक्षेपक
रनेवालेके धनग्रहण करनेवालेको समर्पण
किया फेर उससे निक्षेप करनेवालेका पुत्र आ
दि और राजा ये दोनों दूसरे वस्तुको न मांगे
अर्थात् यह न कहै कि दूसरी भी वस्तु तुम्हा

स्वयमेव तु यो दद्या न्मृतस्य
प्रत्यनंतरे न स राज्ञा नियोक्त
व्यो न निक्षेप्तुश्च बंधुभिः १८६
अच्छलेनैव चान्विच्छे त्तमर्
र्थं प्रीतिपूर्वकं विचार्य तस्य
वा वृत्तं साम्नैव परिसाधयेत्
१८७ निक्षेपेष्वेषु सर्वेषु विधिः
स्यात्परिसाधने समुद्रे नाप्नु
यात्किंचि द्यदि तस्मा न्न संहरे

रे यहां रक्खी देत १८७ ॥ है उसको दो
ऐसा न कहै १८६ छल रहित साम उपायसे
प्रीति पूर्वक जिसके यहां निक्षेप रक्खा गयाहै
उसके आचरणको विचार कर निक्षेप किए हुए
अर्थको साधन करै १८७ निक्षेपकी विधिकहा
और मुद्रित वस्तुको जैसा ले तैसा दे मोहरको
तोडकर उसमें से कुछ न लेवे तो कुछ दूषण
नहीं पाता १८८ ॥

निक्षेप किए हुए वस्तु चोरसे हरी गई अथवा ज॰
लसे बह गई अग्निसे भस्म हुए तो जिसके पास र
क्खी है वह न देवै जब उसमें से कुछ न लिए
हो ९४ निक्षेपका हरण करने वाला और निक्षे॰
प रक्खे बिना निक्षेपको मांगने वाला इन दोनों

चौरैर्हृतं जलेनोढ मग्निना द
ग्धमेववा न दद्या यदि तस्मा
त्स नसंहरति किंचन ९४ नि
क्षेपस्यापहर्तार मनि क्षेप्ता॰
रमेवच सर्वैरुपायै रन्विच्छे
च्छपथै श्चैव वैदिकैः ९॰ यो
निक्षेपं नार्पयति यश्चा नि॰
क्षिप्य याचते तावुभौ चौरव
च्छास्यौ दाप्यौ वा तत्समन्द॰
मे ९१

को वेदमें कथित जो शपथ और संपूर्ण उपाय
उसकरके सिद्धांत वस्तुका जाने ९॰ जो नि॰
क्षेपको नही देता और जो बिना रक्खे निक्षेप
को मांगता है दोनोंको चोरकी नाई दंड देना
अथवा निक्षेपके समान दंड देना ९१ निक्षेप

और उपनिधि इन दोनोंको जो नही देताहै उसको
निक्षेप उपनिधिके समान दंडदेना १९२ छलक
रके परद्रव्यको जो हरताहै सहाय सहित उस॰

निक्षेपस्यापहर्तारं तत्समं दाप
येद्दमं तथोपनिधिहर्तारं म॰
विशेषेण पार्थिवः १९२ उप॰
धाभिश्च यः कश्चित्परद्रव्यं ह
रेन्नरः ससहायः सहन्तव्यः
प्रकाशं विविधैर्वधैः १९३ ।
निक्षेपो यः कृतो येन गृहीतो
मिथ्यएववा मिथ्यएव प्रदात॰
व्यो यथादाय तथाग्रहः ९४
यावांश्च कुलसन्निधौ तावानेव स विज्ञेयो
विब्रुवन्दण्डमर्हति

को सभ मनुष्योंके समीप नाना प्रकारके वधकर
के मारै १९३ जलके सन्निधिमें जितना निक्षेप किया
उसमें विरुद्ध बोले तो उतनाही देइपावे १९४ ॥

जिसने साक्षी रहित दिया वह साक्षी रहित देवे क्यों कि जैसा देना तैसा लेना ।६५ निक्षेप उपनिधि और प्रीतिसे दिई इन तीनोंका निर्णय इस रीतिसे राजाकरै जिसमे निक्षेप रखने वा

मिथोदायः कृतोयेन गृहीतो मिथएववा मिथएव प्रदातव्यो यथा दाय स्तथाग्रहः ६५ निक्षिप्तस्य धनस्यैवं प्रीत्योप निहितस्य च राजा विनिर्णयं कुर्यात् हरिरक्ष्यास्मधारिणे ६६ विक्रीणीते परस्यस्वं यो स्वामी स्वाम्य सम्मतः नतेन येत साक्ष्ये च स्तेन मस्तेन मानिनम् ।६७ ॥

ले को उःखनहोवे ६६ जिसको द्रव्यहै उसकी सम्मति विना द्रव्यकी दूसरा बेंचे तो उसको साक्षी न करना यह अपनीको चोर नहीमान ता परंतु चोरहै ।६७ बेंचने वाला द्रव्य स्वामी

म॰
स्ट॰टी॰
भा॰
२६५

का संबंधी हो तो छः सौ पण दंड देवे और संबं-
धी नहो तो चोरको पापको पावे १६८ अस्वामी
ने जो दिया मोल लिया वेचा सो सभ सिद्ध नही
होता व्यवहारके मर्यादमें १६९ जिस वस्तुका

295

ग्रवहार्थो भवेच्चैव सान्वयः
प्रदृश्यते दमे निरन्वयो नपस
ट्ः शताः स्या चौर किल्बिष १
८ अस्वामिना कृतो यस्तु दा
यो विक्रय एवच अकृतः स
तु विज्ञेयो व्यवहारे यथास्थि
तिः १६९ संभोगो दृश्यते यत्र
न दृश्येतागमः क्वचित आ
गमः कारणं तत्र न संभोग
इतिस्थितिः १७० ॥

संभोग देख पड़तेहै और आगम अर्थात् पत्र आ
दि नही देख पड़ता उसमें आगमहै कारणहै
संभोग नही यह शास्त्रकी मर्यादाहै १७० ॥

व्यवहार करने वालेके समीप विक्रय देशमे कोई वस्तको किसीने मोल लिया और मोल लेना सिद्ध हो तो न्यायसे उस वस्तको मोल लेने वाला पाताहै ९९ जिससे मोल लिया उसको देखाने नही सकता और सभके समीप मोल लेना सिद्ध करताहै तो उसको राजा दं

विक्रयाद्यो धनं किंचिद्गृह्णी याल्कुलसन्निधौ क्रयेण स वि शुद्धं हि न्यायतो लभते धनं ९९ अथमूल मनाहार्यं प्रका शक्रयशोधितः अदंड्यो मुच्यते राज्ञा नाष्टिको लभते धनं १ नान्यदन्येन संसृष्ट रूपं विक्र य मर्हति न चासारं नच न्यूं नं न दूरेण तिरोहितं ९२ ॥

उ न देवे और मोल लिई वस्तको जिसकी वस्त नष्ट भईहै वह स्वामी पावे जितने रुपेयासे मो ल लिई गई रही वस्त उतना रुपेया मोललेने वालेका गया ९१ कुंकुम आदि द्रव्यको कुसंभ आदि द्रव्यसे मिलाकर न वेचना नकाम वस्त को अच्छी कहके न वेचना तोलमें कम न देना समीपमें देना रंगसे अच्छा बनाकर न वेचना ९२ ॥

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
२५९

298

और कन्या दिखाके और कन्या देवे तो विवाह क
रने वाला एकही शुल्क अर्थात् जिस वस्तुको
देके कन्या लेतेहैं सो दोनों कन्याका विवाह क
रै यह मनुजीने कहा २०४ उन्मत्ता कुष्टिनी
अरुष संभोग हुविना कन्याहै उसके दोषको

अन्यां चेद्दर्शयित्वान्या वोढुः
कन्या प्रदीयते उभे ते एकशु॰
केन वहेदित्यब्रवीन्मनुः ४
नोन्मत्तया न कुष्ठिन्या न च या
स्पृष्टमैथुना पूर्वं दोषा नभि॰
ख्याप्य प्रदाता दंड मर्हति ५
ऋत्विग्यदि वृतो यज्ञे स्वकर्म॰
परिहापयेत् तस्य कर्मानुरू
पेण देयोंशः सह कर्तृभिः ६

विना कहके उसका विवाहकर देवे तो उसक
न्याका दाता दंडके योग्य होताहै २०५ यज्ञमें व
रणलेके ऋत्विक अपने कार्यको त्यागकरै तो
जितना कर्म कियाहै उसके योग्य अंशको सा
थ कर्म करने वालोंके पावै २०६ ॥

संपूर्ण दक्षिणा लेके रोग आदिसे अपने कर्म
को त्याग करत संते संपूर्ण दक्षिणाको पावे
और अपना कर्म दूसरेसे करादेवे २७ जिस
कर्ममे जिस अंगका जो दक्षिणाहै उसको उ

दक्षिणांशस्य च दत्तांश स्वकर्म
परिहापयेत् कृत्स्नमेव लभे-
तांश मन्येनैवच कारयेत् ७
यस्मिन्कर्मणि यास्तु स हक्ताः
प्रत्यंगदक्षिणाः सएव ता आ
ददीत भजेरन्सर्व एव वा ८
रथं हरेत चाध्वर्युं ब्रह्माधाने
च वाजिनं होतावापि हरेद
श्वमुद्गाता वाप्यनः क्रये ९

स अंगके कर्म करने वाले पावें अथवा सभ
ऋत्विक् मिलके बांठलेवें २८ अध्वर्यु रथको
ब्रह्मा घोडाको होता भी घोडाको उद्गाता गा
डीको लेवे २९ जिस यज्ञका सो गो दक्षिणा

है उसका भाग लिखते है सोलह ऋत्विक है ति
समें चार मुख्य है होता अध्वर्यु उद्गाता ये चारो स
म्पूर्ण दक्षिणाका आधा पावे मैत्रावरुण प्रतिस्था
ता ब्रह्मा छंसी प्रस्तोता ये चारो मुख्य ऋत्विक
का आधापावे अच्छावाक नेष्टा अग्नीध प्रतिहर्ता
ये चारो मुख्य ऋत्विक का तृतीयांश पावे ग्राव
स्तुत उन्नेता पोता सुब्रह्मण्य ये चारो मुख्य ऋत्वि

सर्वेषामर्द्धिनो मुख्या स्तदर्द्धे
नार्द्धिनोपरे तृतीयिनस्तृती॰
यांशा श्चतुर्थांशाश्च पादिनः १०
सम्भूय स्वानि कर्माणि कुर्वद्भि
रिह मानवैः अनेन विधियोगे
न कर्तव्यांश प्रकल्पना ११ ध
र्मार्थं येन दत्तं स्या त्कस्मैचिद्या
चते धनं पश्चा च्च न तथा त॰
त्स्या न्नदेयं तस्य तद्भवेत् १२

क का चतुर्थांश पावे इस स्थानमें सभको यथो
क्त दक्षिणा मिले इसलिये सबका आधा यद्यपि
पचासहै तथापि अडतालिसे लेना तब पूर्व क॰
थित संख्या सिद्ध होगी १० मिलके अपने कर्मको
करने वाले मनुष्य इस रीतिसे अंश कल्पना करै
११ धर्मके निमित्त किसीने कोई मांगने वालेको
कबूलदिया और वह लोक धर्ममें द्रव्यको नही
लगाता तो उस द्रव्यको उससे दाता फेरलेवे ।
१२ ॥

॥

जब लोभसे वहन दे अथवा दातानें देनेको क
हिकी नही देता और लेने वाला बलसे लेके
धर्ममें नही लगाता तो राजा इन दोनोंसे एक
सुवर्ण दंड लेवे उसचोरीके प्रायश्चित्तके लिये
और उस द्रव्यको दाता पावे यह तो सिद्ध हुआ
है दंड लेनेहीसे २१३ दिई वस्तुको फेरलेना

यदि संसाधयेत् तत्तु दर्पाल्लो-
भेन वा पुनः राज्ञा दाप्यः सु
वर्णं स्यात् तस्य स्तेयस्य नि
ष्कृतिः २१३ दत्तस्यैषोदिता ध
र्म्या यथावदनपक्रिया अत
ऊर्द्ध्वं प्रवक्ष्यामि वेतनस्यान
पक्रियाम् २१४ भृतो नार्त्तो न
कुर्य्याद्यो दर्पात् कर्म यथो-
दितं स दंड्यः कृष्णलान्यष्टौ
न देयं चास्य वेतनम् २१५ ॥

इसकी विधि कही अब इसके अनंतर मजूर
को मजूरी न देना इसकी विधि कहैंगे २१४
व्याधिसे रहित जो मनुष्य काम करनेको
स्वीकार किया और दर्प अर्थात् अहंकारसे न
ही करता उससे आठ रत्ती सोना दंड राजा लेवे
और मजूरी उसको न दिलावे २१५ काम कर

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
२१८

298

ने वाला रोगसे पीड़ित होके कामका त्यागक
रे और अच्छा होके फेर कामको करे तो बहुत
दिनकी भी मजूरी पावे १६ दुःखित हो अथवा
स्वस्थ हो कामकरने वाला जिस कर्मका स्वीका
र करके उस कर्मको करता है और वह कर्म सि

आर्तस्तु कुर्यात्स्वस्थः सन्
यथा भाषितमादितः सदी॰
र्घस्यापि कालस्य तल्लभेतै॰
व वेतनं १६ यथोक्तमार्तः॰
स्वस्थो वा यस्तत्कर्म न कार॰
येत् न तस्य वेतनं देय मल्पो
नस्यापि कर्मणः १७ एष ध॰
र्मोऽखिलेनोक्तो वेतनादान॰
कर्मणः अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि
धर्मं समय भेदिनाम् १८ ॥

द्ध होनेका थोड़ा रह गया है उसको न आपक
रे और न दूसरेसे समाप्ति करावे तो उसको कु
छभी न देवे १७ मजूरी न देनेकी संपूर्ण विधि
कही इसके अनंतर कोई वस्तु करनेकी सला
ह करके उसको नहीं करना उसके धर्मको कहेंगे १८

जो मनुष्य ग्राम देश संघ अर्थात् समुदाय
इन्होंका सत्य करके संवित् अर्थात् सलाह
को किया और लोभसे फेर उसको राज्यसे
निकालदेना १९ पकडके उससे चार सुवर्ण
छ निष्क एक शतमान अर्थात् तीन सो

योदेशग्रामसंघानां कृत्वा
सत्येन संविदं विसंवदे न्नरो
लोभा त्तंराष्ट्रा द्विप्रवासयेत्
१९ निगृह्य दापयेच्चैनं समय
व्यभिचारिणम् चतुःसुव
र्णान् षण्निष्कान् शतमानं च
राजतम् २० एतद्दण्डविधिंकु
र्य्याद्धार्मिकः पृथिवीपतिः
ग्रामजाति समूहेषु समय
व्यभिचारिणां २१ ॥

बीस रत्ती रूपा दंड लेवे अथवा विकल्प जो है सो
विषय अर्थात् मामिला का लाघव गौरव अ
र्थात् छोटाई बडाई की अपेक्षा करके एक प
काको अथवा सभको लेना २० धार्मिक पृथ्वी
वीपति ग्राम जाति समूहमें समय अभिचारियों
का अर्थात सलाह छोडने वालोंका यहदंड विधि

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
२५५

को करै २१ कोई वस्तुको मोललेके अथवा
वेचके पश्चात्तापकरै अर्थात् अच्छानहीं वे
चा अच्छा मोल नहीं लिया ऐसा कहै तो दश
दिनके भीतर फेरफारकरै २२ दश दिनके उ

299

क्रीत्वा विक्रीय वा किंचिद्यस्ये
हानुशयो भवेत् सोंतर्दशा
हात्तद्द्रव्यं दद्याच्चैवाददीत
वा २२ परेण तु दशाहस्य न द
द्यान्नापि दापयेत् आददानो
ददच्चैव राज्ञा दंड्यः शतानि
षट् २३ यस्तु दोषवतीं क॰
न्यामनाख्याय प्रयच्छति त
स्य कुर्यान्नृपो दंडं स्वयं ष॰
ण्णवतिं पणान् २४ ॥

पर फेर फार नहीं होता और करै तो छःसो
पण दंडदेवै २३ दोषयुक्त कन्याका दोषविना
कही उसका विवाह करै तो छानवे पण दंडदे
वै २४

शत्रुतासे कन्याको अकन्या कहै अर्थात्
पुरुष संभोग हूविना कहै और उस बातको
सिद्ध न करै तो सौ पण दंडदेवै २२५ विवाह ।
करनेकी मंत्र कन्या ही को कहाहै और जो
अकन्याहै उसका धर्म क्रिया तो लुप्तहोजा
ताहै उसको विवाहकी मंत्र नहीहै २२६ ।

अकन्येति तु यः कन्यां ब्रूया
द्द्वेषेन मानवः सशतं प्राप्नु ।
या द्दंडं तस्यादोष मदर्शयन्
२२५ पाणिग्रहणिका मन्त्राः
कन्यास्वेव प्रतिष्ठिता नाक
न्यासु क्वचिन्नृणां लुप्तधर्म
क्रियाहिता २२६ पाणिग्रह ।
णिका मंत्राः नियतं दारल
क्षणं तेषां निष्ठातु विज्ञेयाः
विद्वद्भिः सप्तमे पदे २२७ ।

नियम करके विवाहकी मंत्रही से दारा अ ।
र्थात् पत्नी कहातीहै उसकी सिद्ध सातवें
पदमें होतीहै विवाहमें मंत्रसे सातपद स्त्री
पुरुष चलतेहैं सातवें पदमें वह कन्या उ
सपुरुषकी पत्नी होतीहैं २२७ जो जो कार्य

म॰
स्म॰टी॰
भा॰
३॰

300

कि पसंते जिसको पश्चात्तापहो उसको इस विधानसे धर्मयुक्त मार्गमें स्थापन करै २८ पशु स्वामी पाल इन्होंके विवाद को ज्यों का त्यों धर्मसे कहेंगे २९ दिनमें पालके पास स्वामि समर्पित गौ की रक्षा न बनी तो पाल

यस्मिन्यस्मिन्कृते कार्ये य
स्येहानुशयो भवेत् तमने॰
न विधानेन धर्म्ये पथि नि॰
वेशयेत् २८ पशुषु स्वामि॰
नां चैव पालानांच व्यतिक्र
मे विवादं संप्रवक्ष्यामि य॰
थावद्धर्म तत्त्वतः २९ दिवा
वक्तव्यता पाले रात्रौ स्वामि
नि तद्गृहे योगक्षेमे न्यथा॰
चेत्तु पालो वक्तव्यतामियात्
३॰

दोषी होताहै रात्रिमें स्वामीके गृहमें पाल समर्पित गौ की रक्षा न बनी तो स्वामी दोषी होताहै कदाचित रात्रिमें भी पालकी गृहगेगौ रही और उसकी रक्षा न बनी तो पालदोषी होता है ३॰

जिस पालके मजूरी कछु नहीं की गईहै व॰
ह स्वामी की संमतिसे दश गौ चरावे तो एक
श्रेष्ठ गौका दूधलेवे ३१ जो गौ देखतेही पड
नीहै कीडासे खाई गईहै कुत्तासे मारी गई वि

गोपः क्षीरभृतो यस्तु स दुह्या
द्दशतो वराम् गो स्वाम्यनुम॰
ते भृत्यः सा स्यात्पालेऽभृते भृ॰
तिः ३१ नष्टं विनष्टं कृमि॰
भिः श्वहतं विषमे मृतं हीनं
पुरुषकारेण प्रदद्यात्पाल॰
एव तु ३२ विघुष्य तु हृतं चौ
रैर्न पालो दातुमर्हति यदि
देशे च काले च स्वामिनः
स्वस्य शंसति ३३ ॥

षम अर्थात टेढी भूमिमें मरगई पालसे र॰
हित होके मरगई उसको पाल देवे ३२ प्रकार
टेके चोरले गया तो उसको पाल न देवे जब
उसी समयमें स्वामीके पास जाकर कहे तब

मरे पीछे गोके अंगको स्वामीको देखावे और गोका कान चामवाल वस्ति अर्थात् नाभीके नीचका भाग नसे रोचना इन सभको गोके स्वामीको देवे २३४ बकरी भेडी इनको झेडारने हे

कर्णौ चर्म च वालांश्च वस्तिं स्नायुञ्च रोचनां पशुषु स्वामिनां दद्या न्मृतेष्वंगानि दर्शयेत् २४ अजाविके तु संरुद्धे वृकैः पालेत्वनायति यां प्रसह्य वृको हन्यात्पाले तत् किल्बिषं भवेत् ३५ तासां चेदवरुद्धानां चरन्तीनां मिथो वने यामुत्प्लुत्य वृको हन्यान्न पालस्तत्र किल्बिषी २३६

रा और उससमयमें पालनही आया और हठते तोडे ३५ पालसे रहित होकर वनमें चौरती बकरी भेडीको मारा तो पाल दोषी हो करी भेडीको उछलके झेडारने मारा तब पाल दोषी नही होता २३६

गौके चरनेके लिये ग्रामके चारो ओरसौ ध
नुष तक अर्थात् चारसौ हाथ तक खेत न
करना अथवा हाथसे लाठी गिरी उतनी ।
भूमि की तिगुणी भूमितक खेती नकरना और
नगरके चारो ओरतो जो कहाहै उसका तिगु

धनुश्शतं परीहारो ग्रामस्य
स्यात्समन्ततः शम्यापातास्त्र
यो वापि त्रिगुणो नगरस्य तु
२९ तत्रापरिवृतं धान्यं वि
हिंस्युः पशवो यदि न तत्र प्र
णयेद्दंडं नृपतिः पशुरक्षि
णाम् ३० वृतिं तत्र प्रकुर्वी
त यामुष्ट्रो नावलोकयेत् ।
छिद्रंच वारयेत्सर्वं श्वसूक
रमुखानुगम् ३१ ॥

ना छोड़ना २९ गवेई अर्थात् खिरासे रहित ।
छोटी भूमिके समीपमें जो धान्यहै उसको
पशु नाशकरै तो पालको दंड राजा न देवे ३०
घेरा ऐसा बनावे कि जिसको ऊंट न देख सके
छिद्रको वारणकरै जिसमें कुत्ता सूअरका मु

म० स्मृ० टी० भा० २०१

खेधान्यमें न जासके २४० मार्गके समीपका अथवा ग्रामके समीपका खेत घेरासे रहितहो और उसमें की धान्यको पशुने नाश कियाहो तो पाल सौ पण दंडदेवै और पालसे रहित पशुहोवै तो उसको अपने खेतसे निकालदेवै ४१ मार्ग और ग्राम इन्होंका समीप छोड़के दूसरे खेतमें सस्यका नाश पशु करै तो सो पण

पथिक्षेत्रे परिवृते ग्रामान्तीयेऽथवापुनः सपालः शतदंडार्हो विपालान्वारयेत्पशून् ४१ क्षेत्रेष्वन्येषु तु पशुः सपादं पणमर्हति सर्वत्र तु सदो देयः क्षेत्रिकस्येति धारणा ४१ अनिर्दशाहां गां सूतां वृषान्देवपशूंस्तथा सपालान्वा विपालान्वा न दंड्यान्मनुरब्रवीत् २४२ ॥

दंड पशु पालदेवै और अपराधके अनुसारसे पशु स्वामी अथवा पशुपाल क्षेत्रका फल क्षेत्र स्वामीको देवै यनिश्चयहै ४१ पाल सहित हो अथवा पालरहित हो विआई गौ विआनेसे दश दिनके भीतर सस्यका नाशकरै और सांड सस्यका नाशकरै तो दंडयोग्य नहीं है यह मनुजीने कहा २४२ ॥

अधिष्ठा के खेतकी सस्यको खेती करने वा
लेके पशुके भक्षण किया अथवा सस्यबोन
के समयमें न बोयाहो तो राज भागके हा
नि भई हो उसका दशगुना दंड देवै खेर करः खेति
ने वालीको अज्ञानसे उसके भृत्योंने पूर्वक

क्षेत्रिकस्यात्यये दंडो भागाद्
दशगुणो भवेत् ततोर्द्ध दंडो
भृत्यानां मज्ञानात्क्षेत्रियस्य
व ॥ ७ ॥ एतद्विधान मातिष्ठे
द्धार्मिकः पृथिवीपतिः स्वा
मिनस्तु पशूनाञ्च पालानां
व व्यतिक्रमे ॥ ८ ॥ सीमान्तं
तिसमुत्पन्ने विवादे ग्रामयो
र्द्वयोः ज्येष्ठेमासि नयेत्सी
मां सुप्रकाशेषु सेतषु ॥ ९ ॥

षित नाशकिये हो तो पांचगुण भृत्यदेवै ॥ ७ ॥
स्वामी पाल पशु इन्होंके विवादमें इस प्रका
रकी विधिको धार्मिक राजा करै ॥ ८ ॥ दो ग्रा
मकी सीमा विवादका निर्णय को ज्येष्ठमास
में प्रकटित सीमा चिह्न भये संते करै ॥ ९ ॥ व

म॰
स्पृ॰ टी॰
भा॰
३॰३

ट पीपर पलाश सेमर शाल ताल दूधवालेदृ
क्ष इन सभोंमेंसे कोई एकको सीमाके मध्यमें
लगाना चाहिये ४६ गुल्म अर्थात् अकांड रहि
त बहुत कांडा वाला जो बांस और शामीलता
ऊंची भूमि सर हरी ज़लक गुल्म अर्थात् अ॰

303

सीमा वृक्षांश्च कुर्वीत न्यग्रो
धाश्वत्थकिंशुकान् शाल्म॰
ली सालतालांश्च क्षीरिणश्चै
व पादपान् ४६ गुल्मान्वेणूं
श्च विविधान् शमी वल्ली स्थ
लानिच शरान्कुब्जक गुल्मां
श्च तथा सीमा न नश्यति
४७ तडागा न्युदपानानि वा
प्यः प्रस्रवणानि च सीमा
संधिषु कार्याणि देवतायत
नानि च ४८

कांड रहित देख्ता वृक्ष इन सभोंमेंसे कोई ए॰
कको सीमाके मध्यमें करना इससे सीमा न
ष्ट नहीं होता ४७ तडाग हुवा बाउली करना
देवस्थान इन सभोंमेंसे कोई एकको सीमा
के संधिमें करना ४८ ॥

सीमाके ज्ञानमें मनुष्योंको उलट पलट देख
के और भी छिपे हुए चिन्हको करना २४९ प
त्थल हाड गौका वाल भूसा राखी ठिकरा क

उपच्छन्नानि चान्यानि सी-
मा लिंगानि कारयेत् सीमा
ज्ञाने नृणां वीक्ष्य नित्यं लो
के विपर्ययं २४९ अश्मनोस्थी
नि गोवाला स्तुषान्भस्मक-
पालिकाः करीष मिष्टको-
गारा छर्करा वालुका स्त-
था ५० यानि चैवं प्रकारा-
णि कालाद्भूमिर्न भक्षयेत्
तानि संधिषु सीमाया मप्र
काशानि कारयेत् ५१ ॥

रसी ईटको इला खपरा वलू ५० जिसको ब
हुत दिनमें भूमि भक्षण न करै ऐसी जो वस्तु
है उन सभको सीमाके भीतर रखना यह प्रका

म॰
स्म॰ टी॰
भा॰
२५४

॥ चिह्नहै २५१ ये सब चिह्न ओर पूर्वका भोग जलका आगम इन्होंकरके सीमाका निर्णय राजा करै ५२ चिह्नके देखनेमे जब संदेह हो तो साक्षियोंके वचनसे सीमा विवादका

304

एतैर्लिंगै र्नयेत्सीमां राजा विवद मानयोः पूर्वभुक्त्या च सततं मुदकस्यागमेनच २५२ यदि संशय एवस्या र्लिंगाना मपिदर्शने साक्षि प्रत्यय एवस्या त्सीमावाद विनिर्णयः २५३ ग्रामीयक कुलानां च समक्षं सीम्नि साक्षिणः प्रष्टव्याः सीमलिंगानि तयोश्चैव विवादिनोः २५४ ॥

निर्णयकरै ५२ ग्रामके मनुष्य ओर वादी प्रतिवादी इन्होंके समीपमे साक्षियोंमे सीमाका चिह्न पूछना २५४ ॥

वे सभ एक मत होके सीमाका निश्चय जैसा
कहै तैसा सीमाको बांधे और उन सभ साक्षि॰
योंका नाम भी पत्रमें लिखे २५५ वे सभ साक्षी
पुष्पकी माला और लालवस्त्र पहिरे हुए मा॰
थी पर माटीका ढेला रखकर अपने अपने
सुकृतसें शापको पाए हुए अर्थात् झूठ विरुद्ध

ते पृष्टास्तु यथाब्रूयुः समस्ता
सीम्नि निश्चयं निबध्नीया तथा
सीमां समस्तांश्चैव नामतः ५
५ शिरोभिस्ते गृहीत्वोर्वीं स्र
ग्विणो रक्तवाससः सुकृतैः ॰
शापिताः स्वैः स्वैर्नयेयुस्ते स
मञ्जसं ५६ यथोक्तेन नयन्त
स्ते पूयन्ते सत्यसाक्षिणः वि
परीतं नयन्तस्तु दाप्याः स्यु॰
र्द्विशतं दमम् ५७ ॥

देखा आगे तो तुम्हारा सुकृत नष्ट होगा ऐसी ॰
वचन निर्णय करने वालीके सुने हुए ज्यों का
त्यों का सीमाका निर्णय करै ५६ ज्यों का त्यों ॰
निर्णय करै तो सत्यसे पवित्रता होते है और ॰
विपरीत अर्थात् उलट पलट सीमा निर्णय क
रै तो एक एक को दो सौ पण दंड देवे २५७ साक्षी

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
३॰५

305

भि न मिले तो सामंत अर्थात् चारो ओर ग्राम
के वासी चार यत्न पूर्वक राजाके समीपमें
सीमाका निर्णय करै ५५ सामंत भी न मिले
तो मौल अर्थात् ग्रामके निर्माणकालसे लेः
के पुरुष क्रमकरके इसी ग्रामके वासी जल
उनसे निर्णय करना ये भी नमिले अर्थात्
निर्णय न करसकै तो वन वासियोंको आ॰

सामंताभावे तु चत्वारो ग्रामाः
सामंतवासिनः सीमा विनि॰
र्णयं कुर्युः प्रयता राजसन्नि॰
धौ ५५ सामंतानामभावे तु
मौलानां सीम्नि साक्षिणां इमा
नप्यनु युंजीत पुरुषान्वनगो
चरान् ५६ व्याधाञ्छाकुनिका
न् गोपान् कैवर्तान्मूलखान
कान् व्यालग्राहानुञ्छवृत्ती
नन्यांश्च वनचारिणः २६०।

ज्ञा देना निर्णयके लिये २५९ गर्भहत्या करने
वाला व्यभिचारिणी अर्थात् छिनाल स्त्री शिष्य
और यत्न करने वाला ये दोनों चोर चोर ये सभ
अपने पापको क्रमसे भोजन देनेवाला एक
इने वाला व्याधा पक्षी पकडने वाले गो चरा
नेवाली मछली से जीने वाले मूल ।

खनने वाले अर्थात् कंदमूल वेचनेवाले सर्प॰
के पकडने वाले उंछसे जीनेवाले वनवासी
ये सभ अपने प्रयोजनके लिये उस ग्रामसे॰
सर्वकालमे वनको जाते हुए उसग्रामके सी
माको जानने वाले होते है १॰ ये सभ पूछने

ते पृष्टास्तु यथा ब्रूयोः सीमा
संधिषु लक्षणं न तथा स्था
पयेद्राजा धर्मेण ग्रामयो॰
द्वयोः ११ क्षेत्रकूप तडागा॰
नो मारामस्य गृहस्य च सामं
त प्रत्ययो ज्ञेयः सीमा सेतु
विनिर्णयः १२ सामंता श्चेन्मृ
षा ब्रूयुः सेतौ विवदतां नृ
णां सर्वे पृथक् पृथक् दंड्या
राज्ञा मध्यम साहसं १३ ॥

से जैसा चिह्नको कहै तैसी दोनों ग्रामकी
धर्मसे सीमा राजा स्थापन करै ११ खेत कूप
तडाग बगीचा गृह इन सभको सीमा निर्णय
सामंतके वचनेसे जानना १२ सामंत रूठबो॰ १३
ले तो एक एकको मध्यम साहस दंड राजा देवे

म॰
स्ट॰ टी॰
भा॰
२९१

गृह तड़ाग बगीचा खेत इन सभको उरवाके हरण करत संते पांचसौ पण दंड देवे २९४ चि ह्न और साक्षी आदि पूर्व कथितके अभावमें धर्म जाननेवाला राजा उपकारसे एकको दे

३०६

गृहं तडागमारामं क्षेत्रं वा भीषया हरन्। शतानि पंच दंड्यः स्यादज्ञानाद्विशतो दमः २९४ सीमायामविष ह्यायां स्वयं राजैव धर्मवित्। प्रदिशेद्भूमिमेकेषा मुपकारादिति स्थितिः २९५ एषो ऽखिलेनाभिहितो धर्मः सीमाविनिर्णये अतऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि वाक्पारुष्यविनिर्ण ये २९६

वे अर्थात उस भूमिके पानीसे जिसका बहुत उपकार होताहो उसीको देवे यह शास्त्रकी म र्यादाहै १५ यह संपूर्ण सीमा निर्णय कहा इस के अनंतर वाकपारुष्यका निर्णय कहैंगे ११।

ब्राह्मणको चोर ऐसी कठोर वचन कहैके
क्षत्रिय सौपण दंड देनेके योग्य होताहै वै
श्य डेढ सौ पण अथवा दोसौ पण दंडदेवे
और शूद्र ऐसा कर्म करै तो वधके योग्य
होताहै ६७ क्षत्रियको पूर्वकथित वचन
ब्राह्मण कहै तो पचास पण दंडदेवे वैश्य

शतम्ब्राह्मणमाक्रुश्य क्षत्रि
यो दंडमर्हति वैश्योप्यर्द्धश
तं द्वेवा शूद्रस्तुवधमर्हति
६७ पंचाशद्ब्राह्मणो दंड्यः क्ष
त्रियस्याभिशंसने वैश्यस्या
र्द्धपंचाशच्छूद्रे द्वादशको
दमः ६८ समवर्णे द्विजाती
नां द्वादशैव व्यतिक्रमे वा
देष्ववचनीयेषु तदेव द्विगु
णं भवेत् ६९ ॥

को कहै तो पचीस दंडदेवे ६८ समान वर्णोंसे
पूर्वकथित आक्रोश अर्थात् ऊंचस्वरसे बो
लना करणसे बारह पण दंड होताहै औरक
हनेके योग्य जो वचन नहीं हैं उसके कहने
से चोवीस पण दंड होताहै ६९ ब्राह्मण
क्षत्रिय वैश्यको कठोर वाणीसे आक्षेप कर

शूद्रको कहै तो बारह पण दंड देवै ॥

न सेने शूद्र जिह्वा छेदन पाताहै क्यों कि
निकृष्ट अंग जो पादहै उससे उत्पन्नहै २७०
ब्राह्मण आदिको देत फलाने ब्राह्मणसे नी
च ऐसा ऊंच स्वरकरके नाम और जातिका ग्र
हणकरै शूद्रतो उसके मुखमें बारह अंगु

एकजाति र्द्विजातींस्तु वाचा
दारुणयाक्षिपन् जिह्वायाः
प्राप्नुयाच्छेदं जघन्यप्रभवो
हि सः ७० नामजातिग्रहं त्वे
षामभिद्रोहेण कुर्वतः निः
क्षेप्योऽयोमयः शंकुर्ज्वलन्ना
स्ये दशांगुलः ७१ धर्मोपदेशं
दर्पेण विप्राणामस्य कुर्वतः
तप्तमासेचयेत्तैलं वक्त्रे श्रो
त्रे च पार्थिवः २७२ ॥

ल प्रमाण जलता हुआ लोहेका शंकु डालना
२७१ ब्राह्मणोंको गर्वसे धर्मका उपदेश करने
वाला जो शूद्र उसके मुखमें और कानमें तपा
हुआ तेलको राजाडाले २७२ ॥

समान जातिमें दंड कहते हैं तुम्हारा यह स्व
ना नहीं है तुम इस देशमें उत्पन्न नहीं हो तु
म्हारी यह जाति नहीं है तुम्हारा शरीर संस्का
र अर्थात् यज्ञोपवीत आदि नहीं हुआ ऐसा
अहंकारसे कहता संते दो सौ पण दंड देवे ७२

श्रुतन्देशञ्च जातिञ्च कर्म
शारीरमेव च वितथेन ब्रुव
न्दर्पो द्दाप्यः स्याद्विशतं दम
७३ काणम्वा प्यथवा खञ्ज
मन्यं वापि तथाविधं तथ्यं
नापि ब्रुवन्दाप्यो दंडं कार्षा
पणावरम् ७४ मातरं पित
रं जायां भ्रातरं तनयं गुरं
आक्षारयंच्छतन्दाप्यः पंथा
नं चाददद्गुरोः ७५ ॥

काणा और पंगु इन्होंको सत्यसे भी काणां पंगु
न कहना कदाचित् कहै तो एक कार्षापण
दंड देवे ७४ माता पिता स्त्री भाई पुत्र गुरु इन
को पातक आदिसे शाप देवे अर्थात् पातकी
हो ऐसा कहै और गुरुको राह न देवे तो सौ पण

दंडदेवै २७५ ब्राह्मणको क्षत्रिय अथवा क्षत्रियको ब्राह्मण पतन योग्य वाणी ऊंच स्वरसे कहै तो ब्राह्मण पूर्वक साहस दंडका देवै क्षत्रिय मध्यम साहस दंडदेवै ७६ इसी रीतिसे वै

ब्राह्मणक्षत्रियाभ्यां तु दंडः कार्यो विजानता ब्राह्मणे साहसः पूर्वः क्षत्रिये त्वेव मध्यमः ७६ विट्शूद्रयोरेवमेव स्वजातिं प्रति तत्वतः छेदवर्जं प्रणयनं दंडस्येति विनिश्चयः ७७ एष दंडविधिः प्रोक्तो वाक्पारुष्यस्य तत्वतः अत ऊर्द्ध्वं प्रवक्ष्यामि दंडपारुष्य निर्णयम् २७८ ॥

श्य शूद्रमें भी अपनें जातिमें जिह्वा छेदन रहित दंड जानना यह शास्त्रका निश्चय है ७७ वाक्पारुष्यकी दंड विधि यह कही इसके अनंतर दंड पारुष्यकी विधि कहैंगे २७८ ॥

अन्त्यज अर्थात् चांडाल जिस किसी अंगसे ब
डे लोगोंके अंग पर प्रहार करै उस अंगको का
ट डालना यही मनुजीकी आज्ञा है २७ हस्त
के उधमसे मारे तो हस्तकाटना पादके उध
मसे मारे तो पादकाटना २८ छोटा मनु॰

येन केनचिदंगेन हिंस्याच्छ्रे
ष्ठमन्त्यजः छेत्तव्यं तत्तदे
वास्य तन्मनो रनुशासनं २
७ पाणिमुद्यम्य दंडंवा पा॰
णि छेदनमर्हति पादेन प्रह
रन्कोपा त्पादछेदनमर्हति
२८ सहासनमभिप्रेप्सु रुत्कृ
ष्टस्यापकृष्टजः कट्यां कृतां
को निर्वास्यः स्फिचं वास्या
व कर्तयेत् २८ ॥

षा बडे मनुष्यके साथ एक आसन परबैठे तो
उसके कटिमें चिह्नकरके निकालदेवे अथ
वा जिसमें मरे न एसीरीतिसे चूतर उसका उ
सका काटदेवे २८ दर्पसे देह पर थूके तो

म॰ स्मृ॰ टी॰ भा॰ २७९

309

विष्ठा करै तो क्रमसे दोनो ओठ लिंग मार्ग इ
न्द्रोंका छेदन करै २८२ ब्राह्मणका केश पाद
दाढी ग्रीवा वृषण अर्थात् अण्ड इसको अ॰
हंकारसे ग्रहण करने वाला जो शूद्र है उस
का हाथ काटना यह विचार न करना कि इ

अवनिष्ठीवतो दर्पा द्वावो॰
ष्ठौ छेदयेन्नृपः अवमूत्रय॰
तो मेढ्रमवशर्द्धयतो गुदं २
८२ केशेषु गृह्णतो हस्तौ ॰
छेदयेदविचारयन् पादयो
र्दाढिकायां च ग्रीवायां वृष
णेषु च २८३ त्वक भेदकः श
तंदंड्यो लोहितस्य च दर्शकः
मांसभेत्ता तु षण्निष्का न्प्रवा
स्यस्त्वस्थिभेदकः २८४ ॥

सको पीडा होगी २८३ त्वचा भेदकरनेवाला रुधि
निकालने वाला ये दोनों सौपण दंडको पावे ।
मांस भेद करने वाला क्रमसे छ निष्क देश नि
र्वासन इस दंडको पावे यह दंड समान जातिमें जा
नना २८४

सेवणी वृत्तोंका जैसा जैसा उपभोग करै तै॰
सा तैसा दंड पावै मारनेमें तैसाही जानना य॰
ह शास्त्रका निश्चयहै ८५ मनुष्य और पशुइन्हों
को जैसा जैसा दुःखदेवै तैसा तैसा दंड पावै ८ ६

वनस्पतीनां सर्वेषां मुपभो॰
गो यथा यथा तथा तथा द॰
मः कार्यो हिंसाया मितिधा
रणा ८५ मनुष्याणां पशूना
ञ्च दुःखाय प्रहृते सति य
था यथा महद्दुःखे दंडे कु॰
र्यात् तथा तथा ८६ अंगाव
पीडनायाञ्च व्रण शोणित॰
यो स्तथा समुत्थान व्ययन्द
ड मथापि वा २८७॥

हाथ पांव आदिमें व्रण अर्थात् छिद्र रक्तसे ८
पीडा भये सेते पीडा करने वाला जितने दिन
में अच्छा नहो उतने दिनका औषध और पथ्य
में व्यय अर्थात् खर्च भयाहै उसको देवै कदा
चित् देनेकी इच्छा नकरै तो व्यय और दंड दोनों

देवैं २८७ जानके अथवा विनाजाने जो मनु
ष्य जिसकी द्रव्यको नाशकरै सो उसको संतु॰
ष्टकरै और उसद्रव्यकी समान राजाको दंड
देवै २८८ चर्म चर्मका पात्र काष्ट लोष्ट अर्था

द्रव्याणि हिंस्याद्यो यस्य ज्ञान
तो ज्ञानतोपिवा स तस्योत्पा
दयेत्तुष्टिं राज्ञे दद्याच्च तत्सम
८८ चर्म चार्मिक भांडेषु का॰
ष्ठ लोष्ठमयेषुच मूल्यात्पंच
गुणो दंडः पुष्पमूलफलेषु
च २८९ यानस्य चैव यातु॰
श्च यान स्वामिन एवच दशा
ति वर्तनान्याहुः शेषे दंडो
विधीयते २९॰ ॥

त माटीका पात्र पुष्प मूल फल इन्होंका नाश
करनेवाला मूलसे पांचगुनादंडदेवै २८९ सवा
री सवार सवारीका स्वामी इन सभको दश स्था
नोंमें दंड नदेना और स्थानमें दंडदेना २९॰ ॥

बैलके नाथकी रस्सी ८ और जूआ टूटगयाहो भूमिकी विषमतासे रथ आदि ठेढी ३ और म ध्यआईहो ध अत ५ अर्थात् चक्रके भीत रका काष्ठ और चक्र ६ टूट गयाहो २९१ च मेंबंधन ७ पशुकी ग्रीवाकी रस्सी ८ कोडा ९ ये सभ टूट गएहो और ऊंच स्वर करके ह

छिन्ननास्ये भग्नयुगे तिर्यक

प्रतिमुखागते अक्षभंगे च यानस्य चक्रभंगे तथैवच २९१ छेदने चैव यंत्राणां यो

क्त्र रश्म्यो स्तथैवच आक्रं॰ दे वाप्यपैहीति न दंडं मनु॰ रब्रवीत् २९२ यत्राव पर्व

ते चक्रे वैगुण्या त्प्राजक॰ स्य व तत्रस्वामी भवेद्दंड्यो हिंसायां द्विशतं दमम् २९३

ट जाओ ऐसा सारथीने पुकाराहो ९ तो रथी सारथी रथस्वामी इनमें किसीको दंड न देना २९२ जहां सारथीके दोषसे रथको जैसा च लना चाहिए तैसा नहीं चलताहै और उसचा लसे कोई मरगयाहो तहां अप्रवीण सारथी के रथपर रहनेसे रथस्वामी दोसौपण दंड देवे ५२

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
२११

311

सारथी रथ हांकनेमें निपुणहो और रथमे कोई मरगयाहो तो दोसौ पण दंड सारथी देवे सारथी निपुण नहो और रथमे कोई मरगयाहो । तो अशिक्षित सारथीके रथपर रखनेसे रथस्वामी सारथी और चढे हुए मनुष्य ये सभ सौ पण दंड देवे २९४ सारथीके मनुष्य दूसरी रथ

प्राजकश्चेद्भवेदाप्तः प्राजको दंडमर्हति युग्यस्थाः प्राजके नाप्ते सर्वे दंड्याः शतं शतं स चेत्तु पथि संरुद्धः पशुभि र्वा रथेनवा प्रमापयेत् प्राणभृत स्तत्रदंडो विचारितः २९५ मनुष्यमारणे क्षिप्रं चौरवत् किल्बिषं भवेत् प्राणभृत्सु महत्स्वर्धं गो गजोष्ट्र हयादिषु २९६ ॥

आई अथवा बहुत गो आदि पशु सन्मुख आपऔर इन्होंसे रथ रोकी गई और तिनके अनवधानतासे अपनी रथको पीछे लेजानेमें समर्थ नहीहै और घोडेको कोडा मारके आगे लेजाते हैं इसमें कोई मरगया तो विचार न करना सारथी को दंड देना २९५ ॥

मनुष्यके मारनेमें शीघ्रचोरकी नाईं पापीहोताहै अर्थात् उत्तमसाहसदंडके योग्यहोताहै गो हाथी ऊंठ घोडा आदि जोबडे जीवहै इन्होंके मारनेमें मध्यम साहस दंडदेवै २९६ छोटे पशुके मारनेमें दोसौ पण दंडदेवै शुभ जो मृगपक्षीहै उन्होंके मारनेमें पचास पण दंड देवै २९७ गदहा बकरी ।

क्षुद्रकाणां पशूनां तु हिंसायां द्विशतो दमः पंचाशत्तु भवेद्दण्डः श्वसूकरनिपातने २९८ गर्दभाजाविकानां तु दण्डः स्यात्पंचमाषकः माषिकस्तु भवेद्दण्डः शुभेषु मृगपक्षिषु २९८ भार्या पुत्रश्च दासश्च शिष्यो भ्राता च सोदरः प्राप्तापराधास्ताड्याः स्यू रज्ज्वा वेणुदलेन वा २९९ ॥

भेड इनके मारनेमें एकमासा रुपादेवै २९८ भार्या पुत्र दास शिष्य सहोदर भाई इन्होंसे अपराध भयाहो तो रस्सीसे और वांसके फलटासे इन्होंका ताडनकरना २९९ मस्तक छोडके पीठमें मारना इससे विपरीत ताडन करै तो चो

म॰
स्र॰ टी॰
भा॰
३१२

रके पापको पावै अर्थात् वागदंड धन दंडको पावै ३॰॰ यह संपूर्ण दंड पारुष्यका निर्णय कहा इसके अनंतर चोरके दंड विधिका निर्णय

पुष्टुनस्य शरीरस्य नोत्तमांगे कथंचन अतोन्यथा तु प्रहरन् प्राप्नुयाच्चोर किल्बिषं ३॰॰ एषोखिले नाभिहितो दण्डपारुष्य निर्णयः स्तेनस्यातः प्रवक्ष्यामि विधिन्दण्ड विनिर्णये ३॰१ परमं यत्न मातिष्ठेस्तेनानां निग्रहे नृपः स्तेनानां निग्रहादस्य यशो राष्ट्रञ्च वर्द्धते ३॰२ ॥

कहेंगे ३॰१ चोरोंके निग्रहमें अर्थात दंड देनेमें परम यत्नको करै इसमें इस राजाका यश और राज्य बढ़ताहै ३॰२ ॥

राजा

अभयका देनेवाला सर्वकालमें पूजितहोताहै और
सर्वकालमें इसराज्ञाकी अभय दक्षिणावाली यज्ञ
बढतीहै ३०३ चारो ओरसे प्रजोंकी रक्षाकरनेसे
धर्मका छटा भागको राजापाताहै और रक्षा न
करनेसे इन्हों के अधर्मका छटा भागको पाता

अभयस्यहि योदाता सपूज्यः
सततं नृपः सत्रं हि वर्द्धते त
स्य सदैवाभयदक्षिणम् ३०३
सर्वतोधर्म षड्भागो राज्ञो भव
ति रक्षतः अधर्मादपिषड्भागो
भवत्यस्य ह्यरक्षतः ३०४ यद
धीते यद्यजते यद्ददाति यदर्च
ति तस्य षड्भाग भाग्राजा स
म्यग्भवति रक्षणात् ३०५

है ३०४ प्रजोंके रक्षणसे प्रजोंका किया जोपा
ठ याग दान पूजा इसको छटा भागको पा
ताहै ३०५ सभ जीवोंकी धर्मसे रक्षा करत स

म०
स्मृ० टी०
भा०
३१३

313

ते और वधके योग्यको वधकरनेसे लाखों द
क्षिणावाली यागको प्रतिदिन वह राजा कर
ताहै ३०६ प्रजोंकी रक्षा विना किए कुछ प्रजोंसे
भेंटकर शुल्क अर्थात् महसूल जो लेताहै सोरा

रक्षन्धर्मेण भूतानि राजा वध्यां
श्च घातयन् यजते हरहर्यज्ञैः
सहस्रशतदक्षिणैः ३०६ यो
रक्षन्बलिमादत्ते करं शुल्कं
च पार्थिवः प्रतिभागं च दंडं
च स सद्यो नरकं ब्रजेत् ३०७
अरक्षितारं राजानं बलिषड्भा
ग हारिणम् तमाहुः सर्व
लोकस्य समग्रमलहारकम्
३०८

जा झट पट नरकमें जाताहै ३०७ जो राजा प्रजों
को रक्षा नहीं करता और प्रजोंसे अपने भाग
को ग्रहण करताहै सो संपूर्ण मलका हरण
करताहै ३०८ ॥

मर्यादाको छोडनेवाला नास्तिक अर्थात् परलो
कको नमाननेवाला लूटनेवाला रक्षाको नक
रनेवाला अपनाभागलेनेवाला जो राजाहै वह
नरकमें जाताहै ३०९ रोकना बांधना नानाप्रकार

अनपेक्षितमर्यादं नास्तिकंवि
प्रलुंपकं अरक्षितारमत्तारं नृ
पं विद्यादधोगतिं ३०९ अधार्मि
कं त्रिभिर्न्यायै र्निगृह्णीयात्प्र
यत्नतः निरोधनेन बंधेन विवि
धेनवधेन च ३१० निग्रहेणहि
पापानां साधूनां संग्रहेण च
द्विजातय इवेज्याभिः पूयंते स
ततं नृपाः ३११ ॥

का वध करना इन तीनों कर्मसे यत्नपूर्वक अधा
र्मिक पुरुषोंका निग्रहकरै ३१० पापियोंके निग्र
हसे साधुओंके संरक्षणसे यज्ञकरनेसे ब्राह्मण क्ष
त्रिय वैश्यकीनांई निरंतर पवित्र राजा होताहै ३११

म॰
स्मृ॰टी॰
भा
३१४

314

अपना हितकरनेवाला राजा दुःखकरके निषिद्ध
भाषण करते अर्थी प्रत्यर्थी बाल वृद्ध आतुर दुः
खोंके वाक्यको सहन करै ३१२ दुःखित मनुष्योंसे
निषिद्धभाषणको पाके जो क्षमा करताहै सो स्वर्ग
में पूजित होताहै और जो ऐश्वर्यसे क्षमा नहीं क
रता सो नरकमें जाताहै ३१३ ब्राह्मणका दशमा

क्षंतव्यं प्रभुणा नित्यं क्षिपतां
कार्यिणां नृणां बालवृद्धातु
राणां च कुर्वता हितमात्मनः
३१२ यः क्षिप्तो मर्षयत्यार्तैस्ते
न स्वर्गे महीयते यस्त्वैश्वर्यान्न
क्षमते नरकं तेन गच्छति ३१३
राजा स्तेनेन गन्तव्यो मुक्तकेशे
न धावता आचक्षाणेन तत्स्ते
यमेवं कर्मास्मि शाधि मां ३१४

सा आदि सोना चोरानेवाला आपसे शिखाको खुले
हुए दौड़करके राजाके समीप जाकर मूसल खैर
की लाठी और की तीखी बरछी लोहदंड इन्होंमेंसे
कोई एकको कांधेपर रखके कहै कि ऐसा कामकर
नेवाला मैं हूं मेरा दंड करिए ३१४ ॥

३१५ राजा उसको दंडदेवे तो चोरीके पापसे
वह छूट जावे कदाचित् जेहसो दंड नदेवे ।
तो चोरके पापको पावे ३१६ गर्भहत्या करने
वाला व्यभिचारिणी अर्थात् छिनाल स्त्री शि

स्येऽ्थेनादाय उसले लगुडं
वापिखादिरं घ्नातिं चोभयं
तस्तीना मायसं दंडमेववा
३१७ शासनाद्वा विमोक्षाद्वा
स्तेनः स्तेयाद्विमुच्यते अशा
सित्वा तु तं राजा स्तेनस्याप्नो
ति किल्बिषं ११ अन्नादे भ्रूण
हा मार्ष्टि पत्यौ भार्यापचारि
णी गुरौ शिष्यश्च याज्यश्च ।
स्तेनो राजनि किल्बिषम् ११

१७ उसर याजन करने वाला ये दोनों और चोर ये ।
सभ अपने पापको क्रमसे भोजन देनेवाला प
ति गुरु राजा इन्होंमें धोतेहे ३१८ जैसे पाप क

रनेवाले स्वर्गमें जातेहैं तैसे पापकरनेवाले राजा
से दंडपाके निर्मल ह्रप स्वर्गमें जातेहैं ३१८ कूआ
परसे रस्सी और घडाको चोरानेवाला पवसराको
भेद करनेवाला एकमासा सोना दंडदेवै और घटा
रस्सीको उसी कूआ पर रखदेवै ३१९ दोसो गंडापै
साभरको द्रोण कहतेहैं वीस द्रोणका कुंभकहा
ताहै दश कुंभसे अधिक धान्यको चोरावै तो उस

राजनिर्हृत दंडस्तु कृत्वा पा
पानि मानवाः निर्मलाः स्वर्ग
मायांति संतः सुकृतिनो य
था ३१८ यस्तु रज्जु घटं कूपा
द्धरेद्भिंद्याच्च यः प्रपां स दंडं प्रा
प्नुयान्माषं तच्च तस्मिन्समा
हरेत् ३१९ धान्यं दशभ्यः कुंभे
भ्यो हरतो भ्यधिकं वधः शेषे
प्येकादशगुणं दाप्यस्तस्य च
तद्धनम् ३२० ॥

का वधकरणा सो चोर और द्रव्य स्वामी इन्होंका गु
ण विचारके ताडन अंगछेदन मारण इन्होंका क
रना इससे कमहोवे तो चोराई गई वस्तुका ग्यारह
गुना दंड देना जैसे एकमन चोरावे तो ग्यारह म
न देवै और चोराई गई वस्तुको स्वामीपावै अर्थात्
जिसकी चोरी भईहै सोपावै ३२० ॥

सोना रूपा पट्ट वस्त्र इन सभोंके सौ गंडा भरके
ऊपर चोरानेमें वधकरना विषयाका समीपक
रण तो देशकाल और चौर द्रव्यस्वामी इन दो॰
नोंका जाति गुण देखके करना इसी प्रकारसे
आगेके श्लोकमें भी जानना ३२१ पूर्व कथित

तथाधरिममेयानां शताद॰
भ्यधिके वधः सुवर्ण रजतादी
नां उत्तमानाञ्च वाससाम् २१
पंचाशतस्त्वभ्यधिके हस्तछे
दन मिष्यते शेषेत्वेकादशगु
णं मूल्या दंडं प्रकल्पयेत् २२
पुरुषाणां कुलीनानां नारी
णां च विशेषतः मुख्यानां॰
चैव रत्नानां हरणे वध मर्ह
ति ३२३

वस्त्र पचास गंडासे ऊपर सौगंडाके भीतर हो
तो उसके चोरानेमें हस्तछेदन करना पचा॰
स गंडाके नीचे जितना हो उसका ग्यारह गु
ना दंड देवे ३२२ कुलीन पुरुष महाकुलकी
स्त्री श्रेष्ठ रत्न इन्होंमेसे कोई एकके हरणमें व

म० स्मृ०टी० भा० ३१६

316

ध करना ३२४ हाथी घोड़ा भैंस गौ हथियार औषध
इन सभोंमेंसे कोई एक वस्तुके हरणमें उचित आ
दिकाल और प्रयोजन इन्होंको देखकर ताडन अंग
छेदन वधको राजाकरे ३२४ ब्राह्मणकी गौके हर
णमें और वंका गौके वाहनके अर्थ नासिका छे

महापशूनां हरणे शस्त्राणा
मौषधस्य च कालमासाद्य
कार्यं च दंडं राजा प्रकल्पयेत्
३२४ गोषु ब्राह्मण संस्थासु छु
रिकायाश्च भेदने पशूनां हर
णे चैव सद्यः कार्योऽर्द्धपादि
कः ३२५ सूत्रकार्पास किण्वा
नां गोमयस्य गुडस्य च दध्नः
क्षीरस्य तक्रस्य पानीयस्य
तृणस्य च ३२६

दनमें बकरा भेडा आदि यज्ञके योग्य पशुके हर
णमें शीघ्र आधापाद काटना ३२५ ऊर्ण आदि सू
त्र कपासका सूत्र किण्व अर्थात् सुराबीज द्रव्य
गोबर गुड दही दूध मठा जल तृण ३२६ ॥

पात्र आदि लवण माटी का पात्र माटी भस्म ॥ २

त्वल्म बांसके टुकडेका बनाया हुआ जलाहर-
ण, इव गोरव गुड दही दूध मेदा जल तृण ३२७
मछली पक्षी तेल घी मांस मधु पशु संभव अ-
र्थात् मृग चर्म गैंडा का सींग आदि ३२८ इसप्रकार

वेणं वैदल भांडानां लवणानां
तथैव च मृणमयानां च हरणे
मृदो भस्मन एव च ३२७ मत्स्या-
नां पक्षिणां चैव तैलस्य च घृ-
तस्य च मांसस्य मधुनश्चैव य-
च्चान्यत्पशु संभवम् ३२८ अ-
न्येषाञ्चैवमादीनां मद्यानां
मोदनस्य च पक्वान्नानां च सर्वे-
षां तन्मूल्या द्विगुणो दमः ३२९

के और जो है अर्थात् जिसमें सार नहीं है मैनशि-
ल आदि भोजनके योग्य पकान्न दाल लडुआ आ-
दि भात इनसभोंमें कोई एक वस्तके हरणमें उस
के मूलसे दूना दंड देवे ३२९ पुष्प क्षेत्रमें स्थित
हरित धान्य त्वचा सहित गुल्म लता वृक्ष एक वृ

गृहके लेजाने योग्य धान्य इन सभोंमेंसे कोई ए·
क वस्तुके चुरानेमें देशकाल विचारके एक मा
सा सोना अथवा एकमासा रूपा दंड होताहै ३३·
तुष आरहित धान्य शाक मूल फल इन्होंमेंसे को
ई एक वस्तुके चोरानेमें चोरानेवाला उस वस्तु·
स्वामीका संबंधीहो अर्थात् एक ग्राम वास आदि

पुष्पेषु हरिते धान्ये गुल्मव·
ल्ली नगेषु च अन्येषु परिपू
तेषु दंडः स्यात्पंच कृष्णलः ३·
परिपूतेषु धान्येषु शाकमूल
फलेषु च निरन्वये शतंदंडः
सान्वयेर्द्ध शतन्दमः ३३१ स्या
त्साहसं त्वन्वयवत् प्रसभं·
कर्म यत्कृतम् निरन्वयं भवे
त्स्तेयं हृत्वापव्ययते च यत्·
३३२ ॥

संबंध सहितहो तो पचास पण दंड देवे और संबं
ध रहितहो तो सौ पण दंड देवे ३३१ द्रव्यस्वामी
के देखतसंते बलसे द्रव्यका हरणकरै फेर ए
कांत संते कहै कि हमने नही हरणकिया सो·
भी चोर कहाताहै ३३२ ॥

जो मनुष्य और द्रव्यको चोरावे अथवा अग्निहो-
त्रके शालासे अग्निहोत्रकी अग्निको और गृहाग्नि
अर्थात् बलि वैश्वदेव कर्मके लिये अन्नपक्व जि-
स अग्निमें होताहै को चोरावे सो प्रथम साहस दंड
पावे और फेर अग्नि स्थापनकर्के लिये जो द्रव्य अ-
र्थात् खर्च हो सो अग्नि स्वामीको देवे ॥३३३॥ जिस

यस्त्वेतान्युपक्लृप्तानि द्रव्याणि
स्तेनयेन्नरः तमाद्यं दंडयेद्राजा
यश्चाग्निं चोरयेद्गृहान् ॥३३३॥
येन येन यथांगेन स्तेनो नृषु
विचेष्टते तत्तदेव हरेत्तस्य प्र-
त्यादेशाय पार्थिवः ॥३३४॥ पिता
चार्यः सुहृन्माता भार्या पुत्रः ।
पुरोहितः नादंड्यो नाम राज्ञो
स्ति यः स्वधर्मेण तिष्ठति ॥३३५॥

जिस अंगमें परद्रव्यको हरणकरै उस उस अंग
को छेदन करना कि जिसमें फेर ऐसा कर्म न
करै ॥३३४॥ राजाको अदंड्य अर्थात् दंडदेनेयोग्य
नहींहै पिता आचार्य मित्र माता भार्या पुत्र पु-
रोहित ये सभ अपने धर्ममें स्थित नहीं तो दंड
के योग्यहोताहै ॥३३५॥ जिस अपराधमें राजाको
छोडकर और मनुष्य कार्षापण परिमित दं-

डके योग्य होताहै उसअपराधमें राजा सहस्रपण परिमित दंडके योग्य होताहै ३३६ वस्तुके गुण दोषको नहीं जाननेवाले जो शूद्र वैश्य क्षत्रिय ब्राह्मण इन्होंका जिस चोरीमें जो दंडकहाहै उसका

कार्षापणं भवेद्दंडो यत्रान्यः
प्राकृतोजनः तत्र राजा भवेद्दं
ड्यः सहस्रमिति धारणा ३३६
अष्टापाद्यं तु शूद्रस्य स्तेये भव
ति किल्बिषं षोडशैव तु वैश्य
स्य द्वात्रिंशत्क्षत्रियस्यच ३३७
ब्राह्मणस्य चतुःषष्टिः पूर्णं
वापि शतं भवेत् द्विगुणा वा
चतुःषष्टि स्तद्दोषगुणविद्धि
सः ३३८ ॥

आठगुण सोलहगुना बत्तिसगुना चौसठगुण अथवा सौगुना वा एकसौ अठाईसगुना दंडको क्रमसे शूद्र वैश्य क्षत्रिय ब्राह्मण पावै परंतु वस्तुका गुण और दोषको जाननेवाले होतो ३३७ ३३८ ॥

गवेईसे घेरा नही जो वृत्त नही आदि उसका
मूल फल पुष्प और होमके लिये लकडी गौ
ग्रासकेलिये तृण इन सबको हरण करै तो उ
सको दंड न देना और वह अधर्म नही कहाता
है यह मनुजीने कहा ३३९ चोरके पढाके औ
र यज्ञकराके उसके हाथसे धन लेनेकी इच्छा

वानस्पत्यं मूलफलं दार्वग्न्य
र्थं तथैव च तृणं च गोभ्यो ग्रा
सार्थं मस्तेयं मनुरब्रवीत् ३३९
योऽदत्तादायिनो हस्ताल्लिप्से
त ब्राह्मणो धनं याजनाध्यापि
नेनापि यथा स्तेन स्तथैव सः ३४०
द्विजोऽध्वगः क्षीणवृत्ति द्वाविक्षू
द्वे च मूलके आददानः परक्षे
त्रान्न दंडं दातु मर्हति ३४१ ।

करते जो ब्राह्मणहै सो जैसा चोरहै वैसाही व
हहै ३४० ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य ये सब मार्गमें
चले जातेहो और भोजनको उनके पास न हो
तो पराये खेतसे दो ऊख और दो मूलिका को
लेवे तो दंड देनेके योग्य नहीहोते ३४१ दर्पक
रके पराये घोडा आदि जो वंदी नहीहै उनको ।

बांधने वाला और घोड़ा शालमें बंधेहुए घोड़ा॰
आदिको छोड़देनेवाला दास घोड़ा रथ इन्होंका
हरण करने वाला चोरके पापको पातीहै ३४२
इस विधिसे चोरोंका निग्रह करनेवाला राजा इ
सलोकमें यशको और परलोकमें उत्तम सुखको

असन्धितानां सन्धाता सन्धि
तानां च मोक्षकः दासाश्वरथ
हर्ता च प्राप्तः स्याच्चौरकिल्वि
षं ४२ अनेन विधिना राजा
कुर्वाणः स्तेन निग्रहं यशोस्मि
न् प्राप्नुया ल्लोके प्रेत्य चानुत्त
मं सुखं ४३ ऐंद्रं स्थान मभि॰
प्रेप्सु र्यशश्चाक्षयमव्ययम्
नोपेक्षेत क्षणमपि राजा सा॰
हसिकं नरम् ३४४ ॥

पातीहै ३४४ इंद्रके पदपर चढनेकी इच्छा कर
ने वाला विनाश रहित यशका इच्छा करने वा॰
ला राजा क्षण भरभी साहसिक अर्थात् बलसे
कर्मको करनेवाला नरकी उपेक्षा अर्थात् वह
रियायत न करै ३४४ ॥

गाली देनेवाला और चोर दंडसे मारनेवाला इन सभोंसे साहस करने वाला पापीहै ४५ साहसिक मनुष्यके अपराधको जो राजा सहन करताहै सो झट पट नाशको और ९

वाग्दुष्टात्तस्कराच्चैव दंडे नैव च हिंसतः साहसस्य नरः कनो विज्ञेयः पापकृत्तमः ४५ साहसे वर्तमानं तु यो मर्षय ति पार्थिवः स विनाशं व्रज त्याशु विद्वेषं चाधिगच्छति ४६ न मित्र कारणाद्राजा वि पुलाद्वा धनागमात् समुत्सृ जे त्साहसिकान्सर्वभूत भया वहान् ३ ४७ ॥

शत्रुताकोपाताहै ४६ संपूर्ण जीवको भय देनेवाला साहसिक नरको मित्रतासे अथवा बहुत धन पानेसे राजा नछोडे ३ ४७ काल

म॰
स्मृ॰ टी॰
भा॰
३२॰

करके धर्मके नाश समयमें ब्राह्मण क्षत्रिय वै॰
श्य ये तीनों वर्ण शास्त्रको धारणकरें ३४८ आत्मा
यज्ञकी सामग्री स्त्री ब्राह्मण इन्होंकी रक्षामें और
संग्राममें धर्मसे अर्थात् विष आदिसे जो शास्त्र
लिप्त नही उससे नाश करत संते दोषको नही

शस्त्रं द्विजातिभिर्ग्राह्यं धर्मो
यत्रोपरुध्यते द्विजातीनां च
वर्णानां विप्लवे कालकारि॰
ते ३४८ आत्मनश्च परित्राणे
दक्षिणानां च संगरे स्त्री वि
प्राभ्युपपत्तौ च घ्नन्धर्मेण न
दुष्यति ३४९ गुरुंवा बालवृद्धौ
वा ब्राह्मणंवा बहुश्रुतं आ
ततायिन मायांतं हन्यादेवा
विचारयन् ३५० ॥

पाता ३४९ गुरु बालवृद्ध बहुत पढाहुआ ब्राह्मण
ये सभ आततायी अर्थात् आग लगाने वाला वि
षदेने वाला धनलेनेवाला खेत और स्त्री इन्होंका ह
रनकरनेवाला होके आवे तो विचारनकरना इन्हों
को मारना ३५०

आततायी के वधमें मारने वालेको दोष नही हो
ता प्रकाश अथवा अप्रकाश जो मारने वालेकी
क्रोधसी मारे गए उसकी प्रकाश अप्रकाश क्रोध
को क्रमसे पातीहै ३५१ परस्त्रीके व्यभिचारमें प्र
वृत्त मनुष्योंको उद्वेग करन हार दंडसे चिह्नक
रके देससे निकालदेवे ३५२ लोकमें इसीकरके

नाततायि वधे दोषो हंतुर्भव
ति कश्चन प्रकाशं वा प्रका
शं वा मन्युस्तंमन्यु मृच्छति ५१
परदाराभिमर्शेषु प्रवृत्तान्नॄ
महीपतिः उद्वेजनकरैर्दंडै
श्छिन्हयित्वा प्रवासयेत् ५२
तत्समुत्थो हि लोकस्य जाय
ते वर्णसंकरः येन मूल ह
रो धर्मः सर्वनाशाय कल्पते
३५३ ॥

वर्णसंकरहोता है जिससे जगत
का नाशहोताहै अर्थात् शुद्ध स्त्रीसे उत्पन्न पुरु
ष यागकरै तो उस यागमें अग्निमें जो आहुति
पडतीहै सो सूर्यके पास जातीहै और वह आ
हुतिपाके सूर्यवृष्टि करतेहैं उससे जगतका
भला होताहै जब वर्णसंकरभया तब मूलका

हरण करनेवाला अधर्म उससे शूद्रस्त्रीसे उत्पन्न को
ई पुरुष मिलेगा नहीं तब जगत्का नाश होजाय
गा ३५४ एकान्तमें परस्त्रीसे जो संभाषण करताहै
और पहिलेसे उसका दोष जाना गयाहै उसको पूर्व
साहस दंडदेना जिसका दोष पहिलेसे जाना नहीं
गयाहै और कोई कारणसे एकांतमें परस्त्रीसे सं॰

परस्यपत्न्यापुरुषः संभाषां यो
जयन् रहः पूर्वमाक्षारितो दो
षैः प्राप्नुयात्पूर्वसाहसं ३५४
यस्त्वनाक्षारितः पूर्वमभिभा
षेत कारणात् न दोषं प्राप्नुया
त्किंचिन्नहि तस्य व्यतिक्रमः
३५५ परस्त्रियं योभिवदेत्तीर्थे
ऽरण्ये वनेपिवा नदीनां वापि
संभेदे स संग्रहणमाप्नुयात्
३५६ ॥

भाषण करताहै उसको दंड नदेना ३५५ जलमें
पडनेकी मार्ग ग्रामके बाहर तृण लतासे युक्त
जन रहितस्थल वन नदी संगम इन स्थानमें
परस्त्रीसे संभाषण करै तो संग्रहणको पाता॰
है ३५६ ॥

माला गंध अनुलेपन भूषण वस्त्र इन्होंका भेजना
हंसी आलिंगन आदि एक खट्वापर बैठना यह स
भ संग्रहण कहाताहै इस बातको मनु आदि ऋ
षिने कहा ३५७ जो स्त्रीका जघन आदिको छूता
है अथवा पुरुषका वृषण आदिको स्त्रीने छूआ
और पुरुषने क्रोध न किया तो परस्परानुरागसे

उपचारक्रियाकेलिः स्पर्शो भू
षणवाससां सह खट्वासनं चै
व सर्वं संग्रहणं स्मृतम् ५७
स्त्रियं स्पृशेददेशे यः स्पृष्टो
वा मर्षयेत्तया परस्परस्यानुम
ते सर्वं संग्रहणं स्मृतम् ५८
अब्राह्मणः संग्रहणे प्राणान्तं
दंडमर्हति चतुर्णामपि व
र्णानां दाराः रक्ष्यतमाः सदा
३५९ ॥

सभ संग्रहण कहाताहै यह मनु आदिने कहा
३५८ ब्राह्मणको छोडकर और वर्णको संग्रहण
में प्राणांतिक दंड देना क्यों कि चारो वर्णकी स्त्री
अति रक्षाके योग्यहै भिक्षुक भाट दीक्षित अर्था
त् यज्ञके लिये लियाहै दीक्षा जिसने रसोई क
रने वाला आदि ये सभ भिक्षा आदि येसभ अपने

म॰
स्य॰ टी॰
भा॰
३२२

322

कार्यके लिये स्त्रियोंकेसाथ संभाषणकरै इनको निवारण न करना ३६॰ एकवेर मना किया गया कि तुम इसस्त्रीसे न बोलना और फेर वह पुरुष उसस्त्रीसे संभाषण करै तो एक सुवर्ण अर्थात् पुराणश्लोक्त सोरह मासा सोना दंडदेवे ३६१ नट

भिक्षुकाबंदिनश्चैव दीक्षिताः कारवस्तथा संभाषणं सहस्त्रीभिः कुर्युरप्रतिवारिता ३६॰ नसंभाषां परस्त्रीभिः प्रतिषिद्धः समाचरेत् निषिद्धोभाष॰ माणस्तु सुवर्णंदंड महेति ६१ नैष चारण दारेषु विधिर्नात्मोपजीविषु सज्जयंति हितानारी निगूढाश्चारयंति च ६२

गवेया आदिके स्त्री और स्त्रीके व्यभिचारहीसे जो जीविका करतेहैं उनकी स्त्रियोंमें पूर्व कथित॰ विधिनहीहै क्यों कि वह सभ आप छिपे हुए अप॰ नी स्त्रियोंको सर्वत्र भजतेहैं ३६२ ॥

परंतु यो भी सभ परस्त्री है इसलिये इन्होंके साथ संभाषणसे थोड़ा दंड संभाषण करने वाला पा॰ वै दासी और एक गृहमें जिस स्त्रीको रोकके र॰ क्खाहै वह और संन्यासिनी इन्होंके साथ संभाष ण करनेवाला थोड़ा दंडको पावै ६३ इच्छाको नही करते जो अपने समान जातिवाली कन्या उसको जो गमन करताहै उसकी उसी क्षणमें लिंग छेद

किंचिदेव तु दाप्यः स्यात्संभा॰
षणंताभि राचरन्॥ प्रेष्यासु चैक
भक्तासु रहः प्रव्रजितासुच ॥ ६३
यो कामान्दूषयेत्कन्यां सस॰
द्यो वध मर्हति सकामान्दूषयं
स्तुल्यो न वधं प्राप्नुयान्नरः॥ ध॰
कन्यां भजंती मुत्कृष्टं न किं॰
चिदपि दापयेत्॥ जघन्यं सेव
मानां तु संयता वासयेद्गृहे
॥ ६४ ॥

न आदि वध दंड देना परंतु ब्राह्मण को नही क्योंकि उसको शरीर दंडका निषेध है। और इच्छा करने वाली कन्या अपने समान जाति वाली उसको गमनकरै तो वधको नही पाताहै ६४ अपनी जातिसे ऊंच जातिको भजन करनेवाली कन्या थोड़ा भी दंडको नही पाती और अपने जातिसे नीचजातिको भजन करन वाली कन्या॰

को बांधिके गृहमें स्थापन करना ३६५ इच्छा करनेवाली अथवा न इच्छा करनेवाली जो उत्तम जातिकी स्त्री उसको सेवन करने वाला नीच जाति जो पुरुष सो जातिकी अपेक्षा करके अंगछेदन वध रूप दंडके योग्य होता है इच्छा करनेवाली समान जातिके स्त्रीको उछेदको सेवा करै तो दंडके योग्य नहीं होता परंतु पिता जब मांगे।

उत्तमां सेवमानस्तु जघन्यो व।
ध मर्हति शुल्कं दद्यात्सेवमान
समा मिच्छेत्पिता यदि ६६।
अभिषह्य तु यः कन्यां कुर्या।
द्दर्पेण मानवः तस्याशु कर्त्त्यौ
अंगुल्यौ दंडं चार्हति षट्शतं ६७
सकामां दूषयंस्तुल्यो नांगुलि
छेदमाप्नुयात् द्विःशतं तु दं
मं दाप्यः प्रसंग विनिवृत्तये ६८

तो उसको शुल्क अर्थात् मोलको द्रव्यको देकर विवाह करै ३६६ जो मनुष्य बलात्कार करके समान जाति वाली स्त्रीको अहंकार करके गमन वर्जित योनिमें अंगुली प्रक्षेपमात्र करके दूषित करताहै उस पुरुषको दो अंगुलीका छेदन करना और छः सौ पण दंड देना ३६७ इच्छा करने वाली समान जातिकी स्त्री को एवं कथित री॰

तिसे

हर्षितकरै तो अंगुली छेदको नही पाता परंतु प्रसंग निवृत्तिके लिये दो सौ पण दंड करना १८ जो कन्या कन्याकी योनिमें अंगुली प्रक्षेप करके नाशकरै उसको दो सौ पण दंड देवे और अंगुली प्रक्षेप करने वाली कन्याका पिता दोना शुल्क देवे १९ जो स्त्री कन्याकी योनिमें अंगुली प्रक्षेप करके हर्षित करै उसका मूड मुंडा देना और

कन्यैव कन्यां याकुर्यात्तस्याः स्याद्द्विशतो दमः शुल्कं च द्विगुणं दद्याच्छिफाश्चैवाप्नुयाद्दश। १८ या तु कन्यां प्रकुर्यात्स्त्री सा सद्यो मौंड्यमर्हति अंगुल्योरेव वाच्छेदं खरेणोद्वहनं तथा २० भर्तारं लंघयेद्या तु स्त्री ज्ञातिगुणदर्पिता तां श्वभिः खादयेद्राजा संस्थाने बहुसंस्थिते २१

दो अंगुलीका छेदन करना गदहा पर चढ़ाके राजमार्ग अर्थात् सड़कमें गमन कराना अपराधानुसारसे दंड विकल्पको जानना २० जाति और गुण इसके गर्वसे भर्ताके लंघन करने वाली स्त्रीको राजा बहुत मनुष्यके समीपमें कुत्तासे भोजन करावे २१ पूर्वकथित परस्त्री गमन करने वाले पुरुषको तप्त लोह शय्यामें स्थापन करके मारे और काष्ठ रखके आग लगादेवे जिसमे वह पापी

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
३२४

दग्ध होवे ३७२ परस्त्री व्रात्य अर्थात् शास्त्रोक्त
कालमें जिसका यज्ञोपवीत नहीं हुआ की स्त्री
चांडालकी स्त्री इन्होंका गमन करके दुष्ट पुरुष
विना दंडकी पाप हुए एकवर्षके उपरंत फेर ऐ
सी स्त्री का गमन करे तो एकवेर गमन करने
में जो दंड कहाहै उसका दूना दंड देवे ३७३ ब्राह्म

पुमांसं दाहयेत्पापं शयने त॰
प्त आयसे अभ्यादध्युश्च काष्ठा
नि तत्र दह्येत पापकृत् ३७२
संवत्सराभिशस्तस्य दुष्टस्य द्वि
गुणो दमः व्रात्यया सह संवासे
चांडाल्या तावदेव तु ३७३ शूद्रो
गुप्त मगुप्तं वा द्वैजातं वर्णमा
वसन् अगुप्तमंग सर्वस्वैर्गुप्तं
सर्वेण हीयते ३७४ ॥

ण क्षत्रिय वैश्यकी स्त्री पति आदिसे अरक्षित हो
अथवा रक्षित हो उसका गमन करनेवाला शूद्र
का लिंग छेदन सर्व द्रव्य हरण वध दंडकरना
तिसमें अरक्षितामें लिंगछेद सर्वस्व हरण करण
रक्षितामें लिंगछेदन सर्वस्व वध करना ३७४

वैश्यको रक्षित ब्राह्मणी गमनमें एक वर्ष नि-
रोध अर्थात् जेहलखानामें रहनाके अनंतर स-
र्वस्व हरण दंड देना और इसी अपराधमें क्षत्रिय
को सहस्र पण दंड देना गदहाके मूत्रसे मुंड
मुंडा देना ७५ पति आदिसे अरक्षित ब्राह्मणी
का गमन करने वाला वैश्य और क्षत्रिय क्रम
से पंचशत पण सहस्र पण दंड देवै ७६ प-

वैश्यः सर्वस्व दंडः स्या त्संवत्स
र निरोधतः सहस्रं क्षत्रियो
दंड्यो मौंड्यं मूत्रेण चार्हति
७५ ब्राह्मणीं यद्यगुप्तां तु ग-
च्छेतां वैश्य पार्थिवौ वैश्यं
पंचशतं कुर्यात् क्षत्रियं तु
सहस्रिणम् ७६ उभावपि
तु तावेव ब्राह्मण्या गुप्तया
सह विप्लुतौ शूद्रवद्दंड्यौ द-
ग्धव्यौ वा कटाग्निना ७७ ॥

ति आदिसे रक्षित ब्राह्मणीका गमन करने वाला
क्षत्रिय वैश्य शूद्रकी नाईं दंडके योग्य है अर्था
त् सर्वांगोंमें हीन करना अथवा लाल कुससे वे
ष्टन करके वैश्यको दहन करना और शर पत्र
अर्थात् सरहरीसे वेष्टन करके क्षत्रियको दह-
न करना यह दंड गुणवती ब्राह्मणीके गमन
में जानना ७७ पति आदिसे रक्षित ब्राह्मणी-

में बलसे गमन करनेवाला ब्राह्मणको सहस्र
पण दंड देना और उस ब्राह्मणीके इच्छासे गमन
करने वाला ब्राह्मणको पांच सौ दंड देना ३७८
प्राणांतिक दंडके स्थानमें ब्राह्मणको मुंड मुंडा

पना

सहस्रं ब्राह्मणो दंड्यो गुप्तां वि
प्रां बलाद्व्रजन्। शतानि पंच दं
ड्यः स्या दिच्छन्त्या सह संगतः ३७८
मौंड्यं प्राणांतिको दंडो ब्रा
ह्मणस्य विधीयते इतरेषां तु
वर्णानां दंडः प्राणांतिको भ
वेत् ३७९ नजातु ब्राह्मणं ह
न्यात्सर्वपापेष्वपि स्थितं रा
ष्ट्रादेनं बहिः कुर्यात्समग्र
धन मक्षतं ३८० ॥

ना यही दंड है और वर्णोंको प्राणांतिक दंड है ३७९
सर्वपापमें स्थितभी ब्राह्मणहो परंतु उसका वध
कभी न करना धन सहित और शरीर दंड रहित
राज्यसे निकाल देना ३८० ॥

संसारके ब्राह्मणकी वधसे दूसरा बडा अधर्म
कोई नहीहै इसलिये ब्राह्मण वधको मनसे
भी राजा चिंतन नकरै ३८१ पति आदिसे रहित
वैश्याका गमन क्षत्रिय करै अथवा वैसीही
क्षत्रियाका गमन वैश्य करै तो पति आदिसे
अरक्षिता ब्राह्मणीके गमनमें जो दंड कहा।

न ब्राह्मण वधाद्भूयानधर्मो
विद्यते भुवि तस्मादस्य वधंरा
जा मनसापि न चिंतयेत् ३८१
वैश्यश्चेत् क्षत्रियां गुप्तां वैश्यां
वा क्षत्रियो व्रजेत् योब्राह्मण्या
मगुप्तायां तावुभौ दंड मर्हतः
३८२ सहस्रं ब्राह्मणो दंडं न्दाप्यो
गुप्ते तु ते व्रजन् शूद्रायां क्ष
त्रिय विशोः साहस्रो वा भवे

द्दमः ३८३

है सोई दंड दोनोंका देना ३८२ पति आदिसे रक्षि
ता क्षत्रिया और वैश्याका गमन करने वाला ब्रा
ह्मणको सहस्र पण दंड देना और पति आदिसे
रक्षित शूद्राके गमनमें क्षत्रिय वैश्यको सहस्र
पण दंड देना ३८३ पति आदिसे अरक्षित क्षत्रि

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
३२६

326

यामें गमन करनेवाला वैश्यको पांचसो पण दे
डदेना और उसीमें गमन करने वाला क्षत्रियको
गदहाके मूत्रसे शिर मुडाय देना यही दंडहै ८४
पति आदिसे अरक्षिता क्षत्रिया वैश्या शूद्राका ।
गमन करने वाले ब्राह्मणको पांचसो पण दंड

क्षत्रियाया मगुप्ताया वैश्ये पं
चशतं दमः मूत्रेण मौंड्यमिछे
न्न क्षत्रियो दंडमेववा ॥८४ अ
गुप्ते क्षत्रिया वैश्ये शूद्रे ब्राह्म
णो व्रजन् शतानि पंचदंड्यः ।
स्या त्सहस्रं त्वंत्यजस्त्रियं ८५
यस्य स्तेनः पुरेनास्ति नान्यस्त्री
गो न दुष्टवाक् न साहसिक
दंडघ्नौ स राजा शक्रलोकभा
क् ८६ ॥

देना और चांडाल आदिकी स्त्रीमें गमनकरनेवाला
ब्राह्मणको सहस्रपणदंड देना ८५ चोर और परस्त्री
में गमनकरनेवाला दुष्ट वचन बोलने वाला बला
त्कार करके कर्म करने वाला दंड आदिसे मारने
वाला येसभ जिस राजाके राज्यमें नहीहै सो राजा
इंद्रलोकको पाने वालाहै ८६ ॥

अपने राज्यमें इन पांचोका निग्रह करनेवाला राजा राजोंमें साम्राज अर्थात् मंडलेश्वर कर्मका करनेवा लोहै और इसलोकमें यश करनेवालाहै ३८१ अप ने कर्ममे समर्थ और दुष्टतासे रहित ऋत्विक और

एतेषां निग्रहो राज्ञः पंचानां वि षये स्वके साम्राज्य कृत्सजातेषु लोके चैव यशस्करः ३८१ ऋत्विजं यस्त्यजेद्याज्यो याज्यं चर्त्विक् त्यजेद्यदि शक्तं कर्म ण्यदुष्टं च तयोर्दंडः शतं शतं ३८८ न माता न पिता न स्त्री न पु त्रस्त्यागमर्हति त्यजन्नपतितानेतान् राज्ञा दंड्यः शतानि षट् ३८९ ॥

यजमान इन दोनोंमें एकको एक त्यागकरै तो त्याग करने वाले को सौ पण दंड देना ३८८ पातित्यदोषसे रहित माता पिता स्त्री रत्न इन्होंमेंसे कोई एक त्याग करै तो छसौपण दंडदेवे ३८९ ब्राह्मण क्षत्रिय

वैश्येंका गार्हस्थ्य आदि आश्रममें शास्त्रार्थका वि
वादहोवे तो राजा अपने हितकी इच्छा करता स
ते यह शास्त्रार्थहै ऐसा साहस करके न बोले ९०.
ब्राह्मणोंके सहित राजा विवाद करने वालोंका य
था योग्य पूजा करके पहिले शांति कर्मसे उन्हो
के क्रोधको हर करके अपने धर्मको कथन करै ९१

आश्रमेषु द्विजातीनां कार्ये वि
वदतां मिथः न विब्रूयान्नृपो ध
र्मं चिकीर्षं हितमात्मनः ९०.
यथार्हमेता नभ्यर्च्य ब्राह्मणैः
सह पार्थिवः सान्त्वेन प्रशमः
य्यादौ स्वधर्मं प्रतिपादयेत् ९१।
प्रातिवेश्यानुवेश्यौ च कल्या
णे विंशति द्विजे अर्हावभोः
जयन्विप्रो दंड मर्हति माषकं
९२॥

मंगल शांति कर्ममें वीस ब्राह्मणके भोजन करा
ते हुए प्रातिवेश्य अर्थात् अपने गृहके समीप
गृहमें रहनेवाला योग्य ब्राह्मण और अनुवेश्य
अर्थात् अपने गृहसे एक गृह छोडके दूसरे गृहमें
रहने वाला योग्य ब्राह्मण इन दोनोंको भोजन
करावे ब्राह्मण तो एकमासा रुपा दंड देवे ३९२॥

विभव कर्म अर्थात् विवाह आदि उत्सव कर्ममें वे
दपाठी और प्रातिवेश्य अनुवेश्य वेदपाठी इन्होंको
भोजन न करावे तो एक मासा सोना और भोजनका
दूना अन्न दंड देवे ३९३ अंधा बहिरा पंगुल और पू
र्ण सत्तर वर्ष वाला धन धान्यसे वेदपाठियोंका उ
पकार करने वाला इन सभोंसे लीए कोश वाला

श्रोत्रियः श्रोत्रियं साधु भूतिकृ
त्येष्व भोजयेत् तदन्नं द्विगुणं
दाप्यो हिरण्यं चैव माषकं ३९३
अंधो जडः पीडसर्पी सप्तत्या स्थ
विरश्च यः श्रोत्रियेषूपकुर्वंश्च
न दाप्याः केनचित्करम् ३९४
श्रोत्रियं व्याधितार्तौ च बालवृ
द्धावकिंचनं महाकुलीन मा
र्यं च राजा संपूजयेत् सदा ३९५

भी राजा अपने ग्रहण योग्य कर के न लेवे ३९४
वेदपाठी व्याधित दुःखित बाल वृद्ध अकिंचन अ
र्थात् जिसको कुछ नहीं है महाकुलीन उदार
चरित वाला इन सभोंका सर्वकालमें राजा पूज
न करे ३९५ सेमरकी चिकन पीडा पर धीरेसे व

स्त्रको धोवी धोवै ओर दूसरेका वस्त्र दूसरेको
न देवै ओर बहुत दिन तक अपने गृहमें न रक्खे
९६ जोलाह वस्त्र बनानेके लिये दस गंडाभर सू
तलेवै तो ग्यारह गंडाभर वस्त्र देवै इससे कमदे
वै तो बारह पण दंड राजाको देवै ओर स्वामीका

शाल्मली फलके श्लक्ष्णे ने
निज्यान्नेजकः शनैः न च वा
सांसि वासोभि र्निर्हरेन्न च
वासयेत् ९६ तन्तुवायो दश
पलं दद्यादेक पलाधिकं अ
तोन्यथा वर्तमानो दाप्यो द्वा
दश कन्दमम् ९७ शुल्कस्था
नेषु कुशलाः सर्वपण्य वि
चक्षणाः कुर्युरर्घं यथापण्यं
ततो विंशं नृपो हरेत् ३९८

संतोषकरै ९७ शुल्क अर्थात् राजाके ग्रहणयोग्य
भागमें कुशल ओर संपूर्ण वस्तुके बेचनेमें पंडि
त ऐसा पुरुष जिस वस्तुका जो मूल्यस्थापनकरै उ
समें जो लाभहो उसके बीसवें भागको राजा ग्रह
णकरै ९८

राजाके योगपजो वस्तुहै और जिस वस्तुको औरके
पास वेचनेको राजाने मना कियाहै उन्होंको लो
भसे और स्थानमें वेचे तो उसके सर्वधनको राजा
हरणकरे ९९ शुल्क स्थान अर्थात् राजभाग ग्रह

राज्ञः प्रख्यातभाण्डानि प्रतिषि
द्धानि यानि च तानि निर्हरतो
लोभात्सर्वहारं हरेन्नृपः ९९
शुल्कस्थानं परिहरन्नकाले
क्रय विक्रयी मिथ्यावादी च
संख्याने दाप्योऽष्टगुणमत्ययं
४०० आगमं निर्गमं स्थानं त
था वृद्धि क्षया वुभौ विचार्य
सर्व पण्यानां कारयेत् क्रय
विक्रयौ ४०१

ए स्थानको परित्यागको करत संते अकालमें
क्रय विक्रयमें करत संते तोलमें झूठ बोलत स
ते राजभागका आठगुना दंड देवे ४०० सभवस्तुओं
का आनाजाना स्थित तथ वृद्धि इनसभको विचार

म०
स्मृ० टी०
भा०
३१५

329

के क्रय विक्रय करना ४०१ पांच पांच दिन बीते से
ने अथवा पक्ष पक्ष बीते संते सब वस्तुओंके मोल
को स्थापन करै ४०२ रत्तीका तोला सेर पसेरी आ०
दिका और प्रस्थ द्रोण आदि पात्रका न्यूनाधिकको
राजा देखे पुनः परीक्षा छटें छटें महीनोंमें क

पंचरात्रे पंचरात्रे पक्षे पक्षे थवा
गते कुर्वीत चैषां प्रत्यक्ष मर्घ
संस्थापनं नृपः ४०२ तुलामा०
नं प्रतीमानं सर्वं च स्यात्सुल०
क्षितं षट्सु षट्सु च मासेषु
पुनरेव परीक्षयेत् ४०३ पणं०
यानं तरे दाप्यं पौरुषोऽर्द्ध पणं
तरे पादं पशुश्च योषिच्च पादा०
र्द्धं रिक्तकः पुमान् ४०४ ॥

रै और राजा मुद्रासे चिह्नित सब वस्तुको करै ४०३
नौका पर चढ़के उतरनेमें यान अर्थात् सवारीके
पीछे एक पणलेना भार सहित पुरुष पीछे आधा
पण पशु और स्त्री इन्होंके पीछे पणका चतुर्थांश
बोझरहित पुरुष पीछे पणका अष्टमांश लेना ४०४

पूर्णभांडसहित गोणी आदिसे भरी हुई वस्तुको अपेक्षा करके सारासार विचारकरके तरणका कल्पना करना पूर्णभांड जो नहीहै और सामग्री रहित जो पुरुषहै यत्किंचित् अर्थात् थोडा ले॰ ना ४०५ नदीमार्गसे दूर जानेमें नदीका प्रबल

भांडपूर्णानि यानानि तार्यंदा
प्यानुसारतः रिक्तभांडानि य
त्किंचि त्पुमांसश्चापरिच्छदाः ५
दीर्घाध्वनि यथादेशं यथाका
ले तरो भवेत् नदी तीरेषु त
द्विद्या त्समुद्रे नास्ति लक्षणं
४०६ गर्भिणी तु द्विमासादि
स्तथा प्रव्रजितो मुनिः ब्राह्म
णा लिंगिनश्चैव न दाप्यास्ता
रिकं तरे ४०७ ॥

वेग स्थिर जल ग्रीष्म वर्षाकाल आदिका विचार करके नावका भाडा कल्पना करना और समुद्रमें तो वायुके अधीन गमनहै इसलिये पूर्व कथित बातोंका विचार नहीहै किंव जो उचित हो सो लेना ४०६ दोमासके ऊपरकी गर्भवा॰

ली स्त्री संन्यासी वानप्रस्थ ब्राह्मण ब्रह्मचारी इन सभसे तरणका मोल न लेना ४०७ नावमें केवटों के अपराधसे कोई वस्तुका नाश हो तो उसको सभ केवट मिलके अपने अपने अंशसे देवे ४०८ केवटोंके अपराधसे जलमें नष्ट हुई वस्तुका व्यवहार

यन्नावि किंचिद्दाशानां विशी
र्येतापराधतः तद्दाशैरेव दात
व्यं समागम्य स्वतोंऽशतः ४०८
एष नौयायिनामुक्तो व्यवहा
रस्य निर्णयः दाशापराधत
स्तोये दैविके नास्ति निग्रहः
९ वाणिज्यं कारयेद्वैश्यं कुसी
दं कृषिमेव च पशूनां रक्षणं
चैव दास्यं शूद्रं द्विजन्मनः १०

निर्णयको कहा दैविक नाशमें केवटोंका निग्रह नहीं है ४०९ बनियोंका कर्म ब्याज खेती पशु रक्षा इन सभ कर्मको बनियोंसे करावे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्योंकी सेवा शूद्रोंसे करावे ४१० ॥

जीविकासे कष्टको पाए हुए ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य
इन्होंसे करके ब्राह्मण अपने कार्यको करावे हुए
पोषण करै ॥४११॥ कर्म करनेकी इच्छा नहीं करने
वाली जो यज्ञोपवीत आदि संस्कारसे पाए हुए ब्रा
ह्मण क्षत्रिय वैश्य इन्होंसे अपने प्रभाव करके

क्षत्रियं चैव वैश्यं च ब्राह्मणो
वृत्तिकर्शितौ बिभृयादानृशं
स्येन स्वानि कर्माणि कारयन् ॥
दास्यं तु कारयंल्लोभाद्ब्राह्मणः
संस्कृतान् द्विजान् अनिच्छतः
प्राभवत्याद्राज्ञा दंड्यः शतानि
षट् ॥४१२॥ शूद्रं तु कारयेद्दास्यं
क्रीतमक्रीतमेव वा दास्यायैव
हि सृष्टोसौ ब्राह्मणस्य स्वयंभु
वा ॥४१३॥

लोभसे कर्म करानेवाला ब्राह्मण इससे छसौ प
ण दंड राजा लेवै ॥४१२॥ मोल लियाहो अथवा मो
ल नलियाहो जो शूद्र इससे दास्यकर्म करावना
क्यौंकि ब्राह्मणके दास्यकर्मके लिये ब्रह्माने
शूद्रको उत्पन्न कियाहै ॥४१३॥ दास्य कर्मसे दास

म॰
टी स॰
भा॰
३३१

331

को स्वामी त्यागन करै तो दास दास्यकर्मसे छूटता
नही क्योंकि दासकर्म शूद्रके स्वभावसे उत्पन्न है
उसकर्मको कौन छुडाय सकता है ८।४१४ ध्वजाहृ
त अर्थात् संग्राममसे जीतके लाए भक्तदास अर्था
त् भोजनके अर्थ दास्यकर्मका स्वीकार करनेवा
ला गृहज अर्थात् गृहमे दासीसे उत्पन्न क्रीत अर्था
त् मोललिया दत्रिम अर्थात् दानसे मिला पैत्रि॰

नस्वामिना निसृष्टोपि शूद्रो
दास्याद्विमुच्यते निसर्गजं हि॰
तत्तस्य कस्तस्मात्तदपोहति ८।
ध्वजाहृतो भक्तदासो गृहजः
क्रीतदत्रिमौ पैत्रिको दंडदास
श्च सप्तैते दासयोनयः ८।४१५
भार्यापुत्रश्चदासश्च त्रयएवा
धनाःस्मृताः यत्ते समधिगच्छ॰
न्ति यस्यैते तस्य तद्धनं ८।४१६

क पिता पितामह क्रमसे प्राप्त भया दंडदास
अर्थात् दंड आदिको शोधनके अर्थ दास्यभाव
का स्वीकार करनेवाला ये सात दासके योनि॰
है ८।४१५ भार्या पुत्र दास ये तीनो धनसे रहित
है ये सब धनको अर्जन करै तो जिसके ये ती
नो है उसीका धनकै ८।४१६ ॥

दास शूद्रसे धन ग्रहण ब्राह्मण करै इसमें कुछ विचार न करै क्यों कि उसका कुछ स्वत्व नहीं है वह अधन है वह जो धन अर्जन करै उस धनका स्वामी उसका भर्ता है ४१७ वैश्य और शूद्र ये दोनो अपने कर्मसे रहित न होने पावें कदाचित् ये दो

विस्रब्धं ब्राह्मणः शूद्रा द्द्रव्योपा
दान माचरेत् नहि तस्यास्ति
किंचित्स्वं भर्तृ हार्य धनो हि
सः १७ वैश्य शूद्रौ प्रयत्नेन
स्वानि कर्माणि कारयेत् तौ
हि च्युतः स्वकर्मभ्यः क्षोभयेता
मिदं जगत् १८ अहन्यहन्यवेक्षे
त कर्मान्तान्वाहनानि च आय
व्ययौ च नियता वाकरान्को
ष मेवच ४१९ ॥

नों अपने धर्मसे च्युत होवें तो इस जगत को क्षोभित अर्थात् आकुलित करै ४१८ कर्मकी सिद्धि और वाहन आय अर्थात् प्राप्ति व्यय अर्थात् खर्च कोष अर्थात् खजाना आकर अर्थात् खानि इन सभोंको नित्यही देखै ४१९ इस रीतिसे संग्र

म॰
स्मृ॰टी॰
भा॰
३३१

एं व्यवहारोंका समापन करताहुआ राजा से
पूर्ण पापको छोडकर परमगतिको पाताहै
४२ इतिश्री मनुस्मृतिभाषाटीकायां ज्वलक
भट्ट व्याख्यानुसारिण्यां श्रीबाहु देवीदयालसिं
हकारितायां श्रीकंपनी संस्कृत पाठशाली

एवंसर्वानिमान्राजा व्यवहा-
रान्समापयन् व्यपोह्य किल्बि
षं सर्वं प्राप्नोति परमां गतिं ४२
इति मानवे धर्मशास्त्रे भृगुप्रो
क्तायां संहितायां अष्टमोऽध्या
यः ८ ॥ पुरुषस्य स्त्रियाश्चै
व धर्म्ये वर्त्मनि तिष्ठतोः संयो
गे विप्रयोगे च धर्मान्वक्ष्यामि
शाश्वता १ ॥

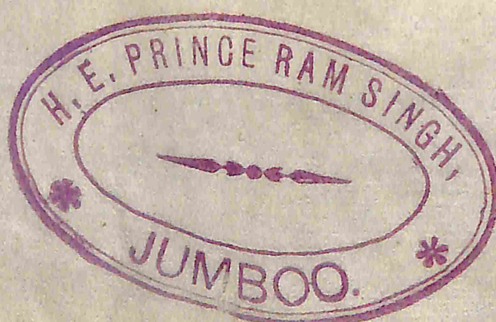
य धर्मशास्त्रि गुलजार शर्म पंडित कृतायामष्ट
मोऽध्यायः ८ ॥ धर्ममार्गमें स्थित जो स्त्री औ
र पुरुष इन दोनोंके संयोग और वियोगमें
नित्यजो धर्म है उसको कहेंगे १ ॥



ॐधर्ममार्गमें स्थितजो स्त्री और पुरुष इनदोनों
के संयोग और वियोग में नित्य जो धर्महैं

ॐपुरुषस्य स्त्रियाश्चैव धर्म्ये
वर्त्मनि तिष्ठतोः संयोगे वि
प्रयोगे च धर्मान्वक्ष्यामि
शाश्वतान् १

उसको कहेंगें ॥ १॥ १ ॥



यह मनुस्मृतीको उलक श्रीमन्महाराजा साहिब रणवीरसिंह बहादुर जी सी एस आइ इंद्र महेंद्र सिपर सलतनत् जंबू काश्मीर व तिब्बतादिपति के पढनेकाहै ॥

मनुस्मृतिः भाषाटीकोपेता (धर्मशास्त्रम्)
मूलकर्त्ता : मनुमहर्षिः
लिपिकः : गुलज़ार पण्डितः
पत्राणि १८८ तः ३३३ = १५६ (सम्पूर्ण

